मलयालम साहित्य का इतिहास

हिन्दी-समिति-ग्रन्थमाला—३४

मलयालम साहित्य का इतिहास

लेखक
डाक्टर के० भास्करन नायर
प्रधान, हिन्दी विभाग
यूनिवर्सिटी कालेज, त्रिवेन्द्रम्

प्रकाशन शाखा, सूचना विभाग
उत्तर प्रदेश

प्रथम संस्करण, १९६०
द्वितीय संस्करण, १९६१

मूल्य ४)

मुद्रक
सम्मेलन मुद्रणालय, प्रयाग

प्रकाशकीय

राष्ट्रभाषा हिन्दी के व्यापक प्रचार और समृद्धि के लिए केवल इतना ही आवश्यक नहीं है कि विविध विषयों की महत्त्वपूर्ण पुस्तकें हिन्दी में प्रकाशित की जायँ, वरन् इस बात की भी आवश्यकता है कि हिन्दी भाषा-भाषियों के मन में अन्यान्य भाषाओं का अध्ययन करने और उनके साहित्य से परिचित होने की रुचि उत्पन्न की जाय। तभी हम अहिन्दी भाषियों से घनिष्ठ सम्पर्क स्थापित कर सकेंगे और उनकी वास्तविक सहानुभूति प्राप्त कर सकेंगे। इस कार्य में सहयोग प्रदान करने के उद्देश्य से उत्तर प्रदेशीय प्रशासन ने हिन्दी-समिति के तत्त्वावधान में तमिल, कन्नड़, बँगला, गुजराती आदि भाषाओं के साहित्य का इतिहास प्रकाशित करने का भी आयोजन किया है। तदनुसार डाक्टर के० भास्करन नायर द्वारा लिखित मलयालम साहित्य के इतिहास सम्बन्धी यह पुस्तक पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत की जा रही है। अन्यान्य देशी भाषाओं के इतिहास भी लिखाये जा रहे हैं और उनके भी यथासम्भव शीघ्र प्रकाशित किये जाने की आशा है।

यह ग्रन्थ हिन्दी-समिति-ग्रन्थमाला का ३४वाँ पुष्प है। इसके लेखक डा० भास्करन नायर हिन्दी के उत्कट प्रेमी हैं। आपने मलयालम और हिन्दी के प्रमुख कृष्णभक्त कवियों का तुलनात्मक अध्ययन कर जो 'थीसिस' लिखी थी, उसी पर लखनऊ विश्वविद्यालय ने आपको डाक्टरेट की उपाधि से विभूषित किया था। उत्तर भारत से हिन्दी में पी-एच० डी० लेने वाले दाक्षिणात्यों में प्रमुख स्थान आपको प्राप्त है। आप इस समय यूनि-वर्सिटी कालेज, त्रिवेन्द्रम् में हिन्दी के प्राध्यापक तथा हिन्दी विभाग के प्रधान हैं। केरल विश्वविद्यालय में हिन्दी को उच्च स्थान दिलाने के प्रयत्न में आपका विशेष हाथ रहा है। परिणाम-स्वरूप उक्त विश्वविद्यालय

के विभिन्न कालेजों में आज नौ-दस हजार छात्र-छात्राएँ हिन्दी के अध्ययन में संलग्न हैं।

डा० नायर ने यथासम्भव सरल और सुबोध भाषा में मलयालम साहित्य की विशेषताओं और प्रवृत्तियों से हिन्दी के पाठकों को परिचित कराने का प्रयत्न किया है। बीच-बीच में आप हिन्दी के प्रसिद्ध कवियों तथा लेखकों से केरली भाषा के साहित्यकारों की तुलना भी करते गये हैं, जिससे लेखक का आशय समझने में आसानी होती है।

हमें यह सूचित करते प्रसन्नता होती है कि हमारी यह पुस्तक उत्तर तथा दक्षिण भारत, दोनों में ही यथेष्ट लोकप्रिय हुई। इसीसे थोड़े समय के भीतर ही हमें इसका दूसरा संस्करण प्रकाशित करना पड़ रहा है। आशा है, हिन्दी के अन्यान्य पाठक भी इसे अपनाकर इससे लाभान्वित होंगे और हिन्दी तथा अहिन्दी भाषा-भाषियों के बीच अधिक घनिष्ठता-पूर्ण संबंध स्थापित करने में सहायक होंगे।

लीलाधर शर्मा 'पर्वतीय'
सचिव, हिन्दी समिति

विषय-सूची

अध्याय	विषय	पृष्ठ
	लेखक का निवेदन	–९–
१	मलयालम का उत्पत्तिकाल	१
२	संस्कृत भाषा का प्रभाव	६
३	गीतों का निर्माण	१०
४	सन्देश काव्य, चम्पू ग्रन्थ तथा कृष्णगाथा	१४
५	चम्पू ग्रन्थ	२१
६	आधुनिक काल	२६
७	पूंतानम् नंपूतिरि	३३
८	कथकलि साहित्य	४०
९	कुंचन नंप्यार	५१
१०	गीतकाव्य	५८
११	गद्यकाल	६४
१२	उत्तरास्वयंवरम् तथा रावणविजयम्	७३
१३	अंग्रेजी शिक्षा का प्रचार	७९
१४	कविवर्य कोयित्तंपुरान	८१
१५	मलयालम पत्र-पत्रिकाएँ	८६
१६	उपन्यास	९१
१७	नाटक	१०६
१८	लघु कथाएँ	११५
१९	आधनिक कविता	१२५

२०	कुमारनाशान	१३३
२१	वल्लत्तोल नारायण मेनोन	१४२
२२	उल्लूर एस० परमेश्वरैयर	१५२
२३	अन्य कवि	१५८
२४	स्वतन्त्रता-आन्दोलन	१६७
२५	विविध विषयों की प्रगति	१७८
२६	अधुनातन काल	२१६
२७	अनुक्रमणिका	२३५

लेखक का निवेदन

हिन्दी समिति, उत्तर प्रदेश सरकार के निर्देशानुसार मलयालम साहित्य का यह संक्षिप्त इतिहास लिखा गया है। श्रीमती रत्नमयी देवी ने भी इसी ढंग पर एक कृति रची थी। उसमें गद्य-शाखा पर अधिक प्रकाश नहीं डाला गया था। इस कृति की यही विशेषता है कि साहित्य की विभिन्न धाराओं का दिग्दर्शन कराते हुए गद्य शाखाओं और उपशाखाओं का सिंहावलोकन करने का प्रयास लेखक ने किया है। प्राचीन कविताओं का परिचय बहुत कम पृष्ठों में दिया गया है। पूर्व-प्रकाशित बातों पर लेखक ने विशेष ध्यान न देना उचित समझा। केरली साहित्य पर बृहत् ग्रन्थ रचे गये हैं, उनका सारांश लिखना कठिन ही है। इसमें केवल प्रतिनिधि कवियों, लेखकों तथा धाराओं पर प्रकाश डाला जा सका है। अतएव जिन महानुभावों की रचनाओं का परिचय छोड़ दिया गया है उनके प्रति लेखक क्षमा-प्रार्थी है।

मलयालम भाषा के साहित्य के इतिहास पर सर्वश्री आर० नारायण पणिक्कर, उल्लूर एस० परमेश्वरैय्यर जैसे महानुभावों और 'साहित्य-प्रसार संघ' ने बृहत् ग्रन्थ रचकर प्रकाशित किये हैं। इसके अतिरिक्त दूसरे कई सज्जनों ने केरली का परिचय संक्षेप में लोगों को दिया है। हाल में ही केन्द्रीय साहित्य अकादमी के निर्देश के अनुसार श्री पी० के० परमेश्वरन नायर ने केरली का इतिहास लिखा है। श्री ए० कृष्णपिल्ला ने मलयालम साहित्य का इतिहास रोचक कहानी के रूप में लिखकर लोगों को समझाया है। उन्हें अपने काम में पूर्ण रूप से सफलता मिली है।

इस ग्रन्थ के निर्माण में प्रस्तुत ग्रन्थकारों की रचनाओं से सामग्री ली गयी है। अतः लेखक इनके प्रति सर्वदा आभारी रहेगा।

—के० भास्करन नायर

पहला अध्याय

मलयालम का उत्पत्ति-काल

दक्षिण भारत के सुदूरवर्ती दक्षिण पश्चिमी प्रदेश में स्थित केरल प्रान्त ने संसार के पढ़े-लिखे लोगों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लिया है। यह प्रान्त प्रकृति देवी की मनोहर क्रीडास्थली है। यहाँ के सरोवर, झील, मन्दिर आदि देखकर दर्शकगण आश्चर्यान्वित होते हुए महती प्रसन्नता का अनुभव करते हैं। कहा जाता है कि यह देश बहुत पुराना है और आर्य लोगों के आगमन से पहले ही यहाँ के निवासी सुशिक्षित तथा सभ्य होते थे। आजकल साक्षरता में केरल का स्थान सर्वप्रथम माना जाता है। स्त्री-शिक्षा में दूसरे राज्यों की अपेक्षा यह राज्य बहुत आगे बढ़ गया है। व्यापार के विषय में इसका चीन, अरब, यूनान, मिस्र, बाबिलोन आदि विदेशी राज्यों से सम्पर्क रहता आया है। इस देश की काली मिर्च, टीक्क[1], चन्दन, मोरपंख आदि चीज़ें विदेशी लोग बड़े चाव से खरीदते थे और उपयोग में लाते थे। आज भी वे इनका प्रयोग करते हैं।

केरल राज्य की आबादी करीब डेढ़ करोड़ है। इस देश की मातृ-भाषा मलयालम है। मलयालम केरली नाम से भी सुख्यात है। संसार के भाषाकुलों में द्रविड़कुल की भाषाओं के बीच केरली का स्थान महत्त्वपूर्ण है। विड़कुल की भाषाओं में मलयालम के अतिरिक्त तमिल, कन्नड़ और तेलुगु भाषाएँ भी हैं। इनमें प्राचीन काल से ही तमिल और मलयालम

[1] Teak, **एक मजबूत लकड़ी**

भाषाओं का अत्यन्त निकट सम्पर्क रहा है। अतः कुछ विद्वानों की राय है कि मलयालम तमिल भाषा की केवल एक शाखा मात्र है। किन्तु भाषा-शास्त्रज्ञों का मत है कि इन दोनों भाषाओं की सत्ता अलग-अलग है। फिर भी अधिकांश विद्वान् एकमत से उद्घोषित करते हैं कि इन भाषाओं का कुल एक ही है।

मलयालम लिपि

विभिन्न भारतीय भाषाओं की लिपियों की अपेक्षा मलयालम लिपि

स्वर-वर्ण

अ അ	आ ആ	इ ഇ
ई ഈ	उ ഉ	ऊ ഊ
ऋ ഋ	ए എ	ऐ ഐ
ओ ഒ	ओ ഓ	अं അം
	अः അഃ	

अतिरिक्त स्वर

ഏ ഓ

ए(ea) ओओ(oo)

की यही विशेषता है कि चाहे कैसा ही टेढ़े-मेढ़े उच्चारणवाला शब्द हो,

इसमें स्पष्ट रूप से लिखा जा सकता है। देवनागरी लिपि में द्रविड़ भाषाओं के सभी शब्द उचित रूप से लिखे नहीं जा सकते। देवनागरी लिपि से मलयालम लिपि का अन्तर समझने के लिए दोनों लिपियाँ यहाँ दी गयी हैं।

व्यञ्जन-वर्ण

क	ख	ग	घ	ङ
ക	ഖ	ഗ	ഘ	ങ
च	छ	ज	झ	ञ
ച	ഛ	ജ	ഝ	ഞ
ट	ठ	ड	ढ	ण
ട	ഠ	ഡ	ഢ	ണ
त	थ	द	ध	न
ത	ഥ	ദ	ധ	ന
प	फ	ब	भ	म
പ	ഫ	ബ	ഭ	മ
य	र	ल	व	श
യ	ര	ല	വ	ശ
	ष	स	ह	
	ഷ	സ	ഹ	

सूचना—मलयालम में कुछ अतिरिक्त व्यञ्जन भी

काल-निर्णय

मलयालम साहित्य दो कालों में बाँटा गया है—

प्राचीन काल—लगभग दसवीं सदी से पन्द्रहवीं सदी (सन् १००० से १५०० ई०) तक।

नवीन काल—(क) पन्द्रहवीं सदी से उन्नीसवीं सदी (१५०० से १९०० ई०) तक।

(ख) वर्तमान काल—(१९०० ई० से अब तक)।

मलयालम की प्राचीन कालिक साहित्यिक रचनाओं में प्रधान 'पतट्टिपत्तु', 'पुरनानूर', 'अकनानूर', 'पत्तुपाट्ट', 'चिलप्पतिकारम्', 'मणिमेखला' आदि ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं। पतट्टिपत्तु नामक कृति एक कविता-संग्रह है। अधिकारी विद्वानों की राय है कि इसकी रचना २०० और ३०० ई० के बीच में कई कवियों ने उस समय के 'चेर' वंशीय राजाओं के गुणों तथा उनके क्रिया-कलापों के वर्णन में की है। वे राजा अपनी प्रजा के पालन और उन्नति के लिए प्रख्यात थे। उनमें भी दस राजाओं का गौरव अधिक था। इस पुस्तक की यही विशेषता है कि उस समय के समाज की परिस्थिति, आचार-विचार, रहन-सहन, धार्मिक विश्वास, विनोद, नैतिक अवस्था आदि का पता पाठक को इससे लग जाता है। भाषा सरल तथा मँजी हुई है। प्राचीन काल के केरल की स्थिति जानने की इच्छा रखने वालों के लिए यह कृति अमूल्य है। गीत काव्य के रूप में इसकी रचना हुई है। इसकी सरल कोमल-कान्त-पदावली पढ़कर सहृदय लोग पुलकित हो उठते हैं।

चेन्तमिष् साहित्य

इन पुस्तकों के अतिरिक्त कई भक्त कवियों ने भी सुन्दर रचनाएँ की हैं। 'आडवार' (आलवार) भक्तों की रचना में कुलशेखर आलवार की कृति का स्थान मुख्य कहा जाता है। विद्वानों की राय है कि उपर्युक्त रचनाएँ 'चेन्तमिष् साहित्य' के अन्तर्गत आती हैं। तमिल भाषा का सुसं-

स्कृत रूप "चेन्तमिष्" कहलाता है। कुछ लोग कहते हैं कि "चेन्तमिष्" साहित्य की कृतियाँ मूलतः तमिष्[1] साहित्य की हैं, मलयालम की नहीं हैं। पर केरल के आचार-विचार, रहन-सहन आदि का चित्र और मलयालम भाषा के बहुत-से शब्दों का प्रयोग इनमें हम देख सकते हैं। अतः पण्डितों का कहना है कि इन कृतियों को मलयालम भाषा के आदि साहित्य के अन्तर्गत मानने में कोई असंगति नहीं है।

१. तमिष् और तमिल, दोनों ठीक हैं तथा दोनों का प्रचार केरल में है।—लेखक

दूसरा अध्याय

संस्कृत भाषा का प्रभाव

ईसापूर्व काल में कुछ आर्य ब्राह्मण उत्तर भारत से केरल में आकर बसने लगे। वे स्थानीय लोगों को भगाकर यहाँ अपना साम्राज्य स्थापित करने के उद्देश्य से नहीं आये थे। वे यहाँ आकर यहाँ के निवासियों से मिल-जलकर रहते थे। यहाँ तक कि उन्होंने स्थानीय लोगों के आचार-विचार, रहन-सहन आदि को भी अपना लिया। यह सत्य बात है कि दोनों वर्ग सभ्य तथा सुशिक्षित थे। अतः दोनों में मनमुटाव नहीं हुआ, बल्कि भाईचारे के व्यवहार से दोनों का घनिष्ठ सम्पर्क बढ़ता गया। दोनों की भाषाएँ खूब पनपने लगीं। आगत लोगों की भाषा संस्कृत थी। उस भाषा के शब्दों का प्रयोग केरलनिवासी भी करने लगे। वैसे ही यहाँ की भाषा को आगन्तुकों ने अपनाया। फलतः दक्षिण भारत के विभिन्न प्रदेशों में जो भाषाएँ बोली जाती थीं उनमें और केरल की मिली-जुली भाषा में बड़ा अन्तर पड़ गया। आगन्तुकों ने विवाह आदि करके यहाँ अपना विस्तार बढ़ाया तो इससे भाषा में भी परिवर्तन होने लगा।

नंपूतिरियों की नाट्यपद्धति

उत्तर भारत से आनेवाले लोगों में प्रमुख स्थान 'नंपूतिरि' नामक जाति विशेष ने पाया। वे ब्राह्मण थे। यहाँ के लोगों पर अपना प्रभाव डालने के लिए उन्होंने कई काम किये। उनकी आन्तरिक इच्छा थी, उस समय के लोगों के धार्मिक विश्वास को तोड़ना।

यहाँ उस समय बौद्ध तथा जैन धर्म का बड़ा प्रचलन था। सबसे पहले नंपूतिरि ब्राह्मणों ने स्थानीय लोगों को आकर्षित करने के लिए इस

प्रदेश के मन्दिरों का जीर्णोद्धार कराया। उस समय मन्दिर सभी वर्गों के केन्द्रस्थान बन गये। तब उन्होंने मनोरंजन की कई परिपाटियाँ बनायीं, जिनमें प्रधान था पौराणिक कथाओं को बड़ी तन्मयता से लोगों को सुनाना। संस्कृत भाषा के ग्रन्थों के आधार पर विद्वान् लोग साधारण जनता को कथाएँ सुनाते थे। बीच-बीच में संस्कृत श्लोकों के अर्थ भी सामयिक बातों के उदाहरण देकर बताये जाते थे। इससे ऐसी कथाएँ सुनने में लोग रुचि लेने लगे। इस प्रकार के कार्यक्रम का भार उठानेवाले लोगों को "चाक्यार" कहा जाता था। कुछ काल के बाद चाक्यारों की एक जाति बन गयी। वे लोग संस्कृत पद्यों के अर्थ सामान्य भाषा में कहकर सुनाने लगे तो लोगों का चाव दिन-दूना बढ़ने लगा।

धीरे-धीरे सहृदय नंपूतिरियों ने यह पद्धति निकाली कि संस्कृत नाटकों के अभिनय के आरम्भ में रंगमंच पर एक व्यक्ति को कथा का सार समझाने के लिए भेजना आरम्भ किया। वह व्यक्ति 'विदूषक' नाम से पुकारा गया। विदूषकों ने हास्य-रस-पूर्ण वाक्यों से कथा की महिमा के बारे में बोलते हुए लोगों को अपनी ओर आकर्षित किया। उनकी भाषा मिली-जुली थी। अतः लोग आसानी से संस्कृत के नाटकों का कथा-सार समझ जाते थे। अब नाटक में एक नया परिवर्तन आया। पहले अभिनय के साथ विदूषक के आगमन ने सोने में सुगन्ध का काम किया। इस नाट्य-पद्धति को मलयालम में "कूटियाट्टम" कहते थे।

मणिप्रवाल शैली

विद्वान् तथा रसिक नंपूतिरि लोग संस्कृत तथा देशी भाषाओं की मिली-जुली शैली में कुछ ग्रन्थों का निर्माण करने लगे। आरम्भ में ऐसी बातों के सम्बन्ध में कोई नियम नहीं था कि किस प्रकार के शब्द संस्कृत के शब्दों के साथ मिलाने चाहिए तथा संस्कृत भाषा के प्रत्ययों को कब कहाँ जोड़ना चाहिए, आदि। वे लोग अपनी-अपनी इच्छा के अनुसार दोनों भाषाओं के शब्दों तथा प्रत्ययों का प्रयोग अपने ग्रन्थों में करते थे। धीरे-धीरे उसमें भी

परिवर्तन होने लगा। कवि-समुदाय ने संस्कृत तथा देशी भाषाओं के प्रचलित शब्दों को मिलाकर पहले की अपेक्षा और भी सुन्दर शैली में एक रचना-पद्धति निकाली। वह "मणिप्रवाल" पद्धति कही जाने लगी। जैसे माणिक्य तथा विद्रुम जोड़कर सुन्दर माला बनायी जाती है, वैसे ही संस्कृत शब्द रूपी मणियों के साथ देशी शब्द रूपी प्रवाल जोड़कर मलयालम में "मणिप्रवाल" शैली चलायी गयी।

एक ओर मणिप्रवाल शैली में बहुत-सी सुन्दर तथा सरस रचनाओं का निर्माण हो रहा था, दूसरी ओर संस्कृत भाषा के शुद्ध रूप में भी कई ग्रन्थ रचे जा रहे थे। उत्तर भारतवालों के समान केरल में भी कई प्रतिभा-सम्पन्न कवियों तथा लेखकों ने अनेक संस्कृत ग्रन्थ बनाये हैं। काव्य ग्रन्थों के अतिरिक्त वेदान्त, ज्योतिष, चिकित्सा, वास्तुविद्या आदि विषयों में कई मौलिक पुस्तकें लिखी गयी हैं। आज से कोई चार सौ वर्ष के पहले ही वररुचि नामक एक विद्वान् ने गणित में मौलिक ग्रन्थ रचा था। उनकी महत् कृतियों में "आशौचाष्टकम्" बहुत प्रसिद्ध है। मेषत्तोल अग्निहोत्री और प्रभाकर के मीमांसा ग्रन्थ बड़े गम्भीर माने जाते हैं। सुख्यात आष़्वार[1] भक्त तथा तिरुवितांकूर के राजा द्वारा निर्मित 'मुकुन्दमाला' को पढ़कर भक्त लोग भक्तिरस के प्रवाह में निमग्न होने लगते हैं।

अद्वैतवादी श्रीशङ्कर

केरल देश के संस्कृत साहित्यकारों में अद्वैत सिद्धान्त के आचार्य श्री शंकर का नाम स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य है। उन्होंने भाष्य, मौलिक ग्रन्थ, स्तोत्र, मन्त्र शास्त्र आदि विविध शाखाओं में लगभग बीस ग्रन्थ रचे हैं।

१. आष़्वार और आलवार दोनों ठीक है। 'ष़' ('ष' के नीचे बिन्दी) का उच्चारण करने के लिए जिह्वा मूर्धा को छूने का प्रयास भर करती है, छूती नहीं है।—लेखक

उनके अतिरिक्त दूसरे कई महानुभावों ने श्री शंकरसिद्धान्त पर पुस्तकें लिखी हैं। आसेतु-हिमाचल इन रचनाओं का प्रचार हुआ है। यह बात सर्वविदित है कि केरल प्रान्त का "कालटी" नामक एक गाँव श्री शंकर का जन्मस्थान है। छोटी-सी उम्र में ही वे योगी बन गये थे, अटक से कटक तक और हिमवान् से लेकर कन्याकुमारी तक भ्रमण कर श्री शंकर ने ब्रह्मविद्या का प्रचार देववाणी संस्कृत में किया। कहा जाता है कि उस समय संस्कृत ने सामान्य भाषा का स्थान प्राप्त कर लिया था। श्री शंकर के अतिरिक्त शक्तिभद्रन, वासुदेव, भट्टतिरि, कुलशेखर वर्मा, तोलन, सुकुमार, लक्ष्मीदास आदि कई प्रतिभा-सम्पन्न व्यक्तियों ने संस्कृत भाषा में अनूठी रचनाएँ की हैं। भाषा में उनकी फुटकर कृतियों से मलयालम यानी केरली भी अत्यन्त समृद्ध हो गयी है।

तीसरा अध्याय

गीतों का निर्माण

इसी सिलसिले में केरल के कोने-कोने में सब तरह के लोगों को आकर्षित करनेवाले गीतों का निर्माण हो रहा था। इनमें संस्कृत के शब्दों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में नहीं होता था। भाषा में तमिल के शब्द भी मिले रहते थे। चाहे जो हो, इन गीतों में ग्रामीण जनता के जीवन का आभास पाया जाता है। देवों की पूजा, वीर पुरुषों की जीवनी, विनोद, देश-भक्ति, बेकारी आदि विविध विषयों पर यह रचना हुई है। मलयालम में इसे 'पाट्टु' (गीत) कहते हैं।

गीतों का विषय

इनमें देवी के सम्बन्ध में जो गीत रचे गये हैं उन्हें 'भद्रकालिप्पाट्टु' नाम दिया गया। देवी के अलावा हरिहर स्वामी पर कई गीत लिखे गये थे। उनका नाम है 'शास्ताम् पाट्टु'। शास्ता नाम का अर्थ है हरिहर। केरल प्रान्त में शबरिगिरि नामक पहाड़ पर हरिहर का मन्दिर स्थापित है। वहाँ हरिहर की मूर्ति के दर्शन करने के लिए लाखों भक्त हर साल जाते हैं। इस उत्सव में ये लोग शास्ताम् पाट्टु गाते हैं।

पूरक्कलि पाट्टु—देवियों को प्रसन्न करने के लिए ये गीत लिखे गये हैं। मनोरंजन के रूप में ये रचे गये हैं। कामदेव का पुनर्जन्म, और शम्बर का वध आदि इनके विषय हैं। प्रश्नोत्तर के रूप में इस तरह के गीत पाये जाते हैं।

पाणरप्पाट्टु—पाणर एक जाति विशेष है। इस जाति के लोग कुलीन लोगों के घरों में जाकर गीत गाकर उन्हें मुग्ध करते हैं। साधारणतः

ये बड़े सबेरे निकलकर अच्छे-अच्छे गीत गाते हुए कुलीन लोगों को जगाते हैं। अब इस प्रथा का लोप होता जा रहा है। आषाढ़ महीने में ये लोग गाँवों में जाकर गीत गाते हुए अपनी जीविका चलाते हैं। पौराणिक कथाओं के आधार पर ये गीत रचे गये हैं। कुरवप्पाट्टु, वेलरप्पाट्टु आदि भी इसी श्रेणी के गीत हैं।

मण्णारप्पाट्टु गीतों में दारुक नामक असुर का वध और देवी भद्र-काली के वीरोचित कार्यों का वर्णन है। ये गीत भी 'मण्णान' जाति के लोग गाते हैं। यही इनकी जीविका का साधन है।

लोकगीतों का प्रचलन

इन गीतों के अलावा केरल में कई लोक-गीत भी प्रचलित हैं। उनमें मुख्यतः कृषिप्पाट्टु (खेती के गीत), वळ्ळप्पाट्टु '(नाव के गीत), साँपों की पूजा के गीत आदि हैं। केरल में नागों की आराधना की प्रथा अब भी प्रचलित है। मण्णारशाला और पांपुयेकेक्काट नामक दो स्थान हैं जहाँ नागों की पूजा बड़ी भक्ति से की जाती है। हजारों की संख्या में लोग उन स्थानों पर वर्ष में एक बार एकत्र होकर सर्पों की आराधना करते हैं। बहुत-से हिन्दू लोग अपने घरों में सर्प के मन्दिर बनाकर आराधना करते हैं। आराधना करते समय जो गीत गाये जाते हैं उन्हें 'सर्प्पप्पाट्टु' कहते हैं।

खेल के समय भी लोग गीत गाते हैं। खेलों में प्रधान 'कोलटि' है। कोल शब्द का अर्थ है लाठी। दो या अधिक व्यक्ति लाठियाँ लेकर आपस में लाठियों पर मारते हुए उछलते-कूदते हैं, उसी को 'कोलटिकलि' कहते हैं। उस समय मनोरंजन के लिए पौराणिक कथाओं के आधार पर जो गीत रचकर गाये जाते हैं उन्हें 'कोलटिप्पाट्टु' कहते हैं।

नंपूतिरि समुदाय में एक प्रकार के रोचक खेल का प्रचार था जो 'संघक्कलि' नाम से प्रसिद्ध हुआ। नंपूतिरि लोग एकत्र होकर उसमें गीत गाते थे। देवताओं की स्तुति के रूप में ये गाये जाते थे। इस प्रकार अन्य कई ढंग के गीतों का केरल में प्रचार था।

नवीं सदी ईसवी में केरल के उत्तरी भाग में बहुत-से शूर-वीर लोग उत्पन्न हुए थे। पुरुषों में आरोमल चेकवर, तच्चोलि अतेननम, चन्तु, पालोट्टु कोमन एवं वीर-वनिताओं में उण्णियार्चा मातु आदि की वीर-रस भरी कहानियाँ सुन्दर तथा सरस कविताओं में रचकर उस युग के लोग बड़े चाव से गाते थे।

इन गीतों में उस समय की सामाजिक स्थिति, लोगों के आचार-विचार, विवाह करने का ढंग, शिक्षा-दीक्षा, स्त्री-शिक्षा, शारीरिक व्यायाम, आराधना-पद्धति, विनोद, धार्मिक विश्वास आदि का चित्र सुन्दर ढंग से रोचक शैली में खींचा गया है। जिस प्रकार 'आल्हा' गीत काव्य उत्तर भारत में प्रसिद्ध है, उस प्रकार के गीत उत्तरी केरल में भी बहुत प्रचार पा चुके हैं। इन गीतों के साथ ही मुस्लिम समाज के जीवन को प्रतिबिम्बित करनेवाले कई गीत भी प्रचुर मात्रा में प्रचलित हुए हैं। उन्हें माप्पिलप्पाट्टु कहते हैं। उत्तरी केरल में मुसलमानों को माप्पिला कहकर पुकारते हैं। तिरुवितांकूर राज्य के विभाग में ईसाइयों को भी माप्पिला कहा जाता है। इन मुसलमान लोगों के गीत प्रायः वीर तथा शृंगार रस प्रधान हैं।

उत्तरी केरल के समान केरल के दक्षिण भाग में बहुत-से लोकगीत प्रसिद्ध हैं। इनमें अधिकांश गीत आराध्य देवताओं की कृपा पाने के लिए लिखे गये हैं। ऐसे गीत भी हैं, जिनमें हमें कई शूर-वीर पुरुषों की रोमांचकारी घटनाओं का पता लगता है। इरविक्कुट्टिप्पिला नामक एक देशभक्त तथा राजभक्त के सम्बन्ध में कई गीत रचे गये हैं। कहा जाता है कि इन गीतों के समान और किसी तरह के गीत इतने विख्यात नहीं हुए हैं।

देश के इतिहास को सूचित करनेवाले भी बहुत-से गाने उस समय लिखे गये थे। केरल के मन्दिरों में पूजा-पाठ के समय गीत गाने की प्रथा प्रचलित है। उस समय के उपयुक्त कई गीत रचे गये जिन्हें अब भी लोग प्रेमपूर्वक गाते हैं। किंबहुना, केरली साहित्य में लोकगीतों ने एक महत्वपूर्ण स्थान पा लिया है।

'रामचरित' का स्थान

गीतों के रूप में प्राप्य रचनाओं में 'रामचरित' का स्थान उत्तम है। इस पर तमिल भाषा का बड़ा प्रभाव पड़ा है। वाल्मीकि रामायण को आधार मानकर यह कृति रची गयी है। विस्तृत रूप से अनूठी शैली में युद्ध-काण्ड का कथानक रचने में कवि ने विशेषता दिखायी है। कहते हैं कि तिरुवितांकूर के राजा श्री वीर रामवर्मा इसके रचयिता हैं। रचना-काल बारहवीं सदी है। इस ग्रन्थ पर कई गवेषणात्मक लेख प्रकाशित हो चुके हैं। डा० के० एम० जार्ज की थीसिस का विषय भी यही कृति है।

चौथा अध्याय

संदेश-काव्य, चम्पू ग्रन्थ तथा कृष्णगाथा

पहले लिखा जा चुका है कि 'मणिप्रवाल' शैली में कई ग्रन्थों का निर्माण हुआ था। दसवीं तथा पन्द्रहवीं सदी के बीच इस पद्धति का खूब प्रचलन हुआ। प्रकृति, स्त्री, स्थल की महिमा, उत्सव, ईश्वर, राजा आदि के सम्बन्ध में इस शैली के अनुसार कई पुस्तकें लिखी गयीं। कविगण अपने-अपने मनोभावों के अनुसार पुस्तक रचते थे। व्याकरण-नियमों की वे लोग जब उपेक्षा करने लगे तब एक अज्ञात साहित्यकार ने 'लीलातिलक' नामक एक लक्षण ग्रन्थ रचा। इसमें यह दिखाया गया है कि 'मणिप्रवाल' शैली में लिखी उत्तम रचना किस ढंग की हो, प्रान्तीय और संस्कृत भाषा के शब्दों का मेल कैसे हो। अनुसन्धान करनेवाले लोगों के लिए यह ग्रन्थ सचमुच ही एक रत्न की खान है। इसने उस समय के कवियों पर बड़ा प्रभाव डाला और अंकुश का-सा काम किया। 'मणिप्रवाल' शैली में लिखे गये ग्रन्थों में सन्देश-काव्यों और चम्पू ग्रन्थों का स्थान उन्नत माना जाता है।

उण्णुनीलि-सन्देश

संस्कृत साहित्य के मेघसन्देश (मेघदूत) के समान केरली की एक अनूठी रचना है—उण्णुनीलि-सन्देश। अधिकांश विद्वानों की राय है कि इसका रचना-काल चौदहवीं शताब्दी है।

कथासार—इस कृति का नायक अपनी प्रिया के साथ महल में सो रहा था। स्थान 'कडत्तुरुत्ति' नामक एक कसबा है। आधी रात के समय एक यक्षिणी उस महल में आती है और नायक को लेकर दक्षिण दिशा की

ओर चली जाती है। नायक ने उससे छुटकारा पाने के लिए नरसिंह की प्रार्थना की और मन्त्र जपा। तब लाचार होकर यक्षिणी ने नायक को छोड़ दिया। जहाँ वह छोड़ा गया वहाँ पर एक मन्दिर था। मन्दिर से भक्तों के प्रार्थना-गीत तथा घण्टे की ध्वनि सुनाई पड़ी। तब नायक को मालूम हुआ कि वह स्थान उस देश की राजधानी तिरुवनन्तपुरम् है और वहाँ श्री पद्मनाभ मन्दिर से गीत तथा घण्टे की ध्वनि आदि सुनाई पड़ रहे हैं। ब्राह्म-मुहूर्त्त का समय था। बहुत-से लोग पूजा-पाठ करने के लिए मन्दिर में उपस्थित थे। उनमें कोल्लम राज्य का राजकुमार भी था। वह राजकुमार और नायक दोनों पक्के दोस्त थे। अपने मित्र को देखकर नायक अतीव प्रसन्न हुआ। उसने उससे सारी बातें कह सुनायीं और कुमार से प्रार्थना की कि आप मेरे सन्देश वाहक बनकर मेरी धर्मपत्नी के पास जाने की कृपा करें। सन्देश देकर प्रिया के देश जाने का रास्ता वह बता देता है। रास्ते के नगरों, वहाँ के निवासियों आदि के बारे में सुन्दर तथा रोचक वर्णन इस काव्य ग्रन्थ में दिया गया है।

वर्णित विषयों में तिरुवनन्तपुरम्, कडत्तुरुत्ति, नायिका का विरह और नायक के सन्देश मुख्य हैं। ये सब मंजुल भाषा में सुन्दर ढंग से लिखे गये हैं। प्रकृति-वर्णन में कवि की शक्ति अद्भुत है। सुन्दरियों, झीलों तथा फुलवाड़ियों का चित्र अनूठी शैली में खींचा गया है। सब विद्वान् एक कण्ठ से उद्घोषित करते हैं कि 'उण्णिनीलि सन्देश' मलयालम भाषा की एक अमूल्य सम्पत्ति है।

कोक-सन्देश

इसी के समान 'कोक-सन्देश' भी उत्तम रचना है। इसमें सन्देश-वाहक चक्रवाक पक्षी है। किसने यह काव्य लिखा, इस सम्बन्ध में कोई निर्णय अभी तक नहीं हुआ है। रचनाकाल चौदहवीं सदी है। इसकी भाषा मधुर तथा सरल है।

इनके अलावा चम्पू ग्रन्थों ने मलयालम साहित्य में उन्नत स्थान प्राप्त

कर लिया है। उनमें उण्णियच्चि-चरितम्, उण्णिच्चिरुतेवि-चरितम्, उण्णियाटि-चरितम् आदि प्रधान हैं।

उण्णियच्चि-चरितम्

यह मलयालम साहित्य का सबसे प्रथम चम्पू ग्रन्थ माना जाता है। पण्डितों का मत है कि ई० सन् १३४६ के पहले इसका निर्माण हुआ है।

कथासार—मलबार प्रदेश में कोट्टयम् नामक एक नगर है। वहाँ इस कथानक की नायिका जन्म लेती है। उसका नाम उण्णियच्चि है। जब वह सयानी हुई तो उसका अपूर्व सौन्दर्य देखकर एक गन्धर्व उस पर अनुरक्त हो गया। यही है कथावस्तु। इसमें कई मन्दिरों, वैद्यों तथा ज्योतिष शास्त्र के पण्डितों आदि का वर्णन किया गया है। साथ ही इन पण्डितों की लोकव्यवहार शून्यता की हँसी उड़ाने में भी कवि ने संकोच नहीं दिखाया। पुण्य-तीर्थों की प्रशंसा भी खूब की गयी है। इसका रचयिता कवि कौन है, इसका पता अभी तक नहीं चल सका।

उण्णियच्चिरुतेवि-चरितम्

इसके निर्माता का परिचय भी लोगों को अज्ञात है। नायिका उण्णिच्चि-रुतेवि चोव्वरा नामक गाँव की निवासिनी है। उसका लावण्य देखकर वह देवेन्द्र उस पर मोहित हो गया। (देवेन्द्र) स्वर्ग से उतरकर भूमि पर आ गया। उस रमणी के अपार सौन्दर्य के सम्बन्ध में उसने अपने एक मित्र से पहले ही सुन रखा था। भूमिलोक में आने के पश्चात् उस गाँव की खोज में देवेन्द्र निकलता है। मार्ग में कई बाजार हैं, जिनका वर्णन बड़ी सुन्दरता से किया गया है। आखिर चोव्वरा गाँव में देवेन्द्र पहुँचता है तो देखता है कि बहुत-से ब्राह्मण लोग उस सतीरत्न के दर्शन करने के लिए जा रहे हैं। उनके साथ वह भी अपनी प्रिया को देखने जाता है। कथा-वस्तु इतनी ही है।

उण्णियाटि-चरितम्

तीसरी प्राचीन कृति उण्णियाटि-चरितम् है। इस कृति का कर्त्ता दामोदर चाक्यार है। कथासार यह है कि शरत काल में एक दिन चन्द्र

अपने मित्र के साथ स्वच्छन्द विहार कर रहा था। संयोग से उसने एक सुमधुर गान सुना। उससे वह हठात् आकर्षित हुआ। गान कहाँ से आ रहा है, इसकी खोज में चन्द्र ने अपने दो गन्धर्व मित्रों को भेजा। वे भूमि पर आ गये और कई राज्यों को पार करते हुए उस गाँव में पहुँचे जहाँ एक सुन्दरी रहती थी। जाते समय उनको जो अनुभव हुए उसका वर्णन करते हुए कवि इस ग्रन्थ का आरम्भ करता है। उस समय के केरल देश, महानगरी त्रिशिवपेरूर, वहाँ के बड़े मेले और बहुत-से शहरों आदि का चित्र कवि ने बड़ी तन्मयता से खींचा है। साथ ही साथ नायिका, उसके घर, रूपलावण्य, ब्राह्मण लोग, उनके स्वभाव और मणिप्रवाल शैली में शृंगाररस-प्रधान कविता रचकर जीविका चलानेवाले कवि-समूह का भी वर्णन सुन्दर ढंग से किया गया है। नायिका के रूप वर्णन के बाद उसकी सहेलियों का भी चित्र अनूठी शैली में खींचा गया है।

इन ग्रन्थों के अतिरिक्त कई स्तोत्र ग्रन्थ भी पाये जाते हैं। इनमें श्री-कृष्णस्तव, मतिचूतपंचकम् आदि मुख्य हैं। वैद्यक सम्बन्धी ग्रन्थ भी लिखे गये थे, जैसे कि 'आलत्तूर मणिप्रवालम्'।

निरणम कवि

इसी समय तिरुवितांकूर राज्य के मध्य भाग में तीन प्रतिभाशाली व्यक्तियों ने गान के रूप में उत्तम रचनाएँ करते हुए केरली के कलेवर को खूब सजाया। इन्हें निरणम कवि कहते हैं। निरणम एक गाँव है जो तिरु-वितांकूर राज्य की पम्पा नदी के किनारे बसा है। उक्त कवि माधव प्पणि-क्कर, राम प्पणिक्कर और शंकर प्पणिक्कर हैं। इनमें पहले दो महाशय तीसरे शंकर प्पणिक्कर के मामा थे जो कण्णश कवि के नाम से पुकारे जाते हैं। 'करुणेश' का विकृत रूप है कण्णश। इनका रचनाकाल चौदहवीं और पन्द्रहवीं शताब्दी के बीच माना जाता है। इन तीनों ने पुराण, उपनि-षद् आदि ग्रन्थों का गहरा अध्ययन कर उनका आशय साधारण जनता की भाषा में व्यक्त किया था। यही है इनकी विशेषता।

२

माधव प्पणिक्कर ने भगवद्गीता का सार सुन्दर कविता में समझाया है। कहा जाता है कि गीता का अनुवाद प्रादेशिक भाषा में सबसे पहले इन्होंने किया है। कवि ने स्वतन्त्र रूप से यह पुस्तक रची है। इनकी भक्ति, ज्ञान तथा व्यावहारिक कुशलता का आभास इसमें पाया जाता है। कविता की शैली रोचक और सरल है। किसी भी विस्तृत कृति का संक्षेप लिखने में इनकी प्रतिभा प्रशंसनीय है। गीता के सात सौ श्लोकों का सारांश इन्होंने ३२८ पद्यों में संक्षेप करके लिखा है।

निरणम कवियों में मुख्य स्थान राम प्पणिक्कर को दिया गया है। उन्होंने महाभारत को आधार मानकर 'भारतमाला' सुन्दर भाषा और शैली में लिखी। इसके अलावा प्पणिक्कर ने रामायण, भागवत, शिवरात्रि महिमा, भारत, गुरुगीता, पद्मपुराण, ब्रह्माण्डपुराण आदि के साररूप में पुस्तकें लिखी हैं। इन कृतियों में रामायण का स्थान अधिक महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि वाल्मीकि-रामायण के अनुसार इन्होंने अपनी रामायण लिखी है, तो भी अपनी रुचि के अनुसार घटनाओं को घटाने-बढ़ाने में जरा भी संकोच नहीं किया है। कविता की शैली भी सुन्दर है। गुरु के महत्त्व के बारे में शिवजी पार्वती को उपदेश देते हैं, उसी का संग्रह कवि ने गुरु-गीता में किया है।

इनके अतिरिक्त दूतवाक्य आदि ग्रन्थ गद्य में भी लिखे गये हैं। मलयालम की श्रीवृद्धि करने में निरणम कवियों ने अथक यत्न किया है, जो स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य है।

कृष्णगाथा काव्य

पहले कहा गया है कि मलयालम में कई लोक-गीत लिखे गये थे। उनके रचयिता प्राय: अपढ़ लोग थे। किन्तु पन्द्रहवीं सदी के बड़े-बड़े पण्डितों ने भी उसी शैली में गीत रचे हैं। इनमें कृष्णचरित पर लिखा गया काव्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। वह गान के रूप में है और इसे कृष्णप्पाट्टु अथवा कृष्णगाथा कहते हैं। इस कथन में अत्युक्ति न होगी कि मलयालम साहित्य

के नभोमण्डल में चारों ओर सुखद शीतलता बरसानेवाला चन्द्रमा है 'कृष्ण-गाथा'।

इस अति उत्तम काव्य के रचयिता चेरुश्शेरी नंपूतिरि हैं। वे उदय-वर्मा राजा के दरबारी कवि थे। उदय वर्मा का राज्य मलबार प्रदेश के कोल-त्तुनाट्टु में था। पण्डितों की राय है कि पन्द्रहवीं सदी में चेरुश्शेरी नंपूतिरि ने जन्म लिया और उपर्युक्त राजा के यहाँ रहकर कृष्णगाथा लिखी। भागवत के दशम स्कन्ध के आधार पर यह रचना हुई है। इसकी कोमल-कान्त पदावलियों को पढ़कर आबाल-वृद्ध पाठक आनन्दसागर में डुबकियाँ लगाते हैं और अपने मनो-मुकुर के कलंक को धो लेते हैं। एक बार पढ़ने से पाठकों को यह अनुभव अवश्य होगा कि इसके रचयिता पर सरस्वती पूर्ण रूप से प्रसन्न थीं। उपमा तथा उत्प्रेक्षा के बादशाह हैं ये कवि। सब प्रकार के अलंकारों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में इसमें पाया जाता है। प्रकृति-वर्णन तथा लोगों के स्वभाव-चित्रण में कवि अद्वितीय हैं। वे अपनी रसभरी कविताओं में शृंगार तथा हास्य रस को प्रथम स्थान देते हैं।

कृष्णगाथा में कृष्ण के जन्म से लेकर स्वर्गारोहण तक की ४७ कथाएँ संगृहीत हैं। उनमें रुक्मिणी-स्वयंवर और सुभद्रा की कथा में कवि की प्रतिभा स्पष्ट दिखाई पड़ती है। बाललीला का वर्णन करते समय ऐसा मालूम पड़ता है मानो कवि ने यहाँ सूरदास को भी मात कर दिया हो। प्रकृति पर तथा लोगों पर वंशी बजाने का कैसा प्रभाव पड़ा, इसके सम्बन्ध में कुछ कहना शक्ति के बाहर की चीज़ है।

शृंगाररस-प्रधान कविता रचते समय विप्रलंभ शृंगार के प्रसंगों को चित्रित करने में कवि की शक्ति अमोघ हो उठी है। रासक्रीड़ा का चित्रण भी रोचक शैली में किया गया है। रौद्र और भयानक रस का वर्णन बड़ा सजीव हुआ है। इसी तरह हास्य से भरी कवि की उक्तियाँ भी आकर्षक और मनोरंजक हैं।

सरल तथा देशज शब्दों का प्रयोग करने में कवि की सामर्थ्य अतुल-नीय है। केरल के विद्वान् तथा साधारण लोग एक कण्ठ से उद्घोषित

करते हैं कि कालिदास, सूरदास, तुलसीदास आदि अमर कवियों के समान, मलयालम साहित्य में चेरुश्शेरी नंपूतिरि ने कृष्ण-गाथा रचकर अमर स्थान प्राप्त कर लिया है।

भारतगाथा

कृष्णगाथा के समान 'भारतगाथा' नामक एक काव्य-ग्रन्थ भी पाया गया है। कवित्व की दृष्टि से यह कृष्णगाथा की श्रेणी में नहीं आता। कवि अज्ञातनामा है। 'भागवतम्पाट्टु', 'गुरुदक्षिणाप्पाट्टु', 'सेतुबन्धनम् पाट्टु' आदि रचनाएँ भी प्रचलित हैं। इनके रचयिताओं के सम्बन्ध में विद्वान् लोग अब तक अनभिज्ञ हैं।

पाँचवाँ अध्याय

चंपू ग्रंथ

पहले कहा गया है कि मणिप्रवाल शैली में उण्णियच्चि-चरितम्, उण्णियाटि चरितम् आदि काव्यग्रन्थों का निर्माण हुआ है। इनमें देशीय शब्दों का प्रयोग बड़ी संख्या में किया गया है। साथ ही इनमें सामान्य जनों की रहन-सहन, आचार-विचार आदि का चित्र भी पाया जाता है। ज्यों-ज्यों समय बीतता गया त्यों-त्यों नवीन रचनाएँ होने लगीं। उनमें संस्कृत भाषा के शब्दों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में हुआ। उनमें पौराणिक तथा ऐतिहासिक कथाएँ लिखी गयीं। आम जनता के जीवन में हुई घटनाओं का भी वर्णन हम उनमें पा सकते हैं।

हम देखते हैं कि संस्कृत के चम्पू ग्रन्थों में पौराणिक तथा ऐतिहासिक कथाओं की नकल कर ली गयी है। मलयालम चम्पू ग्रन्थों में ऐतिहासिक घटनाओं के साथ-साथ सामान्य जनों के जीवन की झाँकी भी मिलती है। यही इनकी विशेषता है। केरलीय जनों की हास्यरस-प्रधान उक्तियाँ, उनके मनोभाव आदि का चित्र रसीली तथा सुन्दर भाषा में खींचा गया है। सहृदय लोग यह जानते हैं कि संस्कृत के चम्पू ग्रन्थों की अपेक्षा मलयालम चम्पुओं के अध्ययन से मन और भी अधिक प्रसन्न हो उठेगा। पद्य में जिस प्रकार अलंकारों की प्रचुरता पायी जाती है उसी प्रकार गद्य में भी अलंकार-मिश्रित वाक्यों का प्रयोग मिलता है। कथा का वर्णन भी मनमोहक और रुचिकर है।

मलयालम भाषा का चम्पू-साहित्य अत्यन्त विपुल है। भारत, रामायण आदि के आधार पर इसमें अनेक ग्रन्थ लिखे गये हैं। चम्पू काव्यधारा के

कवियों में पुनम नंपूतिरि का स्थान सबसे उत्कृष्ट माना जाता है। पन्द्रहवीं सदी में उनका जन्म हुआ। मलबार प्रदेश के राजा भानुविक्रम के दरबारी कवि थे पुनम नंपूतिरि। कहा जाता है कि मलयालम में कविता रचने के कारण पुनम नंपूतिरि को दूसरे संस्कृत कवियों के समान पदवी नहीं मिलती थी। लोग उन्हें अर्ध-कवि कहकर पुकारते थे। किन्तु यह सर्वविदित है कि इस समय के प्रकाण्ड पण्डित लोग उनका पाण्डित्य देखकर दंग रह जाते थे। उनकी विद्वत्ता के सामने तथाकथित पण्डित टिक नहीं सकते थे।

रामायण चंपू

पुनम नंपूतिरि के ग्रन्थों में प्रधान रामायण चम्पू है। उसमें रावण का जन्म, राम का अवतार, ताड़का का निधन, अहल्या-मोक्ष आदि से लेकर स्वर्गारोहण तक की कथा सम्पूर्ण रूप में लिखी गयी है। उसमें कवि ने अपनी प्रतिभा के अनुसार कथा को घटाया-बढ़ाया है। वाल्मीकि रामायण ही प्रस्तुत ग्रन्थ का अवलम्ब है। दशरथ को अन्धमुनि के शाप देने की कथा वाल्मीकि महर्षि ने अयोध्याकाण्ड में लिखी है। किन्तु पुनम नंपूतिरि ने वह कथा रामावतार के प्रसंग में लिखी है। इस तरह प्रसंग के अनुसार घटनाओं को चित्रित करने में कवि की योग्यता प्रशंसनीय है। उनकी कविता-शैली भी उच्च कोटि की है। संस्कृत तथा मलयालम के सरल शब्द इसमें इतने मिल गये हैं कि उनमें अस्वाभाविकता का लेश भी नहीं दिखाई पड़ता। सूक्ष्म भावों को चित्रित करने की कवि की शक्ति अमोघ है। हास्यरस-प्रधान अनेक वाक्य इसमें हम पाते हैं। रामायण-चम्पू केरली के कलेवर में साहित्य का शृंगार है।

रावणविजयम्-चम्पू नामक और एक ग्रन्थ है जिसके रचयिता का नाम अज्ञात है। इसमें यमराज आदि लोकपालों के साथ रावण की मुठभेड़ आदि बातों की कथा लिखी गयी है। रुक्मिणीस्वयंवर चम्पू भी एक महती रचना है जिसमें संस्कृत पद्यों का अभाव है, यही इस ग्रन्थ की

विशेषता है। सन्देश-काव्यों की शैली के अनुसार रुक्मिणी अपना सन्देश एक ब्राह्मण के द्वारा श्री कृष्ण के पास भेजने का प्रयत्न करती है। यह अंश मनोरंजक है।

कामदहनम् चपू

कामदहनम् चम्पू कवित्व की दृष्टि से उत्तम माना जाता है। आदि से लेकर अन्त तक इसकी शैली अनूठी है। तरह-तरह की रसभरी युक्तियों से यह रचना प्रमुख स्थान अलंकृत करती है। कवि के सम्बन्ध में विद्वानों की राय भिन्न-भिन्न है। कुछ लोग कहते हैं कि पुनम नंपूतिरि ने इसे रचा है। इन ग्रन्थों के अलावा उमातपस्या, पारिजातहरणम् आदि चम्पू ग्रन्थ चौदहवीं और पन्द्रहवीं सदी में लिखे गये हैं।

अन्य चंपू ग्रंथ

सोलहवीं शताब्दी में कई चम्पू ग्रन्थों का निर्माण हुआ, जिनमें नैषधम्, राजरत्नावलीयम्, कोटियविरहम् मुख्य रचनाएँ मानी जाती हैं। कहते हैं कि उपर्युक्त चम्पुओं को मषंमंगलम नंपूतिरि ने लिखा है। मषंमंगलम नंपूतिरि के घर का नाम बताया जाता है। उस घर में इनके अलावा और दो महान् पण्डितों का जन्म हुआ, जिन्होंने संस्कृत साहित्य में कई ग्रन्थ रचे हैं। इन में से एक कवि का नाम नारायणं नंपूतिरि है। इन्होंने संस्कृत में कई पुस्तकें लिखीं। इनके प्रकाण्ड पाण्डित्य के बारे में कई प्रकार की कथाएँ प्रचलित हैं। राजा नल की कथा इन्होंने अपनी पुस्तक में अनूठी शैली में लिखी है।

मषंमंगलम नंपूतिरि ने अपनी राजरत्नावलीयम् और कोटियविरहम् में पौराणिक कथाओं के अतिरिक्त सामाजिक बातों का वर्णन भी किया है। राजरत्नावलीयम् का नायक उस समय का राजा है। कथावस्तु यह है कि एक गन्धर्व तरुणी से राजा का प्रेम होता है। उसे पाने के लिए उसको कडी यातना झेलनी पडती है और अन्त में उसकी प्राप्ति होती है। इसके

साथ-साथ राजा के गुणों तथा राज्य-कार्य चलाने में उसकी कुशलता आदि का वर्णन भी किया गया है।

मलयालम भाषा को अमर बनाने के लिए चम्पू ग्रन्थों के रचनाकारों की सेवाएँ महत्त्वपूर्ण मानी गयी हैं। उनका उद्भव ऐसे समय में हुआ जब कि अधिकांश प्रतिभा-सम्पन्न कवियों ने संस्कृत-ग्रन्थों का निर्माण किया था। पहले वे संस्कृत को छोड़कर मलयालम में कविता रचने में संकोच करते थे। धीरे-धीरे उनको अनुभव हुआ कि संस्कृत अब पण्डितों की ही भाषा रह गयी है। उसमें रचनाएँ करने से आम जनता को किसी प्रकार का लाभ न होगा। जनता की बोली में पुस्तकें लिखने से ही उसकी सहायता की जा सकती है। इस विचार से उन लोगों ने मिश्रित शैली में चम्पुओं का लिखना आरम्भ किया। केरल प्रदेश के लोगों की रहन-सहन, आचार-विचार आदि का प्रतिबिम्ब इनमें अच्छा पाया जाता है। कुछ समय के बाद उनका लिखना स्वतः रुक गया। चम्पू ग्रन्थों के रचयिताओं में प्रमुख नंपूतिरि समाज के व्यक्ति हैं। उनमें जो हास्य-रस-प्रधान उक्तियाँ प्रचलित थीं, इनको इन ग्रन्थों में हम देख सकते हैं। परवर्ती कवियों की कविताएँ पढ़ते समय हमें यह मालूम होगा कि चम्पू ग्रन्थों का प्रभाव उन पर बहुत गहरा पड़ा है। सचमुच चम्पू-ग्रन्थों की रचनाएँ केरली रूपी विशाल पुष्पवाटिका में सुमनोहारी कुसुमलता-जैसी हैं।

चन्द्रात्सवम्

फुटकर कृतियों में चन्द्रोत्सवम् का स्थान बहुत ऊँचा है। इसके रचयिता का पता अभी तक नहीं लगा है। पाँच खण्डों में यह कृति बाँटी गयी है। लगभग पाँच सौ सत्तर विविध छन्दमय श्लोक इसमें हैं। शृंगारसर प्रधान यह काव्य मलयालम भाषा-योषा का अमूल्य कण्टहार है। इसमें ऐसे बहुत भाव हम देख सकते हैं जिनका प्रकाशन पहले नहीं हुआ। काव्य-कला की दृष्टि से यह सर्वोत्तम कृति समझी जाती है।

कथावस्तु—मरकत पर्वत की चोटी पर एक किन्नरी अपने प्रियतम

के साथ विहार कर रही थी। इसी बीच उसे कहीं से सुमधुर सुगन्ध आती जान पड़ी। किन्नरी ने समझा कि यह किसी पुष्प से आ रही होगी। तुरन्त अपने प्रियतम के पास जाकर उसने बिनती की कि आप वह पुष्प मुझको लाकर देने की कृपा करें जहाँ से यह सुगन्ध आ रही है। प्रिय गन्धर्व उस पुष्प की खोज में निकलता है। चलते-चलते वह केरल प्रदेश के मध्य भाग में स्थित त्रिशिवपेरूर नामक नगरी के समीप चिट्टिलप्पलि नामक गाँव में पहुँचा। वहाँ मेदिनीचन्द्रिका नाम की एक वारांगना चन्द्रोत्सव मनाने की तैयारी में लगी हुई थी। उस उत्सव को मनाने के लिए असंख्य सुगन्धित पुष्प एकत्र किये जा रहे थे। अब गन्धर्व को मालूम हुआ कि यहीं से सुगन्ध आ रही थी। गन्धर्व वहाँ पर छः दिन रहता है और उसके बाद अपनी प्रिया के पास लौटकर सारा समाचार सुनाता है। यही है इस पुस्तक की कथा का सारांश।

इस पुस्तक में उस समय की प्रधान नगरियाँ, केरल की सामाजिक स्थिति, लोगों का स्वभाव, सामाजिक तथा राजनीतिक दशा, नायिका चन्द्रिका का जन्म, उसकी अवस्था, चन्द्रोत्सव मनाने की योजना, उसमें भाग लेने वाले भिन्न-भिन्न स्वभाव के लोग, वेश्याओं का भाग लेना आदि बात सुन्दर शैली में लिखी गयी हैं।

इन रचनाओं के अतिरिक्त बहुत-से ग्रन्थ मलयालम में लिखे गये हैं। किन्तु वे उतने महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। ग्रन्थों के साथ अनेक मुक्तकों का भी निर्माण हुआ है। हिन्दी में जितने मुक्तक हैं उतने ही मुक्तक मलयालम में भी पाये जाते हैं। इनमें से कुछ आश्रयदाताओं की प्रशंसा में लिखे गये हैं। अपनी प्रिया को रिझाने के लिए भी कई सहृदय कवियों ने अनेक मुक्तक रचे हैं। भाषा की दृष्टि से ये सब उत्तम हैं।

छठाँ अध्याय

आधुनिक काल

मलयालम भाषा के आधुनिक काल पर गहरी छाप डालनेवाले व्यक्तियों में से आचार्य तुन्चत्तु एषुत्तच्छन को प्रथम और प्रधान स्थान देना चाहिए। उनके समय सामाजिक अवस्था बहुत बिगड़ी हुई थी। अधिकांश लोग सांसारिक सुख के लिए किसी भी प्रकार का घृणित कार्य करने में संकोच नहीं करते थे। ब्राह्मणों का इतना प्रभाव था कि उनके इशारे पर बड़े-बड़े जमींदार, जागीरदार, राजा-महाराजा सब नाचते थे। उसी समय पुर्तगालियों तथा अरबों का आगमन यहाँ हुआ। वे लोग भी समय के अनुसार एक न एक राजा के पार्श्ववर्ती बनकर उसे युद्ध के लिए उकसाते थे। संक्षेप में कहा जाय तो उस समय सब कहीं अशान्ति तथा उदासी छा गयी थी।

पहले लिखा जा चुका है कि कई पुस्तकें "मणिप्रवाल" पद्धति में तथा चम्पुओं के रूप में भाषा के कविता-साहित्य की श्रीवृद्धि के लिए लिखी गयीं। उनके साथ ही सामान्य जनों के बीच प्रतिभासम्पन्न व्यक्तियों ने लोकगीत भी लिखे, जिनका प्रचार गाँवों और हरिजनों में बड़ी प्रचुरता से हुआ। उनमें कृष्णगाथा को प्रथम स्थान देना चाहिए। उसके अलावा दारिकवधम् पाट्टु, सेतुबन्धनम् पाट्टु आदि रचनाएँ भी बहुत प्रसिद्ध हुईं।

महाकवि एषुतच्छन

इसी समय केरली साहित्य के नभोमण्डल में ऐसे जाज्वल्यमान मार्तण्ड का उदय हुआ जिसकी तेज किरणें अब भी इस मण्डल को चमकाती रहती

हैं। उस महान् विभूति ने अपनी मातृभाषा को समृद्ध बनाने का बीड़ा *उठाया। उनका परिपावन नाम है 'तुन्चत्तु रामानुजन एषुत्तच्छन'।*

केरल तथा मलबार प्रदेश के मध्यवर्ती 'तृक्कण्टियूर' गाँव के 'तुन्चत्तु' नामक घर में इन कविकुल-केसरी का अवतार हुआ। "एषुत्तच्छन" का संकेतार्थ गुरु है, वाच्यार्थ यों है—एषुत्त लेख; अच्छन = पिता, अर्थात् शिक्षा देनेवाला गुरु या पिता। इनके नाम, जन्मस्थान, जन्मकाल आदि के सम्बन्ध में इस समय भी बड़ा वाद-विवाद चल रहा है। किन्तु अधिकांश पण्डितों की राय है कि इनका जन्म ई० सन् १५२६ और १७२६ के बीच में हुआ है। इनके जीवन में जो-जो महत्त्वपूर्ण घटनाएँ हुईं उनसे लोग अपरिचित हैं। ईश्वर की पूजा, ग्रन्थों का निर्माण, मन्दिरों तथा तीर्थ-स्थानों के दर्शन करना आदि इनके दैनिक कार्य थे। सब लोग इसे मानने में एकमत हैं।

अपनी ज्ञानपिपासा को बुझाने के लिए एषुत्तच्छन ने कई साधुओं का सत्संग किया। उनकी महत् कृति 'अध्यात्मरामायण' से इसका पता चलता है कि वे किसी विशिष्टाद्वैताचार्य के शिष्य रह चुके थे। तमिल, तेलुगु, संस्कृत आदि भाषाएँ वे अच्छी तरह जानते थे। कवि गम्भीर प्रकृति के मनुष्य थे, तो भी उनकी कृतियों में हास्य का सुन्दर पुट है। श्रोताओं के हृदय पर उसका बड़ा असर पड़ता है। 'भारत' नामक उनकी पुस्तक के निम्नलिखित अवतरण से इस कथन की पुष्टि होती है :—

"संजय धृतराष्ट्र का सन्देश लेकर धर्मपुत्र के पास जाते हैं। उनको दूर से देखते ही धर्मपुत्र ने सारी बातें जान लीं। धर्मपुत्र ने पूछा—क्यों संजय, दादाजी की क्या आज्ञा है?

संजय ने कहा—महाराज की बड़ी इच्छा है कि पुत्रों के बीच में किसी प्रकार का झगड़ा न हो। तब धर्मपुत्र ने कहा—अपने पिताजी को सुख पहुँचाने का दायित्व मेरे ऊपर है। ऐसा ज्ञात न होने के कारण वे अशान्त हो रहे हैं। यदि हम संन्यास ले लें तो उन्हे सुख होगा; यह बात मैंने जान ली है। राजसूय यज्ञ करने के कारण मैं अग्नि में कूदकर आत्महत्या नहीं

कर सकता। संन्यास ले लेता, पर मेरे अकेले संन्यासी होने से काम नहीं चलेगा। भीम को भी तो वन में जाना होगा, किन्तु पेटुओं का सरदार भीम कैसे संन्यास ले सकता है ?

संजय कहते हैं—पितामह भीष्म, द्रोण जैसे गुरुजनों का वध कर आप कौन-सा सुख पाना चाहते हैं ? इस तुच्छ सांसारिक सुख के लिए भयंकर संग्राम करना क्या अच्छा है ?"

इस प्रश्न का धर्मपुत्र ने जो उत्तर दिया है उससे कवि की गम्भीरता का पता चलता है। उत्तर का सार यह है—'तुमने जो कुछ कहा उसका मर्म मैंने समझ लिया, किन्तु यह याद रखो कि बलवान् भीष्म, द्रोण जैसे लोग रणक्षेत्र में युद्ध करके ही मरेंगे।'

एषुत्तच्छन का दूसरा यह गुण था कि वे पक्के भक्त थे। उनके लिए राम, कृष्ण, शिव, ब्रह्म सब समान थे। अतः उनकी कविता पढ़कर हम यह निर्णय नहीं कर सकते कि वे रामभक्त कवि थे या कृष्णभक्त। मर्यादा-पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र जी की स्तुति वे जिन शब्दों में करते थे, उन्हीं शब्दों में वे श्री कृष्ण की भी स्तुति करते थे। वे अपने को राम और कृष्ण का किंकर समझते थे। शत्रुओं द्वारा राम और कृष्ण को आतंकित दिखाने में कवि को बड़ा संकोच होता था। कालिय नाग कृष्ण को डसने लगता है ;—ऐसा कहने और लिखने में कवि को बड़ा सन्ताप हुआ और क्रोध भी आया, वे लिखते हैं—

"लक्ष्मी देवी अपने कोमल कर-कमलों से बड़े आनन्द के साथ कृष्ण भगवान् के जिन सुन्दर पैरों को धीरे-धीरे दबाती हैं, उन्हीं को दुष्ट कालिय सर्प डस रहा है। किन्तु उससे किसी प्रकार की हानि नहीं हुई, यह देखकर वह नीच फिर नन्दनन्दन के मर्मस्थलों को डसने लगा। (कवि कुपित होकर कहते हैं) नन्द के प्यारे दुलारे पुत्र को कौन इस प्रकार सता सकता है ? बेशक वह दुष्ट ही है। (और अन्त में कवि कहते हैं)—हे प्यारे मेरे भगवान्, आप और कहीं न जाइए। मेरे मनरूपी सरोज में वास कीजिए।"

भक्त कवि तुलसीदास, सूरदास आदि के समान एषुत्तच्छन भी यश या धन की आकांक्षा नहीं रखते थे। कुछ विद्वानों का मत है कि उनका स्वर्गवास ई० सन् १५५६ में हुआ।

उनकी रचनाएँ

एषुत्तच्छन ने कई काव्य रचे हैं। 'अध्यात्मरामायण' और 'भारतम्' ये दोनों ही उनकी सर्वश्रेष्ठ कृतियाँ हैं। सभी विद्वान् एक स्वर से घोषित करते हैं कि उनके लिखे 'रामायणम्' और 'भारतम्' केरली कविता-कामिनी के गले के दो अमूल्य हार हैं। इनके अतिरिक्त श्रीमद्भागवतम्, चिन्तारत्नम्, हरिनामकीर्त्तनम्, ब्रह्माण्डपुराणम्, देवीमाहात्म्यम् आदि पुस्तकें भी एषुत्तच्छन की लिखी मानी जाती हैं। अध्यात्मरामायण तथा उत्तर-रामायण में राम की कथा है। उनकी भारतम् कृति कृष्णभक्ति से ओत-प्रोत है।

भारतम् काव्य

भारतम् एषुत्तच्छन के प्रतिभापूर्ण काव्य का उत्कृष्ट उदाहरण है। यह कृति संस्कृत 'महाभारतम्' का स्वतन्त्र अनुवाद है। डा० अच्युत मेनोन जैसे गवेषकों ने लिखा है कि जिस भक्ति का बीज एषुत्तच्छन ने बोया था, उसका सुगन्धित फूल है 'रामायणम्' और उसका सरस फल है 'भारतम्'। अनुवाद में मूल ग्रन्थ का बहुत-सा भाग यत्र-तत्र छोड़ दिया गया है। उदाहरणार्थ गीता का प्रसंग बहुत ही संक्षेप में देते हुए उन्होंने कहा है—"हे अर्जुन ! तुम दीनता और चपलता छोड़ो, यदि क्षत्रिय होकर अपना कर्त्तव्य छोड़ दोगे तो अन्य राजागण तुम्हारा उपहास करेंगे। अतः हे पार्थ ! भय छोड़कर युद्ध करो, शिथिल मत हो जाओ। तुम जो देखते हो वह मैं हूँ।" इसी प्रकार के दार्शनिक विचार उपनिषदों में पाये जाते हैं।

इसके अतिरिक्त सम्भव और अरण्य पर्व के बहुत अंश छोड़ दिये गये हैं। एषुत्तच्छन की 'भारतम्' कृति में मूलग्रन्थ का आदि पर्व नहीं है। उसके

स्थान पर 'पौलोमम्' और 'आस्तीकम्' नामक दो पर्व हैं जिनमें पुस्तक की भूमिका सम्बन्धी बातें लिखी गयी हैं। पहले पर्व में जनमेजय के सर्प-यज्ञ और सम्भव पर्व से स्वर्गारोहण तक जो घटनाएँ हुईं, उनका संक्षिप्त वर्णन, उत्तंक (उदंक) की कथा और सर्प-यज्ञ करने के लिए जनमेजय को उनका उपदेश आदि प्रसंग दिये गये हैं। शेष पर्व संस्कृत महाभारत के पर्वों के समान ही हैं। केवल अन्तर यह है कि गीता, अनुगीता और कई उपाख्यान छोड़ दिये गये हैं। अरण्य पर्व में नल तथा रामायण की कथाओं का समावेश है। अन्य बहुत-सी कथाएँ भी हैं जिनका यहाँ उल्लेख करना अनावश्यक है। रामायण की सारी प्रमुख घटनाओं का वर्णन बड़े सुन्दर ढंग से किया गया है। उनमें, क्रुद्ध लक्ष्मण का किष्किन्धा-गमन, लक्ष्मण के आने का समाचार सुनकर वानरों का थर-थर काँपना और घबराना, हनुमान जी के उपदेशों के अनुसार लक्ष्मण का स्वागत करने के लिए तारा का यत्न और उसमें उसका सफल होना आदि बातें अत्यन्त रोचक शैली में एषुत्तच्छन ने लिखी हैं।

अध्यात्म रामायण

कवि की दूसरी कृति अध्यात्म रामायण का प्रचार झोपड़ी से लेकर राजमहल तक है। केरल के निवासी इस ग्रन्थ का अध्ययन करके स्वर्ग-सदृश सुख लूटते हैं। उत्तर भारत के आबाल-वृद्ध लोग जिस प्रकार तुलसी कृत रामायण बड़ी भक्ति से पढ़ते हैं, उसी प्रकार यहाँ की जनता एषुत्तच्छन की रामायण रोज़ पढ़कर अपने मनोमुकुर को स्वच्छ बनाती है। यह कवि की प्रतिभा के अनुसार लिखी गयी है। प्रसंगों को ध्यान में रखकर कथा को मूल-ग्रन्थ से घटाने-बढ़ाने में इन्होंने भी संकोच नहीं दिखाया है। इसकी भाषा ललित, कोमल तथा गम्भीर है। सूक्तियों का वर्णन करते समय इन्होंने अच्छी कुशलता दिखायी है। कहते हैं कि इस कवि की कविता-सरणी पर अब तक कोई भी अन्य कवि पैर नहीं रख सका है।

अन्य रचनाएँ

इन ग्रन्थों के अतिरिक्त कवि ने भागवत के प्रथम नौ स्कन्ध, उत्तर रामायणम्, हरिनामकीर्त्तनम्, चिन्तारत्नम् आदि ग्रन्थ भी लिखे हैं।

'हरिनामकीर्त्तनम्' में समस्त उपनिषद् ग्रन्थों का सारांश पाया जाता है। विशेषता यह है कि प्रत्येक पद्य अकारादि क्रम से आरम्भ किया गया है। लाखों भक्त इस पुस्तिका के श्लोक कण्ठस्थ कर शाम के समय गाते हैं। ईश्वर की महिमा का गुणगान करते हुए भक्त मोक्ष की प्रार्थना करते हैं; यही है इसकी कथावस्तु।

'चिन्तारत्नम्' में अद्वैत सिद्धान्त के समस्त तत्त्व निहित हैं। कुछ लोग कहते हैं कि 'हरिनामकीर्त्तनम्', चिन्तारत्नम्' दोनों कृतियाँ एपुत्तच्छन की नहीं हैं। किन्तु अधिकांश पण्डितों की राय है कि ये पुस्तकें एषुत्तच्छन की ही रचना हैं।

कहा जाता है कि एषुत्तच्छन के कई शिष्य थे। उन्होंने भी बहुत-सी रचनाएँ की हैं। उन्होंने अपने गुरुदेव की कविताशैली पर ही पुस्तकें लिखी थीं। उस शैली का नाम है 'किलिप्पाट्टु' अर्थात् शुक-गीत। वे शुक के द्वारा सब कुछ कहलाते थे। इस शैली से रचित ग्रन्थों में मुख्य हैं स्कन्द-पुराण, शिवरात्रिमाहात्म्य, नागानन्दम्, वेतालचरितम्, मार्कण्डपुराणम् आदि।

संक्षेप में यह कहने में जरा भी अत्युक्ति नहीं होगी कि एपुत्तच्छन मलयालम भाषा के जनयिता हैं। उन्होंने सयानी केरली कन्या का ब्याह प्रतापी संस्कृत के साथ किया, जिससे केरली दिन-दूनी रात-चौगुनी उन्नति करने लगी। उनकी पुस्तकों में जिन-जिन शब्दों तथा वाक्यांशों का प्रयोग हुआ है, उनका प्रचलन अब भी जारी है। उनकी मृत्यु को करीब चार सौ वर्ष हुए हैं, तो भी उनकी कविता-शैली को वर्त्तमान काल के कई तरुण तथा अनुभवी कलाकार अपना रहे हैं। वे शब्दों के माया-जाल में नहीं फँसते थे। व्याकरण के कठिन नियमों का प्रयोग करके लोगों की बुद्धि को भ्रम में नहीं डालते थे। बड़ी शान्ति से उन्होंने साहित्य-रूपी साम्राज्य

में इतना बड़ा परिवर्तन कर डाला। आजन्म ईश्वर के ध्यान में लीन रह-कर मन, वचन और काया से अपनी प्यारी मातृभाषा की सेवा करते हुए उन्होंने केरली साहित्य में एक नये युग की सृष्टि की। जब तक भूलोक में केरल तथा केरली कायम रहेगी तब तक 'तुन्चत्तु' रामानुजन एषुत्तच्छन का नाम अमर रहेगा।

सातवाँ अध्याय

पूंतानम् नंपूतिरि

एषुत्तच्छन के समय में ही एक अन्य कवितासरणी में एक भक्त कवि सुन्दर तथा सरस रचनाओं से मलयालम भाषा को परिपुष्ट कर रहे थे। वे उस धारा के प्रतिनिधि माने जाते हैं।

उनका परिपावन नाम पूंतानम् नंपूतिरि है। जिस प्रकार तुलसीदास 'सियाराम मय सब जग जानी। करौं प्रणाम जोर जुग पानी' में विश्वास रखते थे वैसे ही पूंतानम् सारे जगत् को गोपालकृष्णमय जानकर सदैव ईश्वर स्तुति करते थे। उन्होंने भी कृष्ण के पादारविन्दों में काव्य ग्रंथों की पुष्पमाला गूँथकर अर्पित की है।

मलबार प्रदेश के 'वल्लुवनाटु' इलाके के एक गाँव में ई० सन् १५५५ में इनका जन्म हुआ। घर का नाम 'पून्तानम्' था। अतः उन्हें पून्तानम् कहकर लोग पुकारते हैं। नंपूतिरि ब्राह्मणों के कुल में उनके पिता का जन्म हुआ था। उनके गुरु श्री नीलकण्ठ कवि थे जिन्होंने "तैंकलनाथोदयम्" नामक एक उत्तम काव्य की रचना की है। अपने गुरु पर भक्ति प्रकट करते हुए पून्तानम् ने अपनी प्रसिद्ध रचना "श्रीकृष्णकर्णामृतम्" में लिखा है—"श्री नीलकण्ठ गुरु के चरणारविन्द के रजःप्रसाद से श्रीकृष्ण की लीलाओं का वर्णन मैं कर सका।"

पून्तानम् कवि जन्म से ही ईश्वर-भक्त थे; धार्मिक कार्यों में वे बड़ी निष्ठा से मन लगाते थे और सच्चे गृहस्थ की भाँति जीवन बिताते थे। दक्षिण भारत में प्रसिद्ध 'गुरुवायूर' के श्रीकृष्ण मन्दिर में जाकर वे सदा श्रीकृष्ण की पूजा करते थे। भागवत का पारायण

उनका दैनिक कार्य था। उनकी भक्ति देखकर लोग चकित रह जाया करते थे।

कृष्णभक्ति का प्रभाव

इस भक्त कवि के सम्बन्ध में कई कथाएँ केरल में प्रचलित हैं। एक दिन कवि अपनी कविता लेकर अपने पूज्य मित्र 'मेल्पत्तूर नारायण भट्टतिरि' के पास गये। भट्टतिरि उस समय के संस्कृत पण्डितों में सर्वश्रेष्ठ समझे जाते थे। उन्होंने पून्तानम् से आगमन का कारण पूछा तो उन्होंने प्रार्थना की कि मेरी इस तुच्छ कृति को पढ़कर अशुद्धियाँ सुधारने की कृपा करें। भट्टतिरि ने कहा—यह तो भाषा (मलयालम) में लिखी गयी है, और किसी को दिखाओ। भट्टतिरि ने सोचा होगा कि मेरे जैसे भारी पण्डित को मलयालम भाषा की रचना पढ़कर उसे सुधारना शोभा नहीं देगा। खैर, भट्टतिरि का उत्तर सुनकर पून्तानम् बहुत दुःखी हुए और अपने घर लौट आये। अपने इच्छित कार्य में असफल होने के कारण उन्हें रात भर नींद नहीं आयी।

उसी रात भट्टतिरि को वातज रोग से बड़ी पीड़ा हुई। कहा जाता है कि पहले एक बार श्रीकृष्ण की पूजा से ही उन्हें उस रोग से शान्ति मिली थी। अब की बार जब वे असह्य पीड़ा से तड़पने, चिल्लाने लगे तो कातर स्वर से श्रीकृष्ण की प्रार्थना की। आधी रात बीतने पर उन्होंने एक स्वप्न देखा कि श्रीकृष्ण स्वयं दर्शन देकर कह रहे हैं—"तुम मेरे भक्त भाषा-कवि की कविता पढ़कर उसका दुःख जल्द दूर करो। तब तुम्हारी बीमारी दूर हो जायगी।" भट्टतिरि बड़े सबेरे ही पून्तानम् के पास गये। उन्हें देखते ही कवि की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। भट्टातरि ने कविता पढ़ी और मुक्त कण्ठ से उसकी प्रशंसा की। उस दिन से उन दोनों की मित्रता बहुत घनिष्ठ हो गयी।

पून्तानम् की निर्भीकता और सच्ची भक्ति प्रकट करनेवाली कई कथाएँ केरल में प्रचलित हैं। केरल प्रान्त में जितने भक्त हुए उनमें पून्तानम्

अद्वितीय समझे जाते हैं। उन्होंने भक्ति-स्नेह पूरित जो ज्ञान-दीप जलाया वह अब भी जल रहा है। उनकी मृत्यु के बाद हजारों भक्तों ने उनके दिखाये मार्ग पर चलकर श्रीकृष्ण की पूजा की है, कर रहे हैं और आगे भी करेंगे। पून्तानम् का निवास-स्थान गुरुवायूर स्थित श्रीकृष्ण मंदिर के पास है। श्री कृष्ण मंदिर अब कालोचित परिवर्तन पाकर केरल का ही नहीं, सारे भारत का आराधना केंद्र बन गया है। जिसके हृदय में लेश मात्र भी भक्ति है वह गुरुवायूर की श्याम मनोहर मूर्ति के दर्शन कर अपने को धन्य समझता है।

संतानगोपालम्

कवि की कई पुस्तकें प्रसिद्ध हैं, उनमें प्रधान सन्तानगोपालम् पाना, श्रीकृष्ण कर्णामृतम् ज्ञानप्पाना, घनसंघ स्त्रोत्रम्, पार्थ सारथि स्तवम्, आनन्द नृत्तम्, कृष्णलीला आदि हैं। 'सन्तानगोपालम्' एक छोटी-सी रचना है। इसके चार सर्ग या पाद हैं। कथानक यह है कि एक ब्राह्मण के बच्चे जन्म लेते ही मर जाते थे। वह ब्राह्मण श्रीकृष्ण को अपनी करुणा भरी कहानी सुनाता है और इस विपत्ति से बचाने की प्रार्थना करता है। श्रीकृष्ण उसे सांत्वना नहीं देते। उसकी प्रार्थना के समय अर्जुन वहाँ उपस्थित था। वह कहता है—जब तुम्हारी पत्नी फिर गर्भवती होगी तब मुझे सूचना देना। प्रसव के समय बच्चे को मृत्यु के पंजे से छुड़ाने की व्यवस्था मैं करूँगा। यदि सफलता न मिले तो आग में कूदकर आत्महत्या कर लूँगा। यह कठोर प्रतिज्ञा सुनकर ब्राह्मण चला जाता है।

ब्राह्मण की पत्नी गर्भवती हुई। प्रसव-काल समीप आ गया। तब अर्जुन वहाँ आता है और सूति-गृह के चारों ओर एक शरकूट का निर्माण करता है। अचरज की बात है कि इस बार बच्चे के जन्म के समय उसका शरीर भी गायब हो गया। फिर अर्जुन बच्चे की खोज में निकलता है और अपने प्रयत्न में असफल होकर प्रतिज्ञा के अनुसार आग में कूदने को तैयार हो जाता है। उस समय श्रीकृष्ण आकर उसे रोकते हैं और उसे अपने साथ लेकर वैकुण्ठ लोक पहुँचते हैं। वैकुण्ठ यात्रा-वर्णन, कृष्ण और अर्जुन की

विष्णुभगवान से भेंट, उनका संवाद और ब्राह्मण के सारे बच्चों को वैकुण्ठ से लेकर ब्राह्मण को सौंपना आदि प्रसंग बड़ी सुन्दरता से लिखे गये हैं।

कहा जाता है कि विष्णुलोक के सम्बन्ध में लिखने का अवसर आया तो भक्त कवि घबराये। उन्होंने विष्णुलोक देखा नहीं था। वे ध्यान-मग्न हुए। विष्णु ने प्रकट होकर उनको वह लोक दिखाया।

सन्तानगोपाल की कथा कई कवियों ने लिखी है, तथापि पून्तानम् की कृति के समान उत्तम, सरस, कोमल, सरल और सुन्दर रचना दूसरी नहीं है। उसकी प्रवाहपूर्ण भाषा, बोध-गम्य विचार और तन्मयतापूर्ण भक्ति आदि सभी को हठात् आकर्षित करते हैं।

श्रीकृष्णकर्णामृतम्

इसमें भागवत, दशमस्कन्ध के समस्त प्रसंगों का वर्णन है। परन्तु मनमोहन मुरलीधर की बाल-लीलाओं का वर्णन विशेष तल्लीनता से किया गया है। यह ग्रंथ इतना लोकप्रिय है कि इसके अधिकांश पद्य भक्त लोग बड़े सबेरे उठकर श्रद्धा और भक्ति के साथ गाते हैं। मधुर शब्दों में लिखी यह भक्तिरसमयी रचना बहुत सुन्दर है। श्री बिल्वमंगल नामक एक आचार्य ने भी 'श्रीकृष्णकर्णामृतम्' लिखा है जो भक्तिरस की एक उत्तम कृति है। श्रीकृष्ण की बाल-लीला के वर्णन के साथ उसमें रासलीला का भी वर्णन अच्छी तरह किया गया है। लेकिन पून्तानम् ने श्रीकृष्णावतार की सारी लीलाओं का वर्णन कर दिया है। यह उसकी और एक विशेषता है। नाममहिमा के सम्बन्ध में भी उन्होंने अच्छा लिखा है। भाषा सरल और मँजी हुई है। कहीं-कहीं व्याकरण की त्रुटियाँ पण्डितों को आपत्तिजनक अवश्य जान पड़ती हैं, परन्तु भक्तों के लिए तो उनकी कविता मुक्ताफल है।

अन्य रचनाएँ

ज्ञानप्पाना—जैसे एषुत्तच्छन ने 'किळिप्पाट्टु' (शुकगीत) और श्री कुंजन नंय्यार ने 'तुल्लल' शैली निकाली, वैसे ही पून्तानम् ने 'याना' शैली

का आविष्कार किया। इस पद्धति में कई अन्य कवियों ने भी रचनाएँ लिखी हैं। किन्तु पून्तानम् को ही इसमें सबसे अधिक सफलता प्राप्त हुई। मलयालम भाषा में बहुत-से विद्वानों ने असंख्य ज्ञान-ग्रंथों की रचना की है, परन्तु "ज्ञानप्पाना" के समान सरल, सुन्दर गंभीर ज्ञान प्रदायिनी-कृति दूसरी नहीं है। उसमें संसार की अनित्यता, मानव जीवन का उद्देश्य, संसार के प्रति वैराग्य आदि विषयों का निरूपण बड़ी विद्वत्ता और काव्यात्मक ढंग से किया गया है। एक प्रकार से इसमें सम्पूर्ण उपनिषदों का सार संगृहीत है। उसकी लेखन-शैली इतनी सरल और प्रसादात्मक है कि अपढ़ व्यक्ति को भी उसकी भाषा और आशय समझने में कठिनाई नही पड़ती।

घनसंघ—यह एक उत्तम कीर्त्तन-ग्रंथ है। इसमें एक सौ आठ हरि कीर्तन हैं, जो कि लोगों के हृदय में भक्ति पैदा करने का उत्तम साधन हैं। भक्ति-मार्ग पर चलने वालों के लिए ये कीर्तन पाथेय का काम देते हैं।

पार्थ-सारथि स्तव—यह एक खण्ड काव्य है।

आनन्दनृत्तम्—इसकी रचना के सम्बन्ध में एक किंवदन्ती प्रचलित है। एक दिन कवि ने भगवान् कृष्ण के चरणोदक से ही अपने मित्रों को प्रीति-भोज देकर सन्तुष्ट करने का निश्चय किया। समस्त आमंत्रित मित्र पून्तानम् की इस मूर्खता पर हँसने लगे। हँसी उड़ाने के उद्देश्य से सभी निमन्त्रित लोग उपस्थित हुए। कुछ समय बाद वे पूछने लगे; 'पून्तानम्, कृष्ण कहाँ हैं? अभी तक आये नहीं। उनको जल्दी बुलाओ। समय बहुत हो गया है।' इतने में श्रीकृष्ण के पांचजन्य शंख की ध्वनि सुनाई देने लगी। फिर नूपुर-ध्वनि सुनाई पड़ी। मित्रगण अपने चर्म-चक्षुओं से भगवान् के दर्शन करने में असमर्थ थे, किन्तु भक्तशिरोमणि कवि पुन्तानम् श्रीकृष्ण को सिर से पैर तक देख सके और उन्होंने जी भरकर श्रीकृष्ण की स्तुति की। कहा जाता है कि श्रीकृष्ण के उस रूप को प्रत्यक्ष देखकर ही आनन्दनृत्तम् नामक कविता की रचना उन्होंने की। अंत में ब्राह्मण लोग लज्जित होकर अपने-अपने घर चले गये।

कृष्ण-लीला—अकारादि अक्षरों के क्रम से प्रत्येक पंक्ति को आरंभ करते हुए यह रचना की गयी है।

इनके अतिरिक्त इस काल में ईश्वर-स्तुति परक कई गीत लिखे गये हैं। यद्यपि यह सब भक्ति से ओत-प्रोत हैं तो भी कवित्व की दृष्टि से उनका स्थान श्रेष्ठ नहीं माना जाता। तत्वसम्बन्धी कई बातें उनमें पायी जाती हैं। उनके अध्ययन से यह सिद्ध होता है कि उस युग में सामान्य जनता आध्यात्मिक तत्वों को समझने तथा उन्हें प्रयोग में लाने में बड़ी दिलचस्पी लेती थी। भारतवर्ष की सभी भाषाओं के साहित्य की तुलना करते समय यह जान पड़ता है कि सोलहवीं तथा सत्रहवीं शताब्दियों में भारतवर्ष का वातावरण भक्तिमय था। उसी समय प्रत्येक भाषा के कवि-समूह भक्ति की सुर-गंगा में निमग्न होकर पीयूषमयी रचनाएँ करते हुए अपने साहित्य की श्रीवृद्धि में मन, वाणी और काया का सदुपयोग कर रहे थे।

इनके अलावा उस समय बहुत-से लोक-गीत भी लिखे गये थे जिन में सामाजिक जीवन की छाया मिलती है। पहले कहा गया है कि केरल के उत्तर तथा दक्षिण में वीररस-प्रधान कई गीतों का निर्माण हुआ था और उनका प्रचार खूब हुआ। ईसाइयों के बीच एक प्रकार के गीत प्रचलित थे। उनके विवाह के समय वे गीत गाये जाते थे। उनका नाम "मार्गम कळिप्पाट्टु" रखा गया। उनकी कथावस्तु ईसामसीह की जीवनी है। कहा जाता है कि विवाह के समय एक दीप भी जलाया जाता है। उसके चारों ओर बारह मनुष्य बैठकर गाना गाने लगते हैं। दीप को ईसामसीह मानकर गीत का आरंभ करते हैं। फिर हाथ में तलवार, फरसा लेकर युद्ध करने का अभिनय करते हैं। सिर पर मोरपंख की टोपी भी पहनी जाती है। दीप के चारों ओर पैंतरे बदलते हुए गाना गाते हैं। जब तक गीत-समूह पूरा नहीं किया जाता तब तक वे उस स्थान से हटते नहीं। ईसाइयों की उपशाखा सिरियन ईसाइयों ने इसे खूब पसन्द किया था। शेष ईसाइयों की अपेक्षा इनके यहाँ इस गीत-पद्धति का

खूब प्रचार हो रहा था। इसके रचयिता के संबंध में लोगों के मत भिन्न-भिन्न हैं।

ईसा के शिष्य तोम्मश्लीहा पर भी गीत रचे गये जिनका प्रचार बड़े पैमाने में हुआ था। उन गीतों को "रंपानपाट्टु" कहकर पुकारते हैं।

आठवाँ अध्याय

कथकळि साहित्य

मलयालम साहित्य की विविध शाखाओं में कथकळि का स्थान अद्वितीय है। भारतीय भाषाओं में इसके सदृश दूसरी किसी शाखा का पाना बिलकुल असंभव है। इसी शाखा के कारण केरली का नाम द्वीप-द्वीपान्तरों में प्रसिद्ध हो गया है।

'कथकळि' का आशय

कथकळि का आशय यह है कि कथा का अभिनय करके लोगों को समझाना। प्राचीन समय से ही केरल में कथा का अभिनय करके लोगों को समझाने की परिपाटी चली आ रही थी। कहा जाता है कि जब मनुष्य को ईश्वरीय भक्ति का बोध होने लगा तो उसने अपने आराध्य देव को प्रसन्न करने के लिए कई वर्षों का अनुष्ठान आरम्भ किया। केरल के देवी-देवताओं और मृतात्माओं से वरदान पाने के लिए कई भक्त व्रत रखते थे। व्रत-कर्म पूरे होने के दिनों में लोग गाते और उछलते-कूदते थे। उछलते-कूदते समय कोई भक्त अपने व्यक्तित्व को भूलकर असंबद्ध बातें करने लगता था। तब खड़े हुए भक्त समझते कि वे बातें देवों या मृतात्माओं के वचन हैं। तुरन्त उन वचनों को बड़ी भक्ति से सुनते थे और उन वचनों के अनुसार कार्य करने का निर्देश किया जाता था।

कुछ समय बाद केरल के लोग उपर्युक्त रीति के अनुसार देवी काली की पूजा करने लगे। उसी से और कई प्रकार की पूजा-विधियों का प्रचार हुआ। काली-भक्त देवी से वरदान पाने के लिए गीत गाते और नाचते

कूदते थे। फिर काली की कथा का अभिनय करके लोगों में देवी के प्रति भक्ति-भाव पैदा करने के प्रयत्न किये जाते थे। उसमें काली देवी अपने शत्रु दारिक (दारुक) को मार डालती हैं और भक्तों पर आशीर्वादों की वर्षा करती हैं। यह कथा दारुक-वध नाम से भी प्रसिद्ध है।

इसमें पुजारी लोग विविध वेष धारण करके दारुक के वध का अभिनय करते थे। समय-समय पर भय, शोक, क्रोध आदि भिन्न-भिन्न भाव अभिनय करने वालों के चेहरों पर प्रकट होते थे। उनके अतिरिक्त शिव, नारद आदि का अभिनय भी उसके साथ ही होता था। उनकी वेष-भूषा, नृत्य करने की रीति, कथा-पात्रों की बातचीत आदि में यद्यपि असभ्यता का आभास पाया जाता था, तो भी केरल में दृश्य कला की उत्पत्ति वहीं से होती है।

कूत्त और कूटियाट्टम

आर्य लोग जब से केरल में आकर अपनी सभ्यता का विस्तार करने लगे तब से उन्होंने एक प्रकार की दृश्य-कला का सूत्रपात किया। उसके नाम 'कूत्त' और 'कूटियाट्टम' हैं। चाक्यार नामक एक जाति केरल में निवास करती है। दूसरी जातियों की अपेक्षा उसकी संख्या बहुत कम है। वे लोग रंगमंच पर एक विशेष प्रकार का वेष धरकर आते और पौराणिक कथा संस्कृत पद्यों में कहकर लोगों को सुनाते थे। कथा-वर्णन के सिलसिले में सामयिक बातें भी मिलाकर वे कहते थे। उपस्थित सज्जनों को साफ-साफ समझाने के लिए वे लोग हाथ की मुद्राओं का भी सहारा लेते थे।

"कूटियाट्टम" में नट विविध-प्रकार के वेष धारण करके रंगमंच पर आते हैं। संस्कृत नाटकों के आधार पर अभिनय होते हैं। हाथ की मुद्राओं की सहायता से शब्दों का अर्थ वे लोग समझाते हैं और चले जाते हैं। अभिनय करते समय चेहरे पर विविध प्रकार के रसों का प्रटकन बड़ी तन्मयता से होता रहता है।

दसवीं शताब्दी तक 'कूत्त' और' कूटियाट्टम' दोनों का प्रचार केरल में खूब हुआ। जबकि ब्राह्मण लोगों के यहाँ उपयुक्त दृश्य कलाएँ प्रचलित थीं, सामान्य जनता ने 'दारुकवध' का अभिनय अपनाया। केरल के गाँवों के छोटे मन्दिरों में "दारुकवध" का अभिनय होता था। लोग बड़ी श्रद्धा के साथ उसमें भाग लेते थे। बारहवीं शताब्दी तक ऐसी परिपाटी चलती रही थी। उस समय भारत के गगन में बंग-निवासी जयदेव की मनमोहिनी वाणी की सुमधुर ध्वनि गुंजित हो उठी थी। उनकी उत्तम कृति "गीत गोविन्द" की सरल तथा कोमल पदावली ने सबको मुग्ध कर दिया। अभिनय-कला में प्रवीणता प्राप्त करने वाले "चाक्यारों" ने गीतगोविन्द के पद्य कंठस्थ कर लिये और मंदिरों में आराधना करते समय ताल और लय के साथ वे गीत गाये गये।

'अष्टपदी' की प्रसिद्धि

गीतगोविन्द ने "अष्टपदी" नाम से भी प्रसिद्धि पायी थी। श्रीकृष्ण और गोपिकाओं की जो प्रेमकथा प्रचलित थी वही है गीत गोविन्द की कथा-वस्तु। श्लोकों के द्वारा कथा कही जाती थी। नायक और नायिकाओं का संभाषण सुमधुर गीतों द्वारा होता था। "अष्टपदी" का बड़ा प्रचार केरल में हुआ। वर्त्तमान काल में "अष्टपदी' के पद गायक सुकंठ से गाकर लोगों को भक्ति रस की मन्दाकिनी में निमग्न करते रहते हैं। अष्टपदी का गायन जहाँ होता है वहाँ लोग झुंड के झुंड एकत्र हो जाते हैं और गीत सुनकर बड़ी तृप्ति से घरों को जाते हैं।

कृष्णनाट्टम तथा रामनाट्टम

सत्रहवीं सदी के उत्तरार्ध में मलबार प्रदेश की राजधानी कालिक्कट के शासक 'मानवेद' नामक राजा थे। वे सुकवि और सहृदय राजा थे। उन्होंने भागवत दशम स्कन्ध के आधार पर "कृष्ण गीति" नामक काव्य संस्कृत में रचा है। श्रीकृष्ण के जन्म से लेकर स्वर्गारोहण तक की कथा

इसमें लिखी गयी है। इस कथा का अभिनय आठ दिन में पूरा होता था। रंगमंच के पिछले भाग में गायक खड़े होकर इस काव्य के गीत गाते थे। उसके अनुसार नट ताल तथा लय के साथ बड़ी तन्मयता से नृत्त करते थे। विविध रसों का प्रकटन वड़ी कुशलता से होता था, जिसे देखकर दर्शक मंत्रमुग्ध हो जाते थे। इसी कला के अभिनय को "कृष्णनाट्टम" कहते हैं।

धीरे-धीरे कृष्णनाट्टम में बड़े सुधार हुए। कृष्ण की कथा के स्थान पर राम की कथा का अभिनय केरलीय लोगों की मनोवृत्ति के अनुसार गीत-वाद्य आदि के साथ किया गया। "कृष्णनाट्टम" में संस्कृत श्लोक ही गाये जाते थे। किन्तु रामनाट्टम में मणिप्रवाल-शैली में श्लोक और गीत गाते हुए शास्त्रविधि के अनुसार नृत्त होते थे। अधर्म क्या है इन सब बातों का स्पष्टीकरण भी बीच-बीच में होता था। इन कारणों से "कृष्णनाट्टम" की अपेक्षा 'रामनाट्टम' को लोग अधिक पसन्द करने लगे। उसका प्रचार पहले से बढ़कर अधिक हुआ। "रामनाट्टम" के रचयिता एक राज घराने के सदस्य थे जिनका निवासस्थान "कोट्टारक्करा" नामक एक इलाके में है। वे कोट्टारक्करा तंपुरान नाम से प्रख्यात हैं। उनके जीवनकाल के सम्बन्ध में विद्वानों में बहुत मत-भेद है। संक्षेप में कहा जाय तो कथकळि 'रामनाट्टम' का सुधरा हुआ रूप है।

कथकळि में अभिनय करनेवालों को वहुत-सी वातों का ध्यान रखना होता है। पात्र के भाव के अनुसार नट को वेष बदलना पड़ता है। रावण का जो वेष हो, उससे दुर्योधन और दुश्शासन का वेष भिन्न होगा। वस्त्र-धारण की रीति भी अनोखी होती है। पलकों और आँखों को समय-समय पर प्रसंग के अनुसार हिलाने-डुलाने की क्षमता प्राप्त करना बहुत आवश्यक है। शरीर को भी घटाने-बढ़ाने का अभ्यास होना चाहिए। स्त्री-पात्रो को किस प्रकार का वस्त्र पहनना चाहिए, मुनियों का वस्त्रधारण कैसा हो, किस ढंग के बाजे बजाये जायँ आदि कई बातों पर कड़ा नियन्त्रण रखा गया है।

कथकळि और नाटक में भेद

कथकळि और नाटक में प्रधान भेद ये हैं—नाटक रसाश्रयी और कथकळि भाषाश्रयी है। कथकळि विभिन्न रुचिवाले लोगों को मुग्ध करती है तो नाटक पंडितों की मनभावन वस्तु है।

विभिन्न रुचिवाले लोगों को मुग्ध करते समय कभी-कभी ऐसा होता है कि रसभरी घटनाएँ रसाभास के रूप में परिणत हो जाती हैं। नाटक में ऐसा नहीं होता। प्राचीन काल से यह धारणा चली आ रही थी कि रंग-मंच पर वध, युद्ध, भोजन, स्नान, सुरत आदि का अभिनय नहीं करना चाहिए। कथकळि के नट ऐसी बातों की परवाह नहीं करते। ऐसी कथकळि शायद ही होगी, जिसमें वध का अभिनय न हो। निद्रालु दर्शकों को जगाने के प्रसंग कथकळि में लगातार होते ही रहते हैं।

कथकळि के रचयिता का संगीत तथा साहित्य में प्रवीण होना अति-आवश्यक है। इस धारा के ग्रंथ-निर्माताओं में प्रथम स्थान कोट्टारक्करा नंपुरान को देना चाहिए। फिर भी उच्च साहित्य की दृष्टि से देखा जाय तो उनकी कृतियों को उन्नत स्थान नहीं मिला है। संगीत में उनकी कुशलता प्रशंसनीय है। कहा जाता है कि ऐसे बहुत से रागों का ज्ञान उनको था जिनका प्रचार कर्णाटक साहित्य में भी बहुत कम था। भाषा-शुद्धि की ओर भी उन्होंने उतना ध्यान नहीं दिया।

कोट्टयत्तु नंपुरान की प्रतिभा

कोट्टयत्तु नंपुरान (कोट्टयम देश के राजा) ने अपनी प्रतिभा से महा-भारत को आलंब मानकर वकवधम्, कल्याणसौगन्धिकम्, किर्म्मीरवधम्, कालकेयवधम् ये चार कृतियाँ रचकर कथकळि साहित्य को उन्नत स्थान दिलाया। ये ग्रंथ मलयालम साहित्य के जगमगाते हुए उज्ज्वल रत्न हैं। इनकी भाषा सरल, सरस तथा बोधगम्य है। इनके गीत सुनने तथा सुनाने में बहुत सुहावने हैं। संगीत तथा साहित्य, इन दोनों में रचयिता का ज्ञान

अपार है। अधिकांश पण्डितों का मत है कि सोलहवीं सदी के उत्तरार्ध में उक्त कविसत्तम का जन्म हुआ है। बचपन में उनकी बुद्धि तेज नहीं थी। इस सम्बन्ध में बहुत-सी किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं। अस्तु, उन्होंने सतत-प्रयत्न से शिक्षा प्राप्त की और बड़े ज्ञानी हुए। संस्कृत भाषा पर उनका अच्छा अधिकार था। कहते हैं कि कथकळि में संस्कृत श्लोकों के प्रयोग का इनके समय से ही श्री गणेश हुआ था। पुस्तकों में उनकी प्रधान रचना कालकेयवध है। इसकी शैली अनूठी है।

प्रसंग के अनुसार मूलकथा के परिवर्तन द्वारा दर्शकों को मुग्ध करने की उनकी कला-कुशलता गजब की थी। भावों को प्रकट करने के लिए चुने हुए शब्दों का प्रयोग किया गया है। संभापण के अवसर पर सुन्दर तथा सरल शब्दों का प्रयोग सोने में सुगन्ध का काम करता है। अप्रिय लगनेवाले शब्दों का नामोनिशान नहीं मिलता। उनकी कृतियाँ अनुपम तथा प्रौढ़ हैं। विष्णु माया की स्तुति करते हुए कई मुक्तक उन्होंने लिखे हैं जो उनकी कीर्ति पर चार चाँद लगाते हैं।

सत्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में जिस कथकळि साहित्य का बीज कोट्टारक्करा के राजा ने बोया था वह धीरे-धीरे अंकुरित होने लगा। कोट्टयम के राजा ने उसे सींचकर पाला-पोसा। वह हरा-भरा होकर चारों ओर अपनी विशाल शाखाएँ फैलाने लगा। किन्तु उसके फैलने में कुछ देर हुई। अठारहवीं सदी में वह विशाल बट वृक्ष के समान विकसित होने लगा। उस समय बहुत-से लोगों ने कथकळि साहित्य को पुष्ट करने में महत्त्वपूर्ण भाग लिया। जमींदारों और रजवाड़ों ने तन मन धन से प्रोत्साहन दिया। उस समय लिखे गये ग्रन्थों से तत्कालीन राजनीतिक स्थिति का पता हमें लगता है।

तिरुवितांकूर के राजा वीरकेसरी मार्तण्ड वर्मा थे। उन्होंने साम-दाम-भेद से छोटे-मोटे राजाओं के राज्यों को मिटाकर अपने राज्य को विशाल बनाया। फिर विदेशी डच लोगों को युद्ध में हराकर सुख्याति पायी। उनकी मृत्यु के बाद उनका भानजा कार्तिक-नक्षत्रज राम वर्मा

गद्दी पर बैठा। अपनी उदार नीति के फलस्वरूप वह "धर्मराज" नाम से प्रसिद्ध हुआ। अंग्रेज लोगों के साथ संधि करके उसने अपने प्रबल शत्रु टीपू सुलतान को अपने राज्य से खदेड़ दिया। चारों ओर शांति छा गयी। आँधी के बाद शांति का साम्राज्य होना स्वाभाविक था। उसे संस्कृति की उन्नति करने का अच्छा क्षेत्र और अवसर मिल गया। उसके भानजे के समय में भी, जिसका नाम था अश्विनी-नक्षत्रज, केरली साहित्य की उन्नति होती रही। इन तीनों के राजत्व काल में संगीत-साहित्य जैसी ललित कलाओं की उन्नति चरम सीमा पर पहुँच गयी।

मार्त्तण्ड के राज्यकाल में कई ग्रंथ कथकळि में लिखे गये और उनका अभिनय करने का प्रबंध भी किया गया। श्री पद्मनाभ स्वामी का मंदिर कथकळि अभिनय करने का केन्द्र चुना गया। इस सम्बन्ध की लिखित पुस्तकों में प्रधान कृष्णार्जुनसंवादम्, सुभद्राहरणम्, गुरुदक्षिणा, सन्तान-गोपालम्, बाणयुद्धम् आदि हैं। सन् १७४४ में इनकी रचना हुई। सन् १७४५-४६ ईसवी में नलचरितम्, स्यमन्तकम, हिडिंबवधम्, किरातम्, प्रदोषमाहात्म्यम्, जयद्रथवधम् आदि कृतियाँ लिखी गयीं और उनका अभिनय भी हुआ।

कहते हैं कि कथकळि का स्वर्णयुग धर्मराजा का राज्यकाल है। राजा ने राज्य भर के नटों तथा गायकों को बुलाया और उन्हें अपने दरबार में महत्त्वपूर्ण स्थान दिया। कथकळि नटों की एक मण्डली की स्थापना की गयी। उसके सदस्यों को अच्छे-अच्छे पुरस्कार देकर उनका बड़ा आदर किया गया और कथकळि की ओर उनका मन आर्कषित कर दिया। वे भी इसी कला-सृष्टि की उन्नति में मन-वाणी-काया से प्रयत्न करने लगे। धर्मराजा ने स्वयं राजसूयम्, पांचालीस्वयंवरम् तथा कल्याणसौगन्धिकंम् रचकर इस कला-विभाग की श्रीवृद्धि की। यद्यपि धर्मराजा ने कई पुस्तकें रची हैं और वे सब कवित्व की दृष्टि से उत्तम मानी जाती हैं, तो भी कला-कार की अपेक्षा कलापोषक के रूप में वे और भी चमक उठे।

राजा ने अपने मामा के समान सुन्दर शब्दरूपी फलों का चयन करके

एक ग्रंथमाला रची, जिसकी सुगंध अब भी केरली साहित्य के अंतरिक्ष में चारों ओर फैलती हुई कला-प्रेमियों को दिव्यानंद प्रदान कर रही है। संगीत तथा साहित्य का आस्वादन करनेवाले लोगों के लिए इनकी रचनाएँ अमूल्य निधि हैं। इनके गीत मीठे हैं, सरस हैं। सब प्रकार के लोगों को इससे आनंद मिल सकता है। कथकळि के नट तथा गायक बड़े चाव से इनकी कृतियाँ पढ़ते हैं और बड़ी उमंग के साथ इनकी कथाओं का अभिनय करते हैं। संगीत तथा साहित्य के सम्मिलन से इनके ग्रंथ अति उत्तम बन गये हैं। जब कि इनके मामा धर्मराजा ने भारत की कथाओं के आधार पर अपनी रचनाएँ रचीं, तो भानजे ने भागवत के आधार पर अपने ग्रंथ रचे। उनके ग्रंथों में उत्तम रुक्मिणीस्वयंवरम्, पूतनामोक्षम्, अंबरीष-चरितम्, पौंड्रकवधम् आदि हैं। धर्मराजा ने नरकासुरवध पुस्तक अधूरी लिख छोड़ी थी। भानजे ने उसका शेष अंश लिखकर पूरा किया। कथकळि साहित्य में अश्विनी-नक्षत्रज का स्थान सर्वोन्नत मानने में जरा भी अत्युक्ति न होगी।

धर्मराजा के आश्रितों में राघवप्पिषारटी ने रावणोद्भवम्, कल्लूर नंपूतिरि ने बालिविजयम्, मधुकैटभवधम्, स्वाहासुधाकरम्, सुमुखी-स्वयंवरम्, पतियिक्कल तंपान ने कार्तवीरविजयम्, रामानुकरणम् आदि पुस्तकें लिखीं। इनके अतिरिक्त ध्रुवचरितम्, तारकासुरवधम् जैसी रचनाएँ भी उस समय रची गयीं। कोच्चि राज्य के वीर केरल वर्मा नामक एक राजा ने करीब पचास उत्तम कृतियाँ लिखकर कथकळि साहित्य का भण्डार और भी भर दिया। अठारहवीं सदी में अनेक ग्रंथ रचे गये हैं जिनका व्यौरेवार वर्णन करना टेढ़ी खीर है।

उण्णायि वारियर

इन कवियों तथा कलाकारों में उण्णायि वारियर ने इस साहित्यशाखा में अद्वितीय स्थान प्राप्त कर लिया है। केवल एक ही कृति से विश्वसाहित्य में ये अमर हो गये हैं। मलयालम साहित्य के परम श्रेष्ठ कवियों में इनका

नाम भी लिया जाता है। इनकी कृति केरली की फुलबारी में विकसित सुगन्धित पुष्पों में कभी न मुरझानेवाला सुपुष्प है, जो अपनी सुगन्ध फैलाकर चारों दिशाओं को सुरभित करता रहता है।

खेद है कि इन कवितिलक का जन्म कहाँ और कब हुआ, बचपन का समय किस प्रकार बीता, माँ-बाप कौन थे, आदि विषय के सम्बन्ध में विद्वानों का पर्याप्त मतभेद है। सूक्ष्म गवेषणा के फलस्वरूप अधिकांश विद्वान् इस निर्णय पर पहुँचे हैं कि इनका जन्म सत्रहवीं सदी के अन्त या अठारहवीं के प्रारम्भ में त्रिशिवपेरूर नगरी के समीप हुआ है। कूटलमाणिक्कम् नामक मंदिर में वे कार्यकर्ता थे। अपना अधिक समय उन्होंने तिरुवितांकूर राज्य की राजधानी में मार्त्तण्ड वर्मा और धर्मराजा के आश्रय में बिताया था।

उनकी पुस्तक 'रामपञ्चशति' और 'गिरिजाकल्याण' के संबंध में भिन्न-भिन्न मत रखनेवाले कई विद्वान् अब भी मौजूद हैं। किन्तु यह सब लोग एक स्वर से उद्घोषित करते हैं कि 'नलचरितम्' उनकी कृति है। हिन्दी कवि बिहारी के समान इन्होंने नलचरितम् लिखकर गागर में सागर भर देने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। जीवन के सभी पहलुओं पर इन्होंने अपनी कृति में प्रकाश डाला है। एक करुणापूर्ण कथा को चुनकर समय-समय पर लोगों के हृदय में तरह-तरह के भाव जगाते हुए इन्होंने प्रस्तुत कृति की रचना की है। मनुष्य के जीवन में स्वाभाविक रूप से होनेवाली घटनाओं का चित्रण करके इन्होंने पाठकों का मन हठात् खींच लिया है। केरली के दूसरे प्रतिनिधि कवियों में इस बात की कमी दिखाई पड़ती है। अंग्रेजी के नाटक-समाट् शेक्सपियर के समान इन्होंने विविध पात्रों की सृष्टि करके उनमें जान फूँक दी। मर्मस्पर्शी घटनाओं के चित्रण में इनकी कला-कुशलता की प्रशंसा के शब्द नहीं मिलते। आदि से अंत तक इनकी रचना मधुर है। चुने हुए शब्दों के प्रयोग पर खूब ध्यान दिया गया है। नये-नये शब्दों का प्रयोग करने में वे बड़े सिद्धहस्त थे। शृंगार रसप्रधान घटनाओं के वर्णन के साथ-साथ उपनिषद्-तत्त्वों का उपदेश देने में भी ये पीछे नहीं रहते थे।

नल-दमयन्ती का मिलन, इस कार्य में हंस का भाग, नवदंपती का साज-शृंगार, वनगमन, दमयन्ती से नल का बिछुड़ना, व्याध का दमयन्ती की ओर आकर्षण, उसका अंत आदि प्रसंगों के चित्रण से कवि की मर्मज्ञता का पता लगता है।

संगीत और साहित्यरूपी गंगा-यमुना का मिलन इसके अतिरिक्त और किसी एक पुस्तक में पाना बिलकुल असंभव है। महाभारत की कथा को अवलंब मानकर संस्कृत में महाकवि श्रीहर्ष ने 'नैषधीय चरितम्' महा-काव्य लिखा है। उसीके अनुसार वारियर ने प्रस्तुत कृति रची है। दोनों की तुलना करते समय हम देख सकेंगे कि इन पुस्तकों में कई विषयों पर समानता है। किन्तु पात्रों के हृद्गत भावों का स्पष्टीकरण मनोवैज्ञानिक ढंग से वारियर द्वारा अच्छा किया गया है। यही इस पुस्तक की निजी विशे-षता है जो महाभारत या नैषधीय में नहीं पायी जाती। नल तथा दमयन्ती को सच्चे प्रेमियों के रूप में प्रस्तुत किया गया है। संपत्ति तथा विपत्ति काल में उनके प्रेम में जरा भी अन्तर नहीं आता।

ऐसे ही मधुर उपाख्यानों के आधार पर वारियर ने कथकळि को नाटक के समकक्ष लाने का प्रयत्न किया। नाटक को अंकों में विभाजित करने के समान इन्होंने कथकळि को चार दिन खेलने योग्य निर्धारित किया और उसी प्रकार पुस्तक में भी घटनाओं का वर्गीकरण किया। प्रत्येक भाव की पुष्टि के लिए पात्रों तथा प्रसंगों की रचना की गयी। पात्र सर्जन में वारियर ने दूसरे रचयिताओं की अपेक्षा पर्याप्त ध्यान रखा है। इनसे पहले कथकळि के लेखक एक ही कथा में अपने व्यक्तित्व को दिखाने वाले पात्रों की रचना नहीं करते थे। उनके पात्र यंत्रवत् कार्य करते रहते थे। किन्तु वारियर ने स्वतंत्र तथा उज्ज्वल पात्रों की रचना की, जिन्हें प्रसंग के अनुसार अपना व्यक्तित्व भी दिखाने का अवसर मिलता था।

किंबहुना, वारियर ने किसी की नकल करने का प्रयत्न नहीं किया और कोई भी साहित्यकार उनकी कविता-सरणि के अनुसार कविता न रच सका। वे अपने सामाज्य के सम्राट् बनकर स्वच्छन्द विहार करते रहे।

केरली में अब तक उनके समकक्ष आनेवाले किसी भी कवि का जन्म नहीं हुआ है।

पहले लिखा जा चुका है कि धर्मराजा का राज्यकाल कथकळि का स्वर्णयुग माना जाता है। उनकी मृत्यु के बाद कथकळि में पुस्तकें लिखना एकाएक बन्द हो गया। किन्तु उन्नीसवीं सदी में स्वाति-नक्षत्रज जब राजगद्दी पर बैठे तो उन्होंने कलाकारों को खूब प्रोत्साहन दिया। वे संगीत, साहित्य आदि ललित-कलाओं का गहरा ज्ञान रखते थे।

भारत भर में उनके समान सहृदय, उदारमना, कवि तथा संगीत-साहित्य प्रेमी और कोई बिरला ही होगा। संस्कृत, हिन्दी, तेलुगु आदि भाषाओं में भी वे कविता लिखते थे। कथकळि में वे खूब दिलचस्पी लेते थे। उनके दरबारी कवियों में इरयिम्मन तम्पी और किलिमान्नूर देशवासी विद्वान् कोईतम्पुरान ने सुन्दर पुस्तकें कथकळि विषय पर रचीं।

इरयिम्मन तम्पी ने कीचकवधम्, उत्तरास्वयंवरम्, दक्षयागम् ये तीन कृतियाँ रचकर केरली साहित्य को पुष्ट किया। भावाभिव्यंजन तथा शब्दों के सौन्दर्य में ये उण्णायि वारियर से भी आगे बढ़े हुए हैं, किन्तु आशयों के आविष्कारक तथा गंभीरता में उनसे पीछे ही हैं।

विद्वान् कोयितम्पुरान की 'रावणविजयम्' विशाल कृति है। इसमें कवि ने रावण को एक सरस तथा मिलनसार व्यक्ति के रूप में चित्रित किया है। इस कवि के व्यक्तित्व की छाप रावणविजयम् में खूब पड़ी है। संस्कृत तथा मलयालम पर कवि का पूरा अधिकार था। स्वाति-नक्षत्रज राजा के पश्चात् उनके उत्तराधिकारी ने कथकळि में अत्यधिक रुचि रखते हुए उसके प्रचार के लिए तीव्र यत्न किया।

नवाँ अध्याय

कुंचन नंप्यार

अठारहवीं सदी के आरम्भ में केरली साहित्य में एक ऐसे महान् मनीषी का अवतार हुआ, जिसके हृदयांतर्भाग से विशाल महासागर की उत्तुंग तरंगों-सा अनवरत वर्षा की झड़ी के समान कविता की निर्झरिणी फूट निकली। उन्होंने ब्राह्मण से लेकर चंडाल तक सभी जातियों का कलंक दूर करने का सतत यत्न किया। समाज के आडम्बरपूर्ण आचार-विचारों की शिथिल शृंखलाओं को उन्होंने तोड़ डाला। विविध स्वभाववाले व्यक्तियों को हँसाते और रिझाते हुए वे उन्हें अपनी कविता-पद्धति की ओर आकर्षित करते थे। ऐसा केरलवासी शायद ही कोई होगा जो उनकी रसीली तथा मोहक उक्तियों से प्रभावित न हुआ हो।

प्रारंभिक जीवन

सामाजिक, राजनीतिक तथा आध्यात्मिक बातों का वर्णन करते हुए एक सच्चे सुधारक के रूप में वे हमारे सामने प्रकट हुए। उनका पावन नाम कुञ्चन नंप्यार है। कुञ्चन नंप्यार का जन्म किळ्ळिक्कुरिशि नामक एक गाँव में हुआ था जो दक्षिणी रेलवे के 'लकड़ी' स्टेशन के पास स्थित है। उनके घर का नाम था 'कलक्कुत्तु' और जन्मवर्ष ई० सन् १७०५ माना गया है। कवि ने एक मन्दिर का निर्माण कराया था, इसके एक पत्थर पर खुदे हुए श्लोक से पता चला है कि उनका असली नाम राम था। उनके पिता किटङ्ङूर नामक गाँव के रहनेवाले थे।

बचपन से ही कवि ने संस्कृत भाषा का गंभीर अध्ययन किया था।

शिक्षा समाप्त करके वे उत्तर केरल में राजा-रईसों के यहाँ रहकर कविता करते रहते थे।

उस समय प्रतिभासंपन्न उत्तम कवियों के लिए भी राजा-रईसों के यहाँ आश्रित बनकर रहने के अतिरिक्त जीविका चलाने का कोई उपाय नहीं था। यह प्रसन्नता की बात है कि उस समय के बहुत-से राजा और रईस पंडितों की तन-मन-धन से सहायता करते थे। इसके अपवाद भी थे; यह नंप्यार के ही कथन से ज्ञात होता है। संस्कृत भाषा का अध्ययन करने के बाद वे 'कोलत्तुनाटु' नामक राज्य में पहुँचे। किन्तु वहाँ उनका स्वागत नहीं हुआ। इसके सम्बन्ध में वे कहते हैं––

"राजा की नगरी में दिन भर घूमने पर भी अन्न नहीं मिलता; मानो यहाँ प्रति दिन हरिवासर (एकादशी का उपवास) होता है और मच्छर तथा खटमलों की कृपा से रात भर जागरण करना पड़ता है; मानो यहाँ हर रात शिवरात्रि होती है।"

इस प्रकार कष्टपूर्वक घूमते-घामते कवि अंत में 'वेट्टत्तुनाटु' नामक एक छोटी रियासत में पहुँचे और वहाँ कुछ दिन ठहरे। उन्हीं के वर्णन से पता चलता है कि वहाँ के राजा की आज्ञा से उन्होंने 'चन्द्रिका वीथि' नामक नाटक लिखा जिसका अभिनय शिवरात्रि के समय किया गया। श्री वीरराय के दरबार में कुछ काल रहने के बाद नंप्यार तलप्पळ्ळि इलाके में मनक्कोट्टच्छन नामक एक धनवान् के यहाँ रहने लगे। कुछ वर्ष बाद उक्त धनवान् की मृत्यु हो गयी। उसके कोई सन्तान नहीं थी, अतः उस घर की सारी संपत्ति कोच्चि राज्य के पालियत्तच्छन नामक एक नायर-प्रधान के अधिकार में आ गयी। कहते हैं; आश्रित नंप्यार भी अपने नये स्वामी के यहाँ रहकर कविता लिखने लगे। उस समय 'विष्णुविलास' काव्य की रचना हुई।

पालियत्तच्छन के यहाँ रहते समय नंप्यार कभी-कभी अपने पिता के घर जाया करते थे। जब उनके पिता वृद्ध हो गये तो उन्होंने नंप्यार को अपने पास ही रख लिया। इसी समय संयोग से 'अंबलप्पूषा' नामक स्थान के राजा

से नंप्यार की भेंट हुई। कवि की विद्वत्ता, विनय और नैपुण्य आदि गुणों से राजा बहुत प्रसन्न हुए और उनको अपने राज्य में रहने का निमंत्रण दिया।

योग्यता-प्रदर्शन का अवसर

इसी समय नंप्यार के पिता का देहान्त हुआ और राजा की इच्छा के अनुसार वे 'अंबलप्पुषा' में आकर रहने लगे। सौभाग्य से कवि को यहाँ अपनी योग्यता और विद्वत्ता प्रकट करने का अपूर्व अवसर मिला। राजा विद्वानों का बड़ा आदर करता था। एक दिन 'पालक्काट्ट' (मलबार प्रदेश में स्थित एक नगर) से एक शास्त्री आये। उन्हें अपनी विद्वत्ता का बड़ा गर्व था। दरबार में उन्होंने घोषणा की कि मैं किसी भी पंडित को शास्त्रार्थ तथा काव्य संबंधी चर्चा में हरा सकता हूँ। ललकार सुनकर नंप्यार के गुरुवर्य आगे आये और शास्त्रार्थ करने लगे। कई दिनों तक वाद-विवाद चलता रहा। उसके अन्त होने का कोई लक्षण न दिखाई दिया। राजा को किसी महत्त्वपूर्ण कार्य से दूसरी जगह जाना था। निर्णय की शीघ्रता के लिए उन्होंने कहा—"पंडितो! आप लोगों का विवाद मैं कई दिनों से सुन रहा हूँ। आप में से कौन महापंडित है, इसका निर्णय करना टेढ़ी खीर है। अतः मैंने निश्चय कर लिया है कि जो महाशय एकदिन में बारह सर्ग का एक उत्कृष्ट काव्य लिख सकेंगे वे ही सबसे बड़े पंडित समझे जायँगे।"

यह सुनकर शास्त्री जी दंग रह गये। काव्य-रचना उनकी शक्ति के बाहर की बात थी। विजय की आशा जाती रही। कवि के गुरुवर्य भट्टतिरि ने सोचा कि मैं काव्य न लिख सकूं तो नाम पर धब्बा लग जायगा। उस समय नंप्यार की अनुपस्थिति गुरु जी को बहुत खटकी, किन्तु आधी रात के समय नंप्यार अचानक आ पहुँचे, गुरु की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। सब समाचार जानकर नंप्यार अपने गुरु का नाम रखने के लिए कविता लिखने में जुट गये। उन्होंने ग्यारह अन्य शिष्यों को भी बुला लिया। नंप्यार

स्वयं एक सर्ग लिखते जाते थे और अन्य शिष्यों में प्रत्येक को एक-एक सर्ग लिखने के लिए क्रम से एक के बाद एक श्लोक कहते जाते थे और वे लोग लिखते जाते थे। इस प्रकार लिख-लिखवाकर सूर्योदय के पहले संपूर्ण काव्य गुरुदेव के करकमलों में अर्पण कर दिया गया। इससे स्पष्ट है कि वे आशु-कवि और सर्वतोमुखी प्रतिभा-संपन्न थे।

उनकी गुरुभक्ति तथा विनय का और एक उत्कृष्ट उदाहरण यह है कि काव्य लिखकर उन्होंने गुरुदेव से प्रार्थना की कि "मेरे आगमन के संबंध में आप राजा से न कहें।" काव्य "श्रीकृष्णचरितम् मणिप्रवालम्" दरबार में राजा के सम्मुख प्रस्तुत किया गया। यह देखकर शास्त्री जी का गर्व चूर-चूर हो गया। उन्होंने हार मान ली। गुरुदेव विजयश्री-मंडित हो गये। राजा को बाद में मालूम हुआ कि उस सु दर काव्य के रचयिता नंप्यार थे। तब से नंप्यार के प्रति राजा का आदर-भाव अधिक बढ़ गया। नंप्यार का यश चारों ओर फैलने लगा और सभी लोग उनका आदर करने लगे।

इतना होने पर भी नंप्यार को गर्व छू तक न गया। उनकी गुरुभक्ति प्रशंसनीय थी। वे सदैव गुरुदेव की पूजा करते थे। उनका पूर्ण विश्वास था कि 'गुरु रूठें' तो शिष्य को और कहीं 'ठौर' नहीं है। गुरुदेव की कृपा प्राप्त करने के लिए वे सदा प्रार्थना करते और कहा करते थे कि गुरु-कृपा-हीन शिष्य की दशा कभी नहीं सुधरेगी। वे लिखते हैं—"जो अपने गुरुजनों के चरणकमलों का स्मरण करते हैं उन लोगों पर कभी कोई विपत्ति नहीं आती, यह बात सर्वसम्मत है। गुरुत्व हो तो वाणी सदैव सफल होगी।" कविकुलतिलक कालिदास ने अपने को 'मन्दः कवियशःप्रार्थी' बतलाकर विनय का भाव प्रकट किया है। एषुत्तच्छन ने अपने को 'अज्ञानिनामाद्यः' कहा है। तुलसी ने भी यही भाव प्रकट किया है। नंप्यार ने कई स्थलों पर अपने आपको मूर्ख, अपढ़ आदि कहा है। वे लिखते हैं—"मैं मूर्ख, वन्दनीय लोगों की सभा में कथा सुनाने को तैयार होकर खड़ा हूँ। यह मेरे साहस के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।"

अभिनययुक्त संगीत की पद्धति

नंप्यार केवल कवि नहीं थे। वे नृत्य और अभिनय कला में भी अद्वितीय थे। उनके एक नाटक के बारे में ऊपर कहा जा चुका है। कथन, नृत्य, अभिनय, वाद्य आदि का एक साथ उपयोग करने की नयी पद्धति कवि ने चलायी। इसे 'तुल्लल' कहते हैं। इसमें एक आदमी विशेष वेशभूषा में रंगमंच पर उपस्थित होकर किसी पौराणिक या वीर रसपूर्ण कथा को काव्य के रूप में कहता जाता है। साथ ही वह ताल तथा लय के साथ हाव-भाव दिखाकर अभिनय करता रहता है। नट कभी-कभी उछलता-कूदता भी है। उसके साथी वाद्य-घोष के साथ कविता-पाठ करते रहते हैं। अभिनय-युक्त संगीत के द्वारा लोग कथा को अच्छी तरह समझकर आनंद उठाते हैं।

केरल के मंदिरों में कई प्रकार की कलाओं का जन्म हुआ है। उनमें एक है "चाक्यार कूत्त।" 'चाक्यार' एक जातिविशेष है। समाज-सुधार की इच्छा से पौराणिक कथाओं का आश्रय लेकर प्रचलित कुरीतियों का मनोरंजक, किन्तु तीखी भाषा में खण्डन करना इस जाति का काम माना जाता है। इसीलिए वे लोग रंगमंच पर किसी की भी मनचाही हँसी उड़ा सकते हैं। उसका उत्तर देना मना है।

एक दिन एक चाक्यार अम्बलप्पुषा के मंदिर में कथा सुना रहा था। उस समय कवि नंपियार बाजा बजा रहे थे। बाजा ठीक न बजाने के कारण 'चाक्यार' ने भरी सभा में 'नंप्यार' की हँसी उड़ायी। नंप्यार बहुत लज्जित हुए। उन्होंने 'चाक्यार' को पाठ पढ़ाने का संकल्प किया। दूसरे दिन मंदिर के एक स्थान पर 'नंप्यार' विचित्र वेष-विधान करके संगीत तथा वाद्यविशेष के साथ नृत्य करने लगे। इससे आकर्षित होकर जितने लोग चाक्यार के पास कथा सुन रहे थे, सब नंप्यार के पास आ गये, कोई भी 'चाक्यार' के पास न रहा। तब वह बहुत लज्जित हुआ। 'तुल्लल' पद्धति की लोकप्रियता प्रथम प्रयोग में ही स्थापित हो गयी।

इस पद्धति के अनुसार कवि नंप्यार ने अनेक कथाएँ लिखी हैं। उनका अनुकरण कर कई कवियों ने बाद में उसी तरह की कविताएँ लिखीं। किन्तु संभवतः किसी को भी उसमें नंप्यार के समान सफलता नहीं मिल सकी। अपनी उस पद्धति की कई कविताएँ सरल, कोमल कान्त पदावली में लिखकर नंप्यार ने मलयालम भाषा को समृद्ध करने के साथ-साथ अपनी कीर्ति को भी अमर कर दिया।

कुंचन नंप्यार की विद्वत्ता सर्वतोमुखी थी। उनके समय में ऐसा शायद ही कोई उपलब्ध ग्रंथ होगा जिसे उन्होंने न पढ़ा हो। ग्रंथों को पढ़ने की सुविधा भी उस समय काफी थी। उस समय के शासक, धनी, ज्ञानी लोग ग्रंथों का मूल्य और उपयोगिता समझते थे। जनता भी पढ़ने में विशेष रुचि प्रकट करती थी। फलतः कन्याकुमारी से लेकर गोकर्ण तक प्रत्येक तीर्थ-स्थान पर एक न एक बड़ा ग्रंथालय अवश्य होता था। राजा के साथ तीर्थ-स्थानों के दर्शन करने के लिए नंप्यार जाया करते थे। इसलिए उन ग्रंथालयों से नंप्यार ने पूरा लाभ उठाया होगा, इसमें सन्देह नहीं है। इस अगाध अध्ययन के साथ उनकी स्वयंसिद्ध प्रतिभा भी उत्तरोत्तर बढ़ती गयी।

ईश्वरभक्ति और गुरुभक्ति के साथ समाज-सुधार की उत्कट इच्छा भी नंप्यार की कविताओं में प्रकट होती है। सूरदास जैसे कवियों के समान उन्होंने अपने काव्य-कुसुम केवल देवार्चन के लिए ही सुरक्षित नहीं रखे, बल्कि समाज की कुरीतियों को दूर करने के प्रशस्त ध्येय पर भी वे सदैव अटल रहे।

उनके अनेक महत्त्वपूर्ण गुणों में प्रधान है उनका अपनी भाषा के प्रति प्रेम। वे मलयालम तथा संस्कृत के प्रकांड पण्डित थे, फिर भी सर्वसाधारण के लिए विशेष रूप से मलयालम में ही लिखना पसन्द करते थे। वे सदा सरस, सरल, मधुर और प्रसादगुण युक्त शब्दों का प्रयोग करते थे। समस्त वाङमय दास्य-भाव से उनकी सेवा में उपस्थित रहता था। सरस्वती देवी उन पर सदा प्रसन्न रहती थीं। जैसे क्षीरसागर के वक्षस्थल पर तरंगें

प्रचण्ड वेग से नृत्य करती रहती हैं, वैसे ही उनकी रचना में शब्दसमूह नाचते रहते थे।

काव्य ग्रंथ

श्रीकृष्णचरितम्, मणिप्रवालम्, भगवद्दूत, भागवतम्, इरुपत्तिनालु वृत्तम्, पतिन्नालुवृत्तम्, शीलावती, नलचरितम्, शिवपुराण, विष्णुगीता आदि उनके प्रमुख काव्य ग्रंथ हैं। 'तुल्लल' पद्धति के अनुसार करीब ६० कविता ग्रंथ उनके रचे हुए हैं। 'श्रीकृष्णचरितम् मणिप्रवालम्' का मलयालम भाषा के प्रसिद्ध काव्यों में प्रमुख स्थान है। यह नंप्यार की प्रारंभिक रचना है। 'भगवद्-दूत' भी कवि के बाल्यकाल की कृति है, तथापि सरसता और गंभीरता में यह किसी प्रकार भी कम नहीं है। यह काव्य चौदह भिन्न-भिन्न वृत्तों में लिखा गया है। यह खण्डकाव्य इतना लोकप्रिय है कि इसकी चालीस हजार प्रतियाँ केरल-जैसे छोटे प्रदेश में बिक गयी हैं।

'भागवतम् इरुपत्तिनालु वृत्तम्' में कवि ने भागवत् की कथावस्तु चौबीस सर्गों और विभिन्न वृत्तों में लिखी है। तुलसीदास ने जिस प्रकार 'स्वान्तः-सुखाय' कविता लिखी, उसी प्रकार नंप्यार ने भी विष्णुपद पाने के लिए श्रीकृष्णचरित का निर्माण किया है।

अंबलप्पुषा में नंप्यार कई साल तक रहे। जब उसे तिरुवितांकूर के राजा मार्त्तण्ड वर्मा ने जीतकर अपने राज्य में मिला लिया, तब कवि भी राजा के आश्रित होकर तिरुवनंतपुरम् नगरी में रहने लगे। राजा ने उनका बड़ा आदर-सत्कार किया। जब कवि बूढ़े हो गये तब वे अंबलप्पुषा चले गये। एक पागल कुत्ते के काटने से उनकी जीवन-लीला लगभग सन् १७४८ में समाप्त हुई।

दसवाँ अध्याय

गीत काव्य

अठारहवीं सदी में कई कवियों ने सैकड़ों गीत रचकर मलयालम साहित्य को पुष्ट किया है। कोच्चि राज्य निवासी रामवर्मा ने रामायण के सुन्दरकाण्ड की कथा को 'पाना' पद्धति में लिखा, जो बहुत प्रसिद्ध है। 'पुरयन्नूर' नामक स्थान पर रहनेवाले परमेश्वरन नंपूतिरि ने 'दशमम् किलिप्पाट्टु' (भागवत दशमस्कन्ध) की कथा 'शुकगान' के रूप में लिखी। ऐसी ही कुशलवोपाख्यान भी उत्तम कृति है। उसी शैली में राघव पिषारटी ने वेतालचरितम्, पञ्चतन्त्रम्, सेतुमाहात्म्यम् आदि किलिप्पाट्टु पुस्तकें लिखीं। इनके अतिरिक्त शुप्पु मेनोन की 'कावेरी माहात्म्यम्' धर्मराजा की 'रामेश्वर यात्रा' आदि बहुत-सी कृतियों का निर्माण गीतों के रूप में हुआ।

उस समय स्त्रियाँ मनोरंजन के लिए चक्कर काटती हुई खेलती थीं, साथ ही वे एक प्रकार के गीन भी गाती थीं। कई कवियों ने खेल के समय गाने योग्य ऐसे गीत रचे हैं। उनमें 'मच्चाट्ट इळयत्' के गीत सुन्दर तथा सरस माने जाते हैं। उनकी उत्तम कृतियाँ पार्वतीस्वयंवरम्, अंबरीष-चरितम्, शाकुन्तलम्, गजेन्द्रमोक्षम्, लक्ष्मणास्वयंवरम् आदि हैं। इस समय गीतों में जो ग्रन्थ लिखे गये उनका आधार पौराणिक कथाएँ हैं। जनता के बीच उन गीतों का बड़ा प्रचार था। इस प्रकार अब कविता ने पंडितों पर तथा आम जनता पर प्रभाव डाला। गाँव-गाँव में साधारण लोगों के मुँह से इन कविताओं के उद्धरण निकलने लगे।

वारियर-रचित कुचेलवृत्तम्

यद्यपि इस समय असंख्य सुन्दर-सुन्दर गीत रचे गये, तो भी प्रथम

स्थान कवि वारियर की कृति 'कुचेलवृत्तम्' को प्राप्त है। हिन्दी भाषा *के सरस कवि नरोत्तमदास के समान 'कुचेलवृत्तम्' (सुदामा चरित) लिखकर वारियर ने मलयालम की श्रीवृद्धि की।* *अन्य प्रसिद्ध कवियों के* समान इनके जन्म, जीवन, अध्ययन आदि के संबंध में निश्चित जानकारी का अभाव है। इतना निश्चित है कि जब मार्तण्ड वर्मा तिरुवितांकूर राज्य के सिंहासन पर आसीन थे, तब वारियर उनके दरबारी कवि थे। कहा जाता है कि उनका जन्म-स्थान केरल प्रदेश के मध्य भाग में स्थित रामपुरम गाँव है। उस गाँव के कृष्णमंदिर के वारियर-निवास में लगभग ई० सन् १७२४ में कवि पैदा हुए। जन्मस्थल के नाम से पुकारे जाने के कारण वे 'रामपुरत्तु वारियर' कहलाये। कहा जाता है कि वे ब्राह्मण (केरल ब्राह्मण, यहाँ इन लोगों को नंपूतिरि कहकर पुकारते हैं) वंश में उत्पन्न हुए थे।

कवि का बाल्य जीवन कष्टमय था। कष्टों से मुक्ति पाने के लिए वारियर वैकम के मंदिर में भजन करने लगे। संयोग से एक दिन राजा मार्तण्ड वर्मा मंदिर में पधारे। उनको देखते ही वारियर के मन में विचार आया कि यदि किसी प्रकार राजा का कृपापात्र बन जाऊँ तो मेरी गरीबी हमेशा के लिए दूर हो जायगी। किन्तु एक अकिंचन आदमी राजा के सम्मुख कैसे जा सकता था? बात असंभव जान पड़ी। राजा के लौटने का समय आ गया, वे मंत्रि-समूह और भृत्य-वृन्द से घिरे हुए थे। कवि देखते ही रह गये।

अंत में जब राजा नाव पर चढ़े तो कवि से न रहा गया। एक उपाय सूझा। पानी में कूदकर हाथ ऊपर उठाकर वे ताडपत्र दिखाने लगे। राजा की दृष्टि उन पर पड़ी। राजा ने आज्ञा दी—"उन ताड़पत्रों को यहाँ लाओ।" पत्रों पर लिखे हुए कुछ पद्यों को पढ़कर राजा बहुत प्रसन्न हुए और वारियर को नाव पर चढ़ाकर अपने साथ ले लिया। नाव चलने लगी और राजा ने कुछ गीतों की रचना करने की आज्ञा वारियर को दी। उसी समय 'कुचेलवृत्तम्' नामक कविता कवि ने रची।

प्रसंग के अनुसार कवि ने इसका कथानक चुना। उन्होंने सोचा कविता भी रची जाय और राजा को अपनी स्थिति का परिचय भी कराया जाय, 'एक पंथ दो काज'। मन में विश्वास हुआ कि जैसे श्रीकृष्ण ने प्रसन्न होकर सुदामा की गरीबी दूर की, उसी प्रकार राजा मेरी गरीबी दूर करेंगे। आराध्य देवता, गुरुवर्य आदि की बन्दना के बाद कवि ने लिखा है—"जिस भगवान् ने सुधा देकर अमरों का कष्ट दूर किया, वही भगवान् सुदामा के चिथड़ों में बँधे हुए मुट्ठी भर चावलों से जैसे प्रसन्न हुए, वैसे ही मेरी इस तुच्छ कृति से वंचि-पालक (तिरुवितांकूर नरेश) प्रसन्न हों।" इस प्रकार उन्होंने अपनी इच्छा प्रकट करते हुए, कुचेलवृत्तम् काव्य लिखकर राजा को भेंट के रूप में अर्पण किया। तिरुवनंतपुरम् पहुँचकर राजा ने कवि को ठाठबाट के साथ राजमहल में नहीं रखा। कवि निराश से हो गये। उसी समय वारियर को जयदेव की 'अष्टपदी' का मलयालम अनुवाद करने की आज्ञा मिली। सरस कोमल कान्त पदावली में रचित जयदेव के गीत-गोविन्द का भाषा-काव्य में अनुवाद करना मामूली बात नहीं थी। फिर भी कवि ने सुन्दर शैली में उनका रूपान्तर किया और राजा को समर्पण करके लौटने की इच्छा प्रकट की। राजा ने अनुमति दे दी।

बड़ी प्रतीक्षा के पश्चात् कुछ न पाने के कारण कवि की निराशा-भरी मनःस्थिति की कल्पना सहृदय पाठक सहज ही कर सकते हैं। वारियर ने अपने घर की तरफ प्रस्थान किया। कुछ दूर जाने पर राजा के कर्म-चारियों ने उनका बड़ा स्वागत किया और मार्ग में विश्रामादि की पूर्ण सुविधाएँ दीं। रास्ते में स्थान-स्थान पर उनका सार्वजनिक स्वागत हुआ। अपने गाँव में पहुँचने पर यह देखकर उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ कि जिस स्थान पर उनकी झोपड़ी थी वहाँ एक भव्य भवन बन रहा है। कृष्ण की कृपा का फल देखकर सुदामा ने जो अनुभव किया होगा, वही उद्गार कवि के हृदय में उठे होंगे। उनकी आँखों से आनंदाश्रुओं की धारा बहने लगी। राजा के चिरायु होने की शुभकामना करते हुए कवि बड़े आनंद से अपना समय बिताने लगे।

वारियर की लिखी हुई कृति 'कुचेलवृत्तम्' के गीत नौका-गानों में सबसे मुन्दर माने जाते हैं। जहाँ-जहाँ नावों की दौड़ होती है वहाँ-वहाँ लोग वही गीत गाया करते हैं। इतना लोकप्रिय है यह काव्य। इसमें श्रीकृष्ण तथा तत्कालीन राजा के विशेष गुणों का वर्णन रोचक ढंग से किया गया है। मुदामा तथा उनकी पत्नी के मनोभाव, उन धर्मधुरन्धर पति-पत्नियों की दयनीय स्थिति, प्रिय मित्र श्रीकृष्ण का सहानुभूति से भरा हृदय, परस्पर-मिलन के समय उन दोनों मित्रों की मानसिक वृत्तियाँ आदि का चित्रण रससिद्ध कवि ही कर सकते हैं। संक्षेप में कहा जाय तो यह कृति मलयालम भाषा की अमूल्य संपत्ति है।

गिरिजाकल्याणम्

इसी समय 'गिरिजाकल्याणम्' नामक रचना का निर्माण हुआ था। 'कुचेलवृत्तम्' सरल कोमल शैली में लिखा गया है, परंतु 'गिरिजाकल्याणम्' की शैली बड़ी गंभीर मानी जाती है। कवि ने अपना अपार पांडित्य इस कृति के द्वारा प्रकट किया है। कालिदास के 'कुमारसंभव' के आधार पर यह पुस्तक लिखी गयी है। पार्वती का परिणय है प्रधान कथा-वस्तु। काकली, केका जैसे भाषावृत्तों की इसमें प्रधानता है। कल्पनाशक्ति, भाषा पर अधिकार, अर्थगंभीरता, रसपुष्टि आदि कविता के गुण बड़ी प्रचुरता में इसमें पाये जाते हैं। गीतिकाव्यों में इसका स्थान उत्कृष्ट है और सहृदय लोग एक कंठ से उद्घोषित करते हैं कि यह मलयालम भाषा के अमूल्य कंठाभरणों में अन्यतम है। इसके रचयिता के संबंध में लोग मतभेद रखते हैं। किन्तु अधिकांश विद्वानों की राय है कि इसका निर्माण उण्णयि वारियर ने ही किया है।

चेलप्परंपु नंपूतिरि

१८वीं सदी में नंप्यार-जैसे मनीषियों ने मलयालम की साहित्य-शाखा को परिपुष्ट करने के लिए महत्त्वपूर्ण यत्न किये। उस समय की मलबार

राजधानी कलिकट के निवासी चेलप्परंपु नंपूतिरि ने कई मुक्तक रचकर इस भाषा की खूब उन्नति की। कवित्व की दृष्टि से देखा जाय तो इनके मुक्तक सर्वोत्तम माने जाते हैं। इनकी रसिकता तथा भावुकता बेजोड़ है। उस समय संस्कृत के वृत्तों में लोग कविता रचते थे। किन्तु इन्होंने भाषा-वृत्तों के अनुसार पद्य रचकर अपनी स्वतन्त्र शैली की छाप लगायी। यही इनकी विशेषता है। मणि-प्रवाल शैली को उच्च स्थान देकर ये भावी पीढ़ी की कवि-परंपरा के पथप्रदर्शक बने। कहा जाता है कि उस परंपरा के प्रधान, वेण्मणी नंपूतिरि के समान प्रतिभाशाली सरस कवियों ने इनसे प्रेरणा पाकर सुन्दर कविताएँ रची हैं।

नंप्यार के देहान्त के बाद कुछ काल के लिए काव्यक्षेत्र में एक प्रकार की शिथिलता आ गयी। इसका प्रधान कारण था उस समय की राजनीतिक अवस्था। दक्षिण भारत में राजा लोग आपस में अपना प्रभुत्व जमाने की होड़ में लगे हुए थे। मैसूर राज्य के शासक टीपू सुलतान ने मलबार, कोच्ची, तिरुवितांकूर जैसे राज्यों पर चढ़ाई शुरू कर दी थी। जब मलबार पर उसका आक्रमण हुआ तब वहाँ से पंडित लोग भाग कर तिरुवितांकूर नरेश के आश्रय में चले गये। जहाँ देखो वहीं अशान्ति फैल गयी थी। इस वातावरण में कविता का निर्माण कैसे हो सकता था।

टीपू के बाद अंग्रेजों का आधिपत्य भी इन राज्यों पर होने लगा। जब इनकी तानाशाही अधिक बढ़ने लगी तब वेलुत्तंपी के समान कई देशभक्त इनके विरुद्ध खड़े हो गये। अंग्रेजों ने भी इन शूर वीर देशभक्तों का सत्यानाश करने के लिए जी-तोड़ प्रयत्न किया। उसके फलस्वरूप कई दंगे हुए और विदेशी लोगों के पैर यहाँ अच्छी तरह जम गये।

अन्य कवि

इस समय कविता की रचना के लिए प्रतिकूल वातावरण था, तो भी कहीं-कहीं थोड़े से सहृदय लोग कुछ रचना करते रहते थे। इनमें से कुछ कवियों का परिचय इस प्रकार है—

(१) शंकुण्णि कैयम्मळ—ये पालकाट्ट जिले के एप्पुळ्ळि नामक गाँव में पैदा हुए। १८वीं सदी में इनका जन्म और निधन हुआ। इनकी कृतियों में प्रधान 'सुन्दरीस्वयंवरम्' गोग्रहण, बाणयुद्ध, शिवकर्णामृतम्, रामकर्णामृतम् और दासीवृत्तम् है। इनके अतिरिक्त इन्होंने भक्तिरस से भरे कई कीर्तन भी लिखे हैं।

(२) चिरयीनकीष नामक इलाके में रहनेवाले नारायण पिल्लै ने गुणदोषवाक्यम्, प्रपञ्चसारसंक्षेपम्, वैद्यसंग्रहम्, धाराकल्पम् आदि पुस्तकें लिखकर केरली साहित्य को पुष्ट किया।

(३) एक महान् कवि कल्लूर नंपूतिरि हैं जिन्होंने कथकळि शैली में चार ग्रन्थ रचे। उनमें बालिविजयम्, मधुकैटभवधम्, स्वाहासुधाकरम् आदि मुख्य हैं।

इनके अलावा भी कई विद्वानों ने अनेक उत्तम ग्रन्थ लिखे हैं।

ग्यारहवाँ अध्याय

गद्यकाल

मलयालम भाषा के गद्य साहित्य को लेकर बहुत-सी बातें कही जा चुकी हैं। पद्य रचना के साथ ही साथ यह शाखा भी पुष्ट होती जा रही थी। साधारण लोग अपने आशय को प्रकट करने के लिए गद्य का आश्रय लेते थे। फिर भी प्राचीन काल का गद्य, पद्य के समान प्रचलित नहीं हो सकता था, क्योंकि कवियों तथा सहृदयों को छोड़कर अधिकांश लोग गद्य का व्यवहार टूटी-फूटी भाषा में ही करते थे।

प्राचीन काल में जमीन के स्वामित्व के संबंध में गद्य में ही अधिकार-पत्र लिखे जाते थे। मन्दिरों की व्यवस्था गद्य लेख के आधार पर होती थी। राजा, सचिव तथा कर्मचारी अपने-अपने कार्य गद्य के सहारे ही चलाते थे। राजा की आज्ञा, अधिकार-पत्र आदि सब कागज के स्थान पर ताम्र-पत्रों और ताड़ के पत्रों पर लिखे जाते थे। महत्त्वपूर्ण शिलालेख भी गद्य में ही खोदे जाते थे। नवम सदी से इनका प्रयोग खूब होता था। यह सब उस समय के शिला-लेखों तथा ताड़पत्र आदि पर लिखे लेखों से मालूम होता है। इन लेखों को मलयालम में 'ग्रन्थवरि' कहकर पुकारते थे। ये लेख मुख्य मन्दिरों, शासकों तथा जमीन्दारों के घर में पाये जाते हैं। इनकी भाषा संस्कृत के प्रभाव से मुक्त है। मलयालम के प्राचीन रूप का नमूना इनको पढ़कर पाठक समझ सकते हैं। तमिल का प्रभाव इन पर खूब दिखाई पड़ता है। धीरे-धीरे तमिल का आश्रय घटने लगा और ठेठ मलयालम शब्दों का प्रयोग बढ़ने लग गया। उस समय की गद्य-शैली खूब परिपुष्ट हो चली थी। किसी भी आशय को दढ रूप से प्रकट करने की शक्ति तत्कालीन गद्य में पायी

जाती है। विविध प्रकार के नाटकों का अभिनय करने के नियम भी गद्य में लिखे गये थे। किन्तु इस लेखन-शैली को साहित्य की दृष्टि से मान्यता नहीं दी जा सकती।

कौटिल्य, गद्य का प्रथम ग्रन्थ

साहित्य-ग्रन्थों का निर्माण दसवीं शताब्दी से होने लगा था। जिस प्रकार 'रामचरित' प्रथम प्राचीन पद्यकृति है उसी प्रकार 'कौटिल्य' को गद्य का पहला प्राचीन ग्रन्थ मानना चाहिए; यह सब लोग एक कंठसे स्वीकार करते हैं। "कौटिल्य का अर्थशास्त्र" संसार भर में विख्यात है। ऐसी उत्तम रचना का अनुवाद प्रान्तीय भाषाओं में सबसे पहले मलयालम में ही हुआ है; यह मलयालियों के लिए अभिमान की बात है। इससे यह अनुमान किया जा सकता है कि उस समय मलयालम भाषा का गद्य पर्याप्त विकसित हो गया था। इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि 'अर्थशास्त्र' के आशय समृद्ध भाषा के द्वारा ही समझाये जा सकते हैं। सारांश यह है कि मलयालम का गद्य साहित्य यथेष्ट उन्नत हो चुका था। रूपान्तरकार ने संस्कृत शब्दों का प्रयोग बहुत कम मात्रा में किया है, उसके आशयों का हनन भी नहीं किया गया है। किन्तु खेद के साथ लिखना पड़ता है कि इस अमूल्य कृति के रचयिता अज्ञातनामा हैं। उसके अध्ययन से यह भी ज्ञात हो जाता है कि उस समय की तथा वर्तमान गद्यशैली में बड़ा अन्तर पड़ गया है।

केरल के उत्तर भाग में प्रचलित गद्य में संस्कृत शब्दों का प्रयोग दक्षिण की अपेक्षा अधिक होता था। तलश्शेरी में सुरक्षित लेखों से उस समय की गद्यशैली का नमूना हमें मिलता है।

दूतवाक्यम् आदि रचनाएँ

कुछ काल के बाद संस्कृत ग्रन्थों का अनुवाद मलयालम में होने लगा। बहुत-से ग्रन्थ गद्य में अनूदित किये गये। उनमें संस्कृत शब्दों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में हुआ। उन रचनाओं में 'दूतवाक्य' उत्तम है। कहते हैं कि

इसका निर्माण १४वीं सदी में हुआ। यह स्वतन्त्र रूप से अनूदित किया गया है। ग्रन्थकार ने अपनी प्रतिभा के अनुसार विषय को घटा-बढ़ाकर इसमें लिखा है। ऐसा भी अंश इसमें पाया जाता है जो मूल में न हो। इसके अनुवादक भी अज्ञातनामा हैं। इसके अतिरिक्त 'ब्रह्माण्ड पुराणम्' और 'अंबरीषचरितम्' ये दो पुस्तकें गद्य ग्रन्थों में उन्नत स्थान को अलंकृत करती हैं। इनका आधार पौराणिक कथाएँ हैं। कुछ विद्वानों की राय है कि ब्रह्माण्डपुराणम् के लेखक निरणम कवियों में से एक हैं।

कहा जा चुका है कि 'चाक्यार' जाति के लोग पौराणिक कथाओं के साथ सामाजिक घटनाएँ मिलाकर लोगों को सुनाते थे और तत्कालीन समाज के दोषों की कड़ी आलोचना करते थे। वे सब संस्कृत भाषा के शब्दों का आश्रय लेते थे। किन्तु उनमें ऐसा भी एक समूह था जो शुद्ध मलयालम में पौराणिक कथाएँ सुनाता था। उसकी गद्यशैली में मलयालम के शब्द अधिक मिलते थे और ऐसे संस्कृत शब्दोंका भी प्रयोग किया जाता था जिनके अंत में मलयालम भाषा की विभक्ति के शब्द लगे रहते थे। यह एक खास ढंग की शैली थी। उनके इस तरह के ग्रन्थों को 'नंप्यार की तमिळ' कहकर पुकारते थे। 'रामायण तमिळ' उस शैली का ही एक ग्रन्थ है।

तमिळ देश की तमिळ भाषा में लिखे हुए अनेक ग्रन्थों की टिप्पणियाँ भी उस समय मलयालम के गद्य में लिखी जाती थीं। ज्योतिष, वैदिक धर्म के आचार-विचार तथा अनुष्ठान करने की विधियाँ आदि विविध विषयों के ग्रन्थों में गद्य का प्रयोग हुआ है।

पन्द्रहवीं सदी में सुन्दर तथा सरल सरस गद्य शैली में अनेक ग्रन्थ लिखे गये। उनके छोटे-छोटे वाक्यों के रसयुक्त और अलंकार भरे शब्दों के प्रयोग लोगों के हृदय को हठात् आकर्षित कर लेते थे।

उस समय के भागवतम्, भागवतसंग्रहम्, मुकुन्दमाला-व्याख्यानम्, संगीतरत्नाकरम् आदि गद्य ग्रन्थ प्रमुख हैं। पौराणिक कथाओं के आधार पर भी कई ग्रन्थ रचे गये हैं। भागवतम् की गद्यशैली प्रशंसनीय है, इसके वाक्य छोटे और सारयुक्त हैं। कहीं-कहीं प्राचीन प्रयोग भी मिलते

हैं और अर्थ समझने में कठिनाई होती है। फिर भी उसमें एक नवीन जाग्रति दिखाई पड़ती है और संभाषण का ढंग अत्यन्त आकर्षक है।

सन् १४९८ में पुर्तगाली लोग केरल में व्यापार करने के लिए आये। उनके बाद डच, अंग्रेज और फ्रांसीसी लोग यहाँ आकर अपना-अपना अड्डा जमाने लगे। वह समय केरलीय लोगों के लिए परिवर्तन काल बन गया। उस समय यहाँ बहुत-सी घटनाएँ हुईं, जिनसे केरल विदेशी लोगों के दावपेंच करने का रंगस्थल बन गया। ढाई सौ वर्ष तक पुर्तगाली तथा डच लोग यहाँ रहे, वे सब अपना-अपना साम्राज्य स्थापित करने के लिए बड़ी कोशिश करते थे, किंतु सफलता न मिली। पर यह तो निर्विवाद है कि भाषा तथा संस्कृति के क्षेत्रों में वे अमिट छाप छोड़कर चले गये हैं।

जब आर्य लोग केरल में आये तब उन्हें स्थानीय भाषा का अध्ययन करना पड़ा। उसी प्रकार पुर्तगाली और डच लोग मलयालम भाषा का अध्ययन करने लगे। पुर्तगाली लोग यहाँ के लोगों को अपने धर्म में मिलाने का प्रयत्न तन-मन-धन से करते थे। केरल के पश्चिम तीरवर्ती अनेक स्थानों पर कई गिरजाघर बनाये गये। धर्म-प्रचारक पुर्तगाल से आकर यहाँ की भाषा को सीख गये और अपने धर्म का प्रचार बड़े जोर से करने लगे। साथ ही उन्होंने कई स्कूल खोले और उनमें स्थानीय भाषा सिखाने का आयोजन किया। धर्मप्रचारक अध्यापक भी बन गये। उन्होंने बड़ी दिलचस्पी से मलयालम का अध्ययन करके अपनी भाषा के कई ग्रंथों का अनुवाद भाषा में किया। अब पौयन तथा पाश्चात्य संस्कृतियों का समन्वय होने लगा। भाषा पर भी विदेशी लोगों की गद्यशैली का प्रभाव धीरे-धीरे पड़ा। पुर्तगालियों के अतिरिक्त डच लोग भी ऐसे कामों में तल्लीन थे।

ईसाई धर्मप्रचारकों का कार्य

ईसाई धर्म-प्रचारकों ने प्रान्तीय भाषा में उपदेश देना शुरू किया, उसमें कई उपदेश लिखे गये। गद्यशैली का परिवर्त्तित रूप उन लेखों से समझा जा सकता है। सन् १५९९ में ये प्रचारक तिरुवितांकूर राज्य स्थित

उदयंपेरूर नामक गाँव में एकत्र हुए। अपना धर्म परिवर्तन करने के लिए बहुत-से लोग वहाँ आये। लोगों को सुधारने के लिए उन्होंने कई प्रस्ताव उनके सामने प्रस्तुत किये। उन्हें 'कानोन' नाम दिया गया। "Cannons of the synod of Dayampeur" नामक निबन्ध की रचना शैली सरल और मंजुल है। यद्यपि उसमें व्याकरण सम्बन्धी गलतियाँ हैं, तो भी कृत्रिमता का नाम भी नहीं है। यह कृति आधुनिक मलयालम गद्य के प्रथम नमूने के रूप में प्रख्यात है। इस गद्य का प्रणेता एक धर्म-पुरोहित चाक्को है जो कोच्चि बन्दरगाह के नजदीक स्थित पल्लुरुत्ति नामक गाँव में रहता था।

इस समय पुर्तगाली धर्मप्रचारकों ने कोच्चि में छापाखाना स्थापित करके वहाँ कई ग्रंथों को छापने का प्रबन्ध कर दिया। बहुत-से ग्रंथ छापे गये। इन लोगों ने नंपूतिरि समुदाय की सहायता से संस्कृत का गहरा अध्ययन किया और मलयालम का एक व्याकरण और कोश छपवाया। धीरे-धीरे मलयालम की कई पुस्तकें छपने लगीं। विज्ञों का कथन है कि भारतीय भाषा के ग्रन्थों को छापने का प्रबन्ध सबसे पहले 'गोवा' में किया गया और उसके बाद केरल में।

पुर्तगालियों की शक्ति क्षयोन्मुख हुई तो डचों ने उनका स्थान हड़प लिया। सबसे पहले तिरुवितांकूर राज्य के विभिन्न नरेशों से उन्होंने संपर्क बढ़ाया। मलबार का राजा प्रथम उनसे दुश्मनी रखता था, किंतु वह फिर उनका मित्र बन गया और कण्णूर में दूकानें खोलने की उनको अनुमति दे दी। पुर्तगालियों के समान धार्मिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्र में डचों ने कोई ठोस कार्य नहीं किया। परन्तु वे हमेशा नरेशों से एवं स्थान-स्थान पर भ्रमण करके वहाँ के निवासियों से मिलते-जुलते रहते थे। कीमती उपहार देकर वे राजाओं की प्रीति के पात्र बन जाते थे। जहाँ-जहाँ वे जाते थे वहाँ का सारा हाल लिख लेते थे। मलयालम भाषा उनमें बहुत-से लोगों ने पढ़ी और कहा जाता है कि वे हमेशा पत्रव्यवहार मलयालम में ही करते थे।

डच पंडितों में बहुत-से गवेषक भी होते थे। उनमें एक सेनापति था

जिसने मलबार राज्य की औषधियों पर एक गवेषणात्मक ग्रंथ लिखा। लेखक का नाम वानरीड था। उसकी पुस्तक "Hortus Malabaricus" (मलबार की औषधियाँ) हालैण्ड में छापी गयीं। इस पुस्तक में औषधियों के नाम संस्कृत, अरबी, मलयालम और लैटिन में दिये गये हैं, यही इसकी अपनी विशेषता है। लेखक ने पुस्तक की भूमिका में लिखा है कि ग्रंथ की रचना में इस देश के दो तीन वैद्यों ने अच्छी मदद पहुँचायी है।

कोश और व्याकरण

१८वीं सदी में विदेशों से बहुत-से लोग केरल में आये, उनमें से पुरोहितों ने केरली भाषा सीखकर उसकी श्रीवृद्धि के लिए बड़ा महत्त्वपूर्ण कार्य किया। उनमें प्रमुख स्थान अर्णोस, अंजलो फ्रान्सीस, पौलिनोस, क्लमन्ट आदि को देना चाहिए। पादरी अर्णोस हंगरी के रहनेवाले थे। सन् १७०० में उन्होंने केरल में आकर मलयालम और संस्कृत का अध्ययन अच्छी तरह किया। वे इतने प्रतिभासंपन्न थे कि मलयालम में सरल कोमल कविता भी लिखने लगे। एक विदेशी धर्म-पुरोहित का पाण्डित्य तथा कविता में रुचि देखकर यहाँ के लोग अचरज में डूब जाते थे और उनकी बड़ी इज्जत करते थे। चतुरन्त्यम्, नालु पर्वङ्ङल, मिशिदाचरित्रम्, आत्मानुतापम्, दैवमातृ-चरितम्; इन काव्यों के अलावा उन्होंने मलयालम में एक कोश और एक व्याकरण की रचना भी की थी। आध्यात्मिक ग्रंथों में वसिष्ठ-सारम्, वेदान्तसारम्, अष्टावक्रगीता आदि ग्रंथ प्रधान हैं। ये सब ग्रंथ रोम के राजकीय ग्रंथालय में पाये जाते हैं। पौरस्त्य संस्कृति पर भी उन्होंने लैटिन भाषा में पुस्तकें लिखी हैं।

इटली देशवासी, ईसाई धर्म के पुरोहितवर्य अंजलों फ्रान्सीस ने केरल के लोगों से मिल-जुलकर मलयालम की बोलचाल की भाषा पर अच्छा अधिकार कर लिया। विदेशी लोगों को मलयालम सिखाने के उद्देश्य से उन्होंने एक व्याकरण रचा जिसका बड़ा प्रचार हुआ। आजकल वह पुस्तक अप्राप्य है।

पादरी पौलिनोस का जन्म आस्ट्रिया में हुआ। सन् १७७७ में वे केरल में आये और संस्कृत, मलयालम आदि भाषाओं में अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया। तिरुवितांकूर नरेश रामवर्मा के राज्यकाल में जो घटनाएँ हुईं उनका वर्णन उन्होंने अपनी "Voyage to East Indies" नामक पुस्तक में बड़े विस्तार से किया है।

नौ वर्ष में उन्होंने त्रेसियाचरितम्, देवषड्गुणम्, ये दो काव्यग्रंथ, कूदाशप्पुस्तकम्, आठ दिन का ध्यान, दिव्य ज्ञानलब्धि का मार्ग और एक व्याकरण ग्रंथ मलयालम में लिखकर इसकी बड़ी सेवा की। मलयालम भाषा की करीब सौ लोकोक्तियों और कहावतों का संग्रह उन्होंने किया और उनका अनुवाद भी लैटिन भाषा में कर डाला।

क्लमन्ट पादरी की 'संक्षेप वेदार्थ' पुस्तक का ईसाइयों के बीच बड़ा प्रचार हुआ। उन्होंने दूसरे पुरोहितों के समान मलयालम में एक कोश भी बनाया। कहते हैं कि मलयालम में सबसे पहले जो कृति छापी गयी वह क्लमन्ट की 'संक्षेप वेदार्थ' है। संक्षेप में कहा जाय तो इन पुस्तकों की गद्य शैली सरल और आकर्षक है। कोई भी आसानी से इनका अर्थ समझ सकता है।

अन्य कृतियाँ

हम देखते हैं कि ईसाई धर्मप्रचारकों ने मलयालम भाषा की गद्य-शाखा को समुन्नत करने के लिए अथक यत्न किये। ऊपर कहे हुए विदेशियों के अतिरिक्त देश के कई ईसाई धर्मप्रचारकों ने सामान्य जनता को शिक्षित बनाने की भी चेष्टा की थी। देशीय लेखकों में औसेप्पु मेत्रान, तोम्मा कत्तनार का नाम लिया जाता है। औसेप्पु मेत्रान ने रोम जाकर वहाँ के विश्वविद्यालय में ग्यारह वर्ष तक गहरा अध्ययन किया और पी० एच० डी० आदि ऊँची-ऊँची उपाधियाँ प्राप्त करके वे अपने देश लौटे। अपने धर्म के अनुयायियों में शिथिलता देखकर उन्हें अतीव दु:ख हुआ। उसे दूर करने के लिए उन्होंने 'वेदतर्क्कम्' ग्रंथ उज्ज्वल तथा गंभीर शैली में लिखा। पाश्चात्य लेखकों की गद्यशैली का अनुसरण उन्होंने भी किया। युक्तियों के साथ

उन्होंने अन्धविश्वास का खंडन किया। इस ग्रंथ में लेखक द्वारा एक नवीन शैली का आविष्कार किया गया है। उनके मित्र तोम्मा कत्तनार ने 'वर्त्त-मानप्पुस्तकम्' रचकर केरली की महत्त्वपूर्ण सेवा की। इस पुस्तक में यात्रा सम्बन्धी कई रोमांचकारी घटनाओं का वर्णन अजीब शैली में किया है। इस तरह की पुस्तक पहले पहल लिखी गयी है। वे दोनों मित्र जब रोम जा रहे थे, रास्ते में कई मर्मस्पर्शी घटनाएँ हुईं। उनका विवरण इस पुस्तक के द्वारा मिलता है। उसे पढ़कर लोग बहुत प्रसन्न हुए और उस पुस्तक ने लोगों के हृदय पर गहरी छाप डाली। भाषा तथा साहित्य की दृष्टि से यह ग्रंथ अति उच्च माना जाता है। कहीं-कहीं ग्रामीण शैलियों का आभास इसमें मिलता है, पर इससे ग्रंथ की महिमा जरा भी कम नहीं हुई है।

इसी अवसर पर एक ऐतिहासिक ग्रंथ का निर्माण हुआ, जिसका नाम 'केरल पलमा' है। पुर्तगालियों के आगमन के बाद केरल के ऐतिहासिक क्षेत्र में जो परिवर्तन हुए उनका सुन्दर चित्र इसमें खींचा गया है। लेखक अज्ञातनामा है। पुस्तक की शैली को देखकर ऐसा मालूम पड़ता है कि इसे किसी ईसाई पण्डित ने लिखा होगा। "वेलुत्तंपी की घोषणा" का गद्य भी उज्ज्वल है। देश-प्रेम इसमें कूट-कूट कर भरा है।

वेलुत्तंपी उस समय के प्रमुख देशभक्तों में थे। वे तिरुवितांकूर राज्य के दीवान थे। अंग्रेज लोगों का अत्याचार देखकर उनसे न रहा गया, उनके विरुद्ध वे षड्यंत्र रचने लगे। तब अंग्रेजों ने उन्हें पकड़ने के लिए एक प्रबल सेना भेजी। उस समय अपने लोगों में देशभक्ति पैदा करने और विदेशियों को इस राज्य से भगाने के लिए उन्होंने आह्वान किया। उसे "वेलुत्तंपी की घोषणा" कहते हैं। इस घोषणा में अंग्रेजों की शरारतों और कुटिल नीति का चित्रण किया गया है। इससे यह अन्दाज लगाया जा सकता है कि उस समय की गद्यशैली परिपूर्ण थी। फिर भी राजनीतिक परतन्त्रता के कारण भाषा की प्रगति में रुकावट हुई। वास्तव में सभी क्षेत्रों की शिथिलता की जड़ जनता की गुलामी है। भारत में सामान्य जनता के कर्त्ता-धर्त्ता राजा लोग तथा उनके दरबारी कवि और पंडित होते थे। अतः साहित्य

क्षेत्र में उस समय यानी १८वीं सदी तक साधारण लोगों का कोई हाथ नहीं था। इसीलिए जनता की भाषा की प्रगति में उत्साह या स्फूर्ति नहीं दिखाई पड़ी। किन्तु पाश्चात्य लोग जन-तंत्र प्रणाली के अनुसार राजकार्य चलाते थे। गद्य को उनके देश में प्रमुख स्थान दिया गया था। अतएव भारतीय भाषाओं के गद्य की अपेक्षा पाश्चात्य भाषाओं के गद्य के विकास में यथेष्ट उन्नति हुई।

बारहवाँ अध्याय

उत्तरास्वयंवरम् तथा रावणविजयम्

कुंचन नंप्यार के बाद कई वर्ष तक मलयालम-साहित्य सुप्तावस्था में पड़ा रहा। इसके कारण कई हैं। सबसे प्रधान यह है कि नंप्यार के समान मेधावी, सरस, अनुभवसंपन्न तथा सर्वतोमुखी प्रतिभा रखनेवाले व्यक्ति बहुत अर्से के बाद ही पैदा होते हैं। दूसरा कारण है यहाँ का राजनीतिक वातावरण, जो साहित्य-सर्जन के लिए अनुकूल नहीं था। दक्षिण भारत में टीपू सुलतान आसपास के राज्यों पर अपना आतंक जमाने में तुला रहता था। उस समय फ़ान्सीसी और अन्य लोग अपनी-अपनी सत्ता जमाने के लिए स्थानीय नरेशों का पक्ष लेने लगे थे। टीपू सुलतान ने मलबार पर धावा बोल दिया। मलबार और कोच्चि से धनी, मानी, कुलीन, पंडित आदि बहुत से लोग अपना-अपना घर छोड़कर तिरुवितांकूर नरेश के शरणागत बन गये। उनमें ऐसे बहुत-से महान् व्यक्ति थे जो सुन्दर कविता तथा नाटक आदि रचकर भाषा का विकास कर सकते थे। किन्तु अशान्त वातावरण में यह सब कैसे हो सकता था ?

अंग्रेजी शासन का प्रभाव

टीपू तिरुवितांकूर की सीमा पर अपनी अगणित सेना के साथ आ गया। तब वहाँ के नरेशे रामवर्मा को लाचार होकर विदेशी शक्ति अंग्रेजों से संधि करनी पड़ी। धीरे-धीरे अंग्रेजों के पैर जमने लगे। उन्होंने अपने स्वार्थ के लिए बहुत-से काम किये, जिन्हें देखकर देशप्रेमियों को अतीव दुःख हुआ। जब रामवर्मा का निधन हुआ तो गद्दी पर बाल रामवर्मा

नामक एक निर्बल राजा बैठा। इससे अंग्रेज बहुत तानाशाह बन गये। वे स्थानीय जनता को क्रीतदास के समान समझने लगे। यह देखकर केरल के उत्तर भाग में पषश्शि केरल वर्मा और दक्षिण में वेलुत्तम्पी दळवा अंग्रेजों के विरुद्ध उठ खड़े हुए। कहा जाता है कि वेलुत्तंपी दळवा ने कुछ अंग्रेजों को एक नदी में डुबाकर मरवा डाला। यह खबर पाकर अंग्रेज तिलमिला उठे। वेलुत्तंपी को पकड़ने के लिए उन्होंने एक प्रबल सेना भेजी। उसी समय तंपी ने देशभक्तों को एकत्र करने के लिए एक घोषणा की, जिसके सम्बन्ध में पहले लिखा जा चुका है।

खेद है कि अंत में वे दोनों देशभक्त, पषश्शि राजा और वेलुत्तंपी, अंग्रेजों के नृशंस व्यवहार के शिकार बन गये। यह नतीजा देखकर यहाँ के देशप्रेमी जनों के हृदय में अपार दुःख हुआ। भाव यह है कि सन् १८१० तक यहाँ का वातावरण निष्क्रिय बन गया था। लोग निर्जीव तथा निर्वीर्य से हो गये थे। टीपू के आक्रमण से केरल के सांस्कृतिक क्षेत्र में बड़ी क्षति हुई और अंग्रेजों की अचिन्तित विजय से यहाँ की अवस्था और भी बिगड़ गयी।

हमारे देशी राज्यों के छोटे-छोटे नरेशों की आपसी फूट से अंग्रेज आसानी से यहाँ एक विशाल साम्राज्य स्थापित करने में सफल हो गये। सामान्यतः ऊपर-ऊपर से एक प्रकार की शान्ति हो गयी। सहृदयों द्वारा अनुकूल समय पाने पर साहित्यिक कृतियों की रचना आरम्भ हो गयी। सन् १८१० से १८२९ तक तिरुवितांकूर राज्य में लक्ष्मीबाई और पार्वतीबाई नामक दो रानियाँ शासन करती थीं। उस समय कर्नल मनरो तिरुवितांकूर और कोच्चि का दीवान था। उसने अपनी अंग्रेजी सरकार को सुदृढ़ करने के कई उपाय किये। साथ ही साथ स्थानीय जनता की उन्नति के लिए भी कोई काम उठा न रखा। सबसे पहले उसने लोगों को शिक्षा देने के लिए कई स्कूल खोले जहाँ प्रान्तीय भाषाएँ भी सिखायी जाती थीं। अंग्रेजी को पाठ्यक्रम में स्थान दिलाया गया। जो लोग उन स्कूलों से सफल होकर बाहर निकले, उन्हें सरकार ने विविध विभागों में नियुक्त कर दिया।

इससे प्रेरणा पाकर बहुत-से विद्यार्थी स्कूलों में भर्ती होने लगे। अंग्रेजी के प्रति लोग आर्कषित हुए।

इस वातावरण में भाषा की गद्य-शाखा अंग्रेजी के ढंग पर विकसित हुई। विदेशी ईसाई धर्म-प्रचारकों ने कोट्टयम और नागरकोबिल नामक स्थानों में स्कूल तथा कालेज खोले। उन्होंने रानियों से बहुत मदद प्राप्त की। उन लोगों ने जो स्कूल तथा कालेज खोले वे सब आगे चलकर अंग्रेजी शिक्षा के केन्द्र बन गये।

रानियों के देहान्त के पश्चात् उनके उत्तराधिकारी तिरुवितांकूर नरेश स्वाति-नक्षत्रज ने अंग्रेजी शिक्षा को बड़ा प्रोत्साहन दिया। उन्होंने राजधानी में हाईस्कूल, ग्रंथालय और छापाखाने स्थापित किये। नरेश ने एक मलयालम अंग्रेजी कोश का निर्माण करने की प्रेरणा दी। फलस्वरूप बंचिमिन बोयिली ने 'मलयालम-अंग्रजी' और 'अंग्रेजी-मलयालम' कोश का निर्माण किया। उसी समय जोसफ पीट नामक धर्म-पुरोहित ने मलयालम-व्याकरण रचा और अंग्रेजी पुस्तक "Pilgrim's Progress" का मलयालम में रूपान्तर किया। सन् १८४० में ईसाई धर्म का प्रचार करने के उद्देश्य से मलयालम भाषा में एक अखबार निकाला गया, उसका नाम है विज्ञान-निक्षेप। कहते हैं कि यह मलयालम भाषा का पहला समाचारपत्र था।

इस समय प्रतिभासंपन्न, सरस गायक, कविमणि नरेश स्वाति-नक्षत्रज मलयालम साहित्य-नभोमण्डल के उज्ज्वल मार्तण्ड बन गये। कलाकार, गायक, गान-रचयिता के रूप में वे बड़े प्रसिद्ध हुए। हिन्दी में भी उन्होंने कई भजन लिखे हैं, जिनका प्रचार इस क्षेत्र में खूब हुआ। कई भाषाएँ वे जानते थे। कर्णाटक गीतों का भी उनको विशेष ज्ञान था। उन्होंने असंख्य गीत स्वयं भी रचे हैं। अभी उनके गीत पढ़ाने के लिए एक खास संगीत विद्यालय खोला गया है। भारत के भिन्न-भिन्न प्रान्तों से पंडित लोग उनके पास आते थे। विद्वानों की एक मण्डली उन्होंने स्थापित की थी, जिसके प्रधान सदस्य इरयिम्मन तंपी और किलिमानूर निवासी प्रसिद्ध विद्वान् कोयित्तंपुरान थे।

तंपी के सरस गीत

इरयिम्मन तंपी सन् १७८३ में उत्पन्न और १८५६ में गोलोकवासी हुए। वे संगीत शास्त्र के गंभीर पंडित और ज्ञानसागर थे। उन्होंने सैकड़ों सरस गीत रचकर साहित्य की बड़ी सेवा की। उनके गीतों में से एक लोरी केरल प्रान्त का बच्चा-बच्चा जानता है। उसे गाकर लोग आनन्दसागर में डुबकियाँ लगाते हैं। उसी रचना से वे कवितिलक बन गये। उनके और भी कई गीत लोकप्रिय हैं जो शृंगार रसप्रधान हैं। उनके गीतों की सरलता, कोमलता, अर्थयुक्तता, लय-विशेषता आदि की सराहना के लिए शब्द नहीं मिलते। सुकोमल गीतों की रचना में कोई भी उनकी बराबरी अभी तक नहीं कर सका। उनसे पहले 'कथकळि' में बहुत-से ग्रंथ रचे गये थे। किन्तु उनके आगमन तथा रचनाओं से कथकळि साहित्य में उमंग, चैतन्य और स्फूर्ति आ गयी। कथकळि के ग्रंथों में मुख्य 'कीचकवधम्', 'उत्तरास्वयंवरम्', 'दक्षयागम्' आदि हैं। इसमें उत्तरास्वयंवरम् के गीत अत्यन्त उत्कृष्ट हैं। उसके गीत केरल के अधिकांश सहृदयों ने कंठस्थ कर लिये हैं। इनकी भाव-पेशलता और अलंकार-योजना देखकर पाठक दंग रह जाते हैं।

इनके अतिरिक्त उण्णयि वारियर की कृति से ही कथकळि साहित्य में अमर स्थान पाया है। वारियर की कृतियों में जो आशय-गंभीरता, पात्र-रचना, कथा का संगठन तथा एकाग्रता दिखाई पड़ती है वह तंपी की कृतियों में नहीं पायी जाती। तो भी तंपी के समान शब्द-चयन की कुशलता और किसी की कविता में नहीं है, यह बात सब सहृदय लोग एकमत से मानते हैं।

उत्कृष्ट काव्य रावणविजयम्

किळिमानूर निवासी विद्वान् कोयित्तंपुरान राजा स्वातिनक्षत्रज के बचपन के मित्र थे। सन् १८२३ में उनका जन्म हुआ और कुल तैंतीस वर्ष के बाद वे स्वर्गधाम चले गये। इस स्वल्प समय में एक उज्ज्वल नक्षत्र के समान चारों ओर उनकी चमक फैल गयी। छोटी-सी उम्र में उन्होंने

संस्कृत भाषा में बड़ा पांडित्य प्राप्त कर लिया। संगीत में उनकी विशेष रुचि थी। उनकी उच्च कृति 'रावणविजयम्' मलयालम भाषा-योषा का कण्ठहार बन गयी है। रावण को किसी भी कवि ने इसके पहले उत्तम कथा-नायक के रूप में वर्णित नहीं किया है। प्रस्तुत कवि ने रावण को शूरवीर तथा उत्तम शिव-भक्त के रूप में इस कृति में प्रस्तुत किया है। अब हम देख सकते हैं कि रावण को मलयालम तथा तमिल के कई कवियों ने उत्तम नायक के रूप में उपस्थित किया है। भाव तथा आशय की गंभीरता में तंपी की रचनाएँ 'रावणविजयम्' की तुलना में नहीं आ सकतीं।

'सन्तानगोपालम्' इनकी एक और रचना है जिसमें कवि की कुशलता, सुन्दर काव्यशैली, बुराइयों की आलोचना करने की सामर्थ्य आदि का आभास पाया जाता है। कुंचन नंप्यार के निधन के बाद और कोई भी इनके समान 'तुल्लल' पद्धति में कविता रचने में समर्थ नहीं हुआ है। ऐसे बहुत-से मर्मस्पर्शी प्रसंगों का इन्होंने वर्णन किया है जिनमें अस्वाभाविकता, कृत्रिमता न हो। हास्य-रसप्रधान कविताओं के निर्माण में भी ये नंप्यार से पीछे नहीं हैं।

स्वातिनक्षत्रज तिरुवितांकूर नरेश की मृत्यु के बाद उनके उत्तराधिकारी ने कथकळि ग्रंथों का संग्रह, स्वातिनक्षत्रज की कृतियों आदि का प्रकाशन अच्छे ढंग से किया। इस समय बहुत-से गीत विविध शैलियों में लिखे गये। परंतु कवित्व की दृष्टि से वे उत्तम नहीं माने जाते। आध्यात्मिक तत्त्वों पर भी बहुत-सी रचनाओं का निर्माण हुआ। किन्तु एषुत्तच्छन की कविताओं के सामने ये नीरस ही हैं। कल्लयिक्कुलङङर रामप्पिषारटि ने सेतुमाहात्म्यम्, वेतालचरितम् आदि कृतियाँ रचीं। एषुपत्तु नाणुक्कुट्टि मेनोन ने भागवतम् और श्रुतिगीता लिखकर आध्यात्मिक तत्त्वों का प्रचार किया।

इस समय की सामाजिक स्थिति बुरी नहीं थी। वर्तमान काल के समान आर्थिक क्षेत्र में देश पिछड़ा हुआ नहीं था। किसान संपन्न नहीं थे, तो भी अपनी आमदनी से वे यथेष्ट तृप्त रहते थे। पूँजीपति और मजदूरों में परस्पर

ईर्ष्या भाव नहीं था। वे एक दूसरे पर निर्भर रहते थे। जमींदारी व्यवस्था दृढ़ थी। किसान लोग ऐसी जमीनों पर खेती करते थे और उपज का एक अंश जमीन्दारों को प्रसन्नतापूर्वक दिया करते थे। संक्षेप में कहा जाय तो उस समय लोग सुस्ती से दिन काटते थे। उमंग तथा आवेश लेशमात्र भी नहीं दिखाई पड़ता था।

तेरहवाँ अध्याय

अंग्रेजी शिक्षा का प्रचार

इस काल में अंग्रेजी शिक्षा के प्रचार का बड़ा आयोजन किया जा रहा था। तिरुवितांकूर के समान कोच्चि तथा मलबार में कई स्कूल खोले गये जहाँ अंग्रेजी की पढ़ाई जोरों पर होने लगी। कोच्चि राज्य के दीवान वेंकट सुब्बय्यर ने प्रत्येक तहसील में मातृभाषा तथा अंग्रेजी के स्कूलों की स्थापना की।

शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी

केरल में ही नहीं, भारत के सभी प्रान्तों में अंग्रेजी शिक्षा प्रचलित हो रही थी। बंगाल में राजा राममोहन राय जैसे नेताओं ने भी अंग्रेजी शिक्षा का खूब प्रचार किया। यद्यपि बहुत-से लोग उनके विरुद्ध थे तो भी सरकार के अंग्रेज अफसर इसके लिए अनुकूल थे। फलतः अंग्रेजी शिक्षा का माध्यम और अदालत की भाषा बन गयी। सन् १८४४ में भारत सरकार ने विज्ञप्ति प्रकाशित कर सरकारी नौकरियों के लिए अंग्रेजी का ज्ञान अनिवार्य कर दिया।

प्रान्त-प्रान्त के बड़े शहरों में उच्च विद्यालय स्थापित किये गये। तीन विश्वविद्यालयों की स्थापना कलकत्ता, बंबई तथा मद्रास में हुई। इसके पहले ही मलबार के कालिकट, तलश्शेरी, मंगलापुरम् आदि स्थानों में तरह-तरह के विद्यालय खुल गये थे। बासल-मिशन के प्रवर्त्तकों ने इस विषय पर मलबार में ठोस काम किया। उन्होंने अपने प्रेस से कई ग्रंथ छपवाकर प्रकाशित किये, उनमें साहित्य ग्रंथ भी थे। कोच्चि राज्य में स्थित कुन्नमकुलम को ईसाई धर्म के प्रचारकों ने एक शिक्षाकेन्द्र बनाकर शिक्षा-क्षेत्र में प्रचर काम किया।

डा० गुण्डर्ट का मलयालम-कोश

इस समय के महत्त्वपूर्ण ग्रंथों में प्रथम स्थान डाक्टर गुण्डर्ट के कोश को देना चाहिए। डा० गुण्डर्ट ईसाई-धर्म का प्रचार करने के उद्देश्य से सन् १८३८ में केरल आये थे। भिन्न-भिन्न भाषाएँ पढ़ने में उनकी रुचि अद्‌भुत थी। मलयालम, तेलुगु, तमिल, कन्नड़ जैसी द्राविड़ भाषाएँ उन्होंने अच्छी तरह सीख लीं। लोगों के आचार-विचार, दंतकथाओं आदि का ज्ञान भी जनता के निकट संपर्क से उन्हें हुआ। सरकार ने नवीन शिक्षा-पद्धति के अनुसार विद्यार्थियों के लिए पाठ्यक्रम निर्माण करने का भार उन पर सौंपा। तब उन्होंने स्कूलों में बच्चों के लिए 'पाठमाला' और 'मलयालम व्याकरण' की रचना की। अच्छा कोश लिखने का विचार भी उनके मन में अंकुरित हुआ। इसलिए दस वर्ष के अनवरत प्रयत्न के फलस्वरूप उन्होंने एक मलयालम-कोश लिखा और वह १८७२ में प्रकाशित किया गया।

इस कोश में शब्दों की उत्पत्ति, अर्थ-भेद, आलंकारिक अर्थ, उच्चारण की रीति आदि विविध पहलुओं पर प्रकाश डाला गया। उस समय के स्थानीय प्रकांड पंडितों ने ऐसे किसी कोश की कल्पना भी न की होगी। इस ढंग के कोश का निर्माण-कार्य एक विदेशी जर्मन पंडित से हो सका, यह बड़े अचंभे की बात है। इसी को देखकर कुछ पंडितों ने और एक कोश भगीरथ प्रयत्न करके तैयार किया। प्राचीन कृतियों का अध्ययन करने के लिए यह कोश बहुत अच्छा सहायक है।

चौदहवाँ अध्याय

कविवर्य कोयित्तंपुरान

सन् १८६० और १९२४ के बीच में तिरुवितांकूर राज्य की गद्दी पर तीन प्रतिभाशाली राजा आसीन हुए। उस समय मलयालम भाषा की उन्नति काफी सन्तोषजनक थी।

पाठ्य पुस्तकों की रचना

प्रथम राजा आयिल्यम तिरुनाल ने अपने दीवान की सहायता से भाषा की प्रगति के लिए अनेक कार्य किये। राजा ने स्वयं ग्रंथ लिखे और पंडितों को अपने दरबार में सम्मान के साथ रखकर उनसे कई ग्रंथ लिखवाये। राजा ने स्वयं भी 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' का अनुवाद मलयालम में स्वतंत्र रूप से किया। उनके भाई विशाखा-नक्षत्रज ने चार-पांच ग्रंथ रचकर भाषा के भंडार को परिपुष्ट किया। इस अवसर पर स्कूलों में पढ़ाने के लिए पाठ्य-पुस्तकों का बड़ा अभाव था। अतएव डा० गुण्डर्ट की पद्धति के अनुसार कई भाषा-पंडितों ने पाठ्य पुस्तकें रचीं, किन्तु पूर्ण रूप से सफलता न मिली। तब उस समय के नरेश तथा दीवान ने मिलकर एक विज्ञापन निकाला कि जो विद्वान् अच्छी-अच्छी पुस्तकें लिखेंगे उनको योग्यता के अनुसार पुरस्कार दिया जायगा। इस घोषणा से बहुतेरे लेखकों को ग्रंथ लिखने का प्रोत्साहन मिला। इसके अतिरिक्त पाठ्य-पुस्तकें तैयार करने वाली एक समिति का संगठन कर उसका भार प्रमुख पंडितों पर सौंपा गया।

कहते हैं कि उक्त अच्छी पुस्तकों की प्रतियोगिता में एक ईसाई पुरोहित जार्ज मात्तन विजयी हुए। उनके गद्य-निबन्ध पर इनाम दिया गया।

उन्होंने अंग्रेजी शैली के अनुसार यह पुस्तक लिखी थी। 'बालाभ्यसनम्' और मलयालम-व्याकरण इनके और दो ग्रंथ उत्तम माने गये थे। गद्य में रचयिता की आकर्षक शैली सब को पसन्द आ गयी। पाठ्य पुस्तक-समिति का कार्य अबाध रूप से चल रहा था। संयोग से सब से पहले समिति के सदस्य के रूप में वलिय कोयित्तंपुरान् ने स्तुत्य कार्य किया। फिर उन्होंने अध्यक्ष बनकर दिन रात भाषा की वृद्धि के लिए महत्त्वपूर्ण सेवा की।

उस समय विद्यार्थियों की योग्यता के अनुसार पाठ्य पुस्तकें तैयार करना अत्यन्त कठिन कार्य था। अतः दो या तीन साल के अथक प्रयत्न के फलस्वरूप कोयित्तंपुरान् ने विविध कक्षाओं के लिए पहली, दूसरी, तीसरी पुस्तिका, विज्ञानमंजरी, तिरुवितांकूर और भारत का इतिहास, भूगोल-शास्त्र, धनतत्त्व-निरूपण आदि पुस्तकें रचीं। यद्यपि समिति में दूसरे सदस्य थे तो भी तंपुरान का हाथ इसमें सबसे अधिक था। ये सब पुस्तकें अंग्रेजी शैली के अनुसार गद्य में लिखी गयी थीं। तंपुरान ने अंग्रेजी का गहरा अध्ययन किया था और गोरे अंग्रेज-पंडितों की संगति से उनका अंग्रेजी ज्ञान और भी विकसित हो गया था। संस्कृत तथा मलयालम पर उनका बड़ा अधिकार था। सत्रह वर्ष की अवस्था में उन्होंने एक काव्य ग्रंथ रचा था। यौवनावस्था में रचे उनके प्रौढ़ ग्रंथों को पढ़कर सहृदयों ने निर्विवाद रूप से उद्घोषित किया है कि आ-सेतु हिमाचल तंपुरान के समान संस्कृत में कविता रचनेवाला कोई व्यक्ति उस समय नहीं हुआ।

साठ पुस्तकों के रचयिता

मलयालम के संबंध में कहा जाय तो वे इस भाषा के उद्भट आचार्य माने जाते थे। सबसे पहले इसमें नाटक की रचना उनके प्रयत्नों से ही हुई। एकांकी नाटक भी उन्होंने लिखे। शाकुन्तल का मलयालम अनुवाद उत्तम सिद्ध हुआ है। उसी ढंग पर दूसरे कई कवियों ने संस्कृत से मलयालम में नाटकों का अनुवाद किया है।

सन्देश-काव्यों में उनके 'मयूरसन्देश' की अपनी अनेक विशेषताएँ हैं।

स्वभावोक्ति अलंकार इसमें प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। उन्होंने अनवसर-प्रयुक्त एक भी शब्द का प्रयोग नहीं किया है। संस्कृत में करीब उन्तीस और मलयालम में लगभग बत्तीस पुस्तकें गद्य पद्य में लिखकर तंपुरान ने भाषा साहित्य में एक युग की सृष्टि की है। उनके उपन्यास, निबन्ध, जीवनियाँ, लघु कथाएँ सभी उच्च स्तर के हैं। निबन्धों में मनुष्यत्व का महत्त्व (Human greatness), देहरक्षा, विद्याभ्यासम्, दीनसंरक्षणम्, सत्यम् आदि बहुत प्रसिद्ध हैं।

विशाखा नक्षत्रज राजा के शासन-काल में वलिय कोयित्तंपुरान की कीर्त्ति और भी बढ़ी। इससे पहले तंपुरान की स्थिति अच्छी नहीं थी। शासकों को मिथ्या सूचना मिलने के कारण तंपुरान को बन्दी की अवस्था में रहना पड़ा था। उसी समय उनका प्रसिद्ध 'मयूरसन्देश' काव्य लिखा गया था। किन्तु विशाखा नक्षत्रज राजा ने तंपुरान की सहायता तन, मन, धन से की। तंपुरान ने भी अपना सारा जीवन मातृभाषा की पुष्टि के लिए एक तपस्वी के समान बिताया। उनके स्वभाव के बारे में लोग कहते हैं कि वे निःस्वार्थता की सजीव मूर्ति थे। वे हमेशा लिखा करते थे कि यदि दूसरों की भलाई के लिए यह शरीर काम में न आये तो जन्म लेने से क्या प्रयोजन ? उनके समय कविता-क्षेत्र में बड़े आन्दोलन हुए।

द्वितीयाक्षर प्रास

तंपुरान द्वितीयाक्षर-प्रास (तुकान्त रचना-पक्ष) के अधिक अनुकूल थे और कहते थे कि यदि द्वितीयाक्षर-प्रास का प्रयोग किया जाय तो कविता और भी चमकेगी। इस पक्ष में अन्य बहुत-से पंडित मिल गये और इस पद्धति के अनुसार काव्य-ग्रंथ भी रचे गये। किन्तु उनके भानजे प्रतिभासंपन्न पंडितवर्य राज राजवर्मा उनके विपक्ष में थे। उनके भी अनुयायी हुए। सरस गायक, कवि-तिलक के० सी० केशव पिल्ले इस विपक्ष में मुख्य थे। उन्होंने श्रीकृष्ण-विषयक एक प्रबन्ध काव्य रचकर वलिय कोयित्तंपुरान की युक्तियों का खंडन किया।

बहुत समय तक यह आन्दोलन चलता रहा। अन्त में अपनी-अपनी इच्छा के अनुसार कविताएँ रचने का निश्चय किया गया। उस दिन से अनुप्रास, वृत्त आदि का गठ-बन्धन नहीं रहा।

कहा जाता है कि इस महान् विभूति का जन्म सन् १८४५ में हुआ था और लगभग उनहत्तर वर्ष के बाद इस संसार से तिरोधान हुआ।

इतिहास व्याकरणादि ग्रन्थों की रचना

वलिय कोयित्तंपुरान के समकालीन 'पाच्चु मूत्तत' ने भाषा को अमर बनाने का पर्याप्त यत्न किया। वे संस्कृत के प्रकांड पंडित और कई संस्कृत पुस्तकों के लेखक थे। उन्होंने तिरुवितांकूर राज्य का इतिहास लिखकर उस ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट किया। इसके पहले इस राज्य का समूचा इतिहास किसी ने नहीं लिखा था। एक गवेषणात्मक ग्रंथ के रूप में भी इसका स्थान ऊँचा है। इस ग्रंथ के अलावा मूत्तत ने बालभूषणम्, केरल भाषा-व्याकरण, केरल विशेष-माहात्म्य, आत्मकथासंक्षेप आदि मौलिक ग्रंथ रचकर ख्याति प्राप्त की। वे वैकम के निवासी थे और कोच्चि तथा तिरुवितांकूर राज्य के दरबार में कई साल रहे थे। अंग्रजी में वे पंडित होते तो उनका नाम और भी चमत्कृत होता।

इसी समय उत्तर केरल-निवासी कोवुण्णि नेटुङ्ङाट ने एक व्याकरण ग्रंथ 'केरलकौमुदी' लिखा जो ऐसे अन्य ग्रंथों में सर्वश्रेष्ठ कहा जाता है। व्याकरण ज्ञान पाने के अभिलाषियों के लिए इसका अध्ययन करना अनिवार्य है। ग्रंथकार ने कई मुक्तक श्लोक भी रचे हैं जो शृंगार रसप्रधान हैं।

मलयालम भाषा के प्रथम इतिहास रचयिता के रूप में पंडितश्रेष्ठ श्री गोविन्दप्पिल्ला का नाम बड़े आदर से लिया जाता है। बी० ए० उपाधि पाने के बाद वे अध्यापक हो गये थे। तिरुवनन्तपुरम् राजधानी के ग्रंथालयों में पुराने लेखों की गवेषणा करके इन्होंने प्रस्तुत ग्रंथ की रचना की है। प्राचीन कवियों की कविताओं तथा जीवनियों पर यह ग्रंथ अच्छा प्रकाश डालता है। दूसरी उनकी महत् कृति रोम (Rome) का इतिहास है। अंग्रेजी में भी

उन्होंने एक पुस्तक लिखी है जिसका नाम है "A Handbook of Travancore." अनुसंधान करनेवाले विद्यार्थियों के लिए इनका 'इतिहास' कल्पतरु के समान है।

उत्तर केरल में प्रकाशित पुस्तकों में अच्युतप्पणिक्कर के हरिश्चन्द्र-चरितम्, 'मुहम्मदचरितम्' ये दो प्रधान ग्रंथ हैं। कोवुण्णि नेटुङ्ङाटि की व्याकरण रचना के बीस वर्ष बाद केरल वर्मा वलिय कोयित्तंपुरान के भानजे ए० आर० राजराजवर्मा ने भी एक व्याकरण ग्रंथ रचा, जिसकी प्रामाणिकता की सब लोग प्रशंसा करते हैं। उन्होंने अंग्रेजी, संस्कृत आदि ग्रंथों का गहरा अध्ययन तथा अनुसंधान करके इसको लिखा है। अलंकार, वृत्त आदि पर भी उन्होंने प्रामाणिक ग्रंथ लिखे हैं। भाषाभूषणम्, साहित्य-सारम्, वृत्तमंजरी आदि रचनाओं द्वारा उन्होंने मलयालम भाषा को समृद्ध बनाया। इन ग्रंथों को बिना पढ़े कोई मलयालम का पंडित नहीं बन सकता। अलंकार के लक्षण और उदाहरण सुन्दर कविता में इन्होंने समझाये हैं। जब तक मलयालम भाषा पृथ्वी पर रहेगी तब तक ए० आर० राजराजवर्मा का नाम अमर रहेगा।

पन्द्रहवाँ अध्याय

मलयालम पत्र-पत्रिकाएँ

तिरुवितांकूर नरेश स्वातिनक्षत्रज के देहान्त के बाद श्रीमूलम तिरुनाल् गद्दी पर बठे। उनमें अपने पूर्वजों के समान साहित्य की ओर रुचि नहीं थी, अत: उस क्षेत्र में एक प्रकार की शिथिलता आ गयी। तो भी बहुत-से लोग अंग्रेजी का अभ्यास करते थे और अंग्रेजी आलोचना-ग्रंथों के समान पुस्तकें भी लिखने में लगे हुए थे। अंग्रेजी शैली के अनुसार कई निबन्ध भी लिखे गये। विलायत के देशों में पत्र-पत्रिकाओं द्वारा उपन्यास, कथा, निवन्ध आदि की आलोचना होती थी। ऐसी पुस्तकें भी खण्डश: पत्रों में प्रकाशित की जाती थीं। इस प्रकार पत्र तथा पत्रिकाएँ ऐसे ग्रंथों के प्रचार में बहुत उपयोगी सिद्ध होती थीं।

प्रारंभिक पत्र-पत्रिकाएँ

मलयालम में सबसे पहले ईसाई धर्म के कार्यों को प्रकाशित करने के लिए पत्र तथा पत्रिकाओं का आविर्भाव हुआ। पुरोहित गीवरुगीस के संपादकत्व में कोट्टयम सि-एम-एस० प्रेस से 'विज्ञान-निक्षेपम्' नामक एक अखबार निकाला गया। उसके बाद सामान्य जनता की भलाई के लिए गुजरात के एक व्यक्ति ने 'पश्चिम तारका' पत्र का प्रकाशन सन् १८६४ में किया। उन महाशय का नाम था देवजी भीमजी। वह व्यापार, व्यवसाय आदि के साथ-साथ संस्कृति के क्षेत्र में भी दिलचस्पी लेते थे। इस अखबार से धार्मिक वृत्तान्त के अलावा कई अन्य विषयों का भी प्रचार हुआ। इसमें उपन्यास, निबन्ध, लघुकथाओं, जीवनियों आदि का प्रकाशन भी

किया जाता था, जिससे मलयालम की सर्वतोमुखी उन्नति में पर्याप्त सहायता मिली।

'सत्यनादकाहृलम्' का उदय एरणाकुलम् से हुआ। इस अखबार में धर्म संबंधी बातों का प्रकाशन विशेषतः होता था। भीमजी ने १ जनवरी, १८८१ से 'केरलमित्र' निकाला। उसका संपादक वरुगीस माप्पिला एक होनहार और विद्या-संपन्न युवक था। उसके आगमन तथा अनवरत प्रयत्न से 'केरलमित्र' की बड़ी प्रगति हुई। पत्र के संपादन में वरुगीस को एक खास रुचि थी। इसी बीच भीमजी का निधन हो गया, अतः अखबार का प्रकाशन भी समाप्त हो गया।

केरलमित्र के बाद 'केरल पत्रिका' कालिकट से कुञ्ञुराम मेनोन के संपादकत्व में निकली। उसमें वार्ता, रोमांचकारी घटना, पुस्तकों की आलोचना आदि के अलावा कर्मचारियों की कहानियों का भी प्रकाशन होता था। स्वतंत्र रूप से अपना मत प्रकट करने में मेनोन ने बड़ा साहस दिखाया था। 'केसरी' नाम से सुख्यात कुञ्ञुरामन नायनार, प्रसिद्ध उपन्यासकर्ता अप्पु नेट्टुङ्ङाटि, चन्तु मेनोन आदि मनस्वी व्यक्ति इसमें लेख लिखते थे, जिससे इस अखबार का प्रचार केरल में खूब हुआ। राजनीतिक तथा सामाजिक क्षेत्र के संबंध में लिखते समय उनकी कलमें बड़ी तीक्ष्ण हो जाती थीं। हास-परिहास-भरी इसकी शैली पाठकों के लिए बड़ी मनोरंजक थी। विशाखा-नक्षत्रज राजा के प्रोत्साहन से 'विद्याविलासिनी' मासिक पत्रिका प्रकाशित होने लगी, जिसमें उच्च कोटि के बहुत-से निबन्ध पाये जाते थे।

सन् १८८६ से सामाजिक नेता सी० कृष्णपिल्ला के नेतृत्व में 'मलयाली' निकला। उस समय के प्रतिष्ठित युवकों ने विशेष रूप से इसके प्रकाशन में उत्साह दिखाया। तिरुवन्तपुरम् के शिक्षित लोगों ने इसमें अधिक दिलचस्पी ली। उस काल के तानाशाह दीवानों के विरुद्ध आन्दोलन चलाने में इस पत्र ने प्रमुख स्थान ले लिया। निर्भय होकर अफसरों की कड़ी आलोचना इसके द्वारा होती थी।

'दीपिका' का उद्भव

मान्नानम गाँव के ईसाई धर्मपुरोहितों के तत्त्वावधान में 'नस्त्राणि-दीपिका' निकाली गयी। पहले यह धार्मिक कार्यों का प्रचार करती थी। जब सुख्यात देशप्रेमी के० रामकृष्ण पिल्ला इसके संपादक बनाये गये तो इसमें राजनीतिक तथा सामाजिक विषयों पर सुन्दर लेख प्रकाशित किये जाने लगे। पीछे इसका नाम 'दीपिका' रखा गया और वर्तमान काल में दैनिक समाचार पत्र के रूप में इसका बड़ा प्रचार हो रहा है।

पूर्वोक्त केरलमित्रम् के संपादक वरुगीस माप्पिला बाद को सरकारी अफसर बन गये, किंतु फिर वह काम उन्होंने छोड़ दिया। कोट्टयम में रहते समय उन्होंने सन् १८९० में 'मलयालमनोरमा' का प्रथम अंक निकाला। अपनी कुशाग्र बुद्धि से उन्होंने उस समय के प्रतिष्ठित, प्रतिभासंपन्न तथा शिक्षित युवकों का ध्यान अपने पत्र की ओर आकृष्ट किया और सर्वतोभावेन इस पत्र की उन्नति के लिए प्रयत्न होने लगा। सुन्दर, भावपूर्ण कविताएँ, गंभीर निबन्ध, पुस्तकों की टीका-टिप्पणियाँ उसमें प्रकाशित की गयीं। सामाजिक और राजनीतिक कुरीतियों का खंडन बड़ी कठोरता से किया गया। किसी जाति या धर्म के प्रति यह पत्र पक्षपात नहीं दिखाता था। केरल में ऐसा कोई सहृदय नहीं था जिसने इस पत्र में कुछ न कुछ लिखा न हो। यह पत्र अधिकांश पंडितों की विद्वत्ता प्रदर्शन का रंगस्थल बन गया।

साप्ताहिक पत्रों में 'सुजनानन्दिनी' का स्थान उन्नत माना जाता था। इसके प्रकाशक केरलभूषणम् कंपनीवाले थे। प्रसिद्ध निबन्धकार परवूर निवासी केशव नाशान इसके संपादक थे। बहुत-से कवियों और समालोचकों ने सुन्दर लेख भेजकर इसकी कीर्ति को उज्ज्वल किया था।

मासिक पत्रों का प्रकाशन

'विद्याविलासिनी' के साथ 'विद्याविनोदिनी', 'भाषापोषिणी' आदि मासिक पत्रिकाओं ने साहित्य की उन्नति के लिए सफल यत्न किये हैं। ट्रिच्चूर

निवासी सि० अच्युत मेनोन ने विद्याविनोदिनी का संपादक बनकर अंग्रेजी के प्रसिद्ध गद्य-लेखक मेकोल, ऐडिसन, स्टील आदि के समान मलयालम में ठोस तथा सारपूर्ण लेख लिखे। गंभीर से गंभीर विषय वे सरल कोमल पदावली में लिखकर लोगों को समझाते थे। उनके प्रत्येक लेख में उनके व्यक्तित्व की छाप दिखाई पड़ती है। आलोचना क्षेत्र में वे सर्वप्रथम निकले। उनके मूलधनम् निकुतिकिर, राज्यभरणम् आदि लेख अत्यन्त प्रौढ़ माने जाते हैं।

उल्लूर एस० परमेश्वरय्यर, मूर्कोत्त कुमारन, सी० वी० कुञ्ञुरामन, के० आर० कृष्णपिल्ला, पी० के० नारायणपिल्ला, एम० राजराजवर्मा आदि कई उद्भट लेखकों ने भिन्न-भिन्न-प्रकार के निबन्ध लिखकर 'भाषा-पोषिणी' मासिक पत्रिका का स्तर ऊँचा उठाया। जीवनियाँ, उपन्यास, निबन्ध आदि गद्य-शाखा की विभिन्न उपशाखाएँ इनके प्रयत्न से लहलहा उठीं। मनोरमा, कवनकौमुदी, केरलचिन्तामणि, रसिकरंजिनी, आत्मपोषिणी आदि मासिक पत्रिकाओं ने भी मलयालम साहित्य को उज्ज्वल बनाने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। लेखकों में प्रधान केरलवर्मा, वेण्मणि महन नंपूतिरि, नटुवत्त अच्छन नंपूतिरि, कुञ्ञिकुट्टन तंपुरान, के० सी० केशवपिल्ला, कोट्टारत्तिल शंकुण्णि आदि हैं।

मलयालम पत्र-पत्रिकाओं की प्रगति बीस वर्ष से हुई है। प्रारंभिक काल में यद्यपि कुछ पत्रिकाओं का प्रकाशन बन्द हो गया तो भी नयी-नयी पत्रिकाएँ और भी तेजी से निकलने लगीं और उनका प्रचार भी जनता में खूब हुआ। विद्वान् तथा स्वतंत्र स्वभाव के लोगों को सोच-समझकर पढ़ने तथा लिखने योग्य सामग्री मिली। फलस्वरूप मलयालम की गद्य-शाखा में क्षिप्र गति से उन्नति होने लगी। भाषा में सब प्रकार के गंभीर लेख लिखने की क्षमता आ गयी। अपनी मातृभाषा को उच्च स्थान पर पहुँचानेवालों में कुञ्ञुरामन नायनार, अच्युत मेनोन, के० एस० कृष्णपिल्ला आदि के प्रयत्न अत्यंत श्लाघनीय हैं। महामहिम श्री ए० आर० राजराजवर्मा के प्रिय शिष्य के० रामकृष्ण पिल्ला कड़ी आलोचना करने में सिद्धहस्त हैं।

'वृत्तान्तपत्र प्रवर्तनम्, कार्ल मार्क्स की जीवनी आदि पुस्तकों में उनकी उज्ज्वल गद्यशैली का आभास मिलता है। सरकार की कड़ी आलोचना करने के कारण उनके देश से निकाल दिये जाने की घटना प्रसिद्ध है।

साहित्यालोचक अच्युत मेनोन

जब कई कवि और लेखक काव्य के बाहरी आडंबर (कलापक्ष) पर मुग्ध होकर उसमें प्रवीणता पाना अपना ध्येय समझ रहे थे, उस समय अच्युत मेनोन ने अपने पंडितोचित लेखों तथा अकाट्य युक्तियों द्वारा साबित किया कि रस ही काव्य की आत्मा है। इसके पक्ष और विपक्ष में लेखों की बाढ़ आ गयी। अन्त में अच्युत मेनोन का पक्ष विजयी मान लिया गया। इस सिद्धान्त के आधार पर मेनोन ने नवीन कविताओं की कड़ी आलोचना की। बहुत कुछ विरोध होने पर भी निर्भय मेनोन अपने सिद्धान्त पर अटल रहकर साहित्य की आलोचना करते रहे।

धीरे-धीरे दैनिक तथा साप्ताहिकों की संख्या बढ़ने लगी। पच्चीस से अधिक दैनिक पत्र संप्रति केरल में प्रचलित हैं। साप्ताहिकों की संख्या भी इनसे कहीं अधिक है।

सोलहवाँ अध्याय

उपन्यास

यह सर्वविदित है कि अंग्रेजी साहित्य के निकट संपर्क के कारण ही भारत की प्रान्तीय भाषाओं में उपन्यासों का निर्माण हुआ है। भारतीय लेखकों के लिए यह नया विषय है। कहते हैं कि सब से पहले बंकिमचन्द्र ने दुर्गेशनन्दिनी नामक उपन्यास बँगला भाषा में लिखा। उसके करीब बाईस वर्ष बाद यानी सन् १८८७ में अप्पु नेटुङ्ङाटि ने मलयालम में एक उपन्यास लिखा जिसका नाम है 'कुन्तलता'। भाषा, भाव तथा शैली की दृष्टि से यद्यपि यह दूसरे उपन्यासों की अपेक्षा उत्तम नहीं है, तो भी मलयालम के प्रथम उपन्यास के रूप में इसका स्थान मुख्य माना जाता है। पढ़ते समय यह पौराणिक कथा-सा मालूम पड़ता है। पाठकों की जिज्ञासा बढ़ाने में लेखक सफल अवश्य हुआ है, किन्तु मर्मस्पर्शी घटनाओं के वर्णन में भावात्मकता नहीं दिखाई पड़ती। लेखक अंग्रेजी उपन्यासकार स्काट का अत्यन्त ऋणी है; यह पात्रों के संवाद से प्रतीत हो जाता है। उपन्यास की एक विशिष्ट शैली इसके द्वारा प्रचलित हो गयी; यही इस पुस्तक की विशेषता है।

चन्तु मेनोन की कृति इन्दुलेखा

कुंचन नंप्यार ने सरस कविताओं द्वारा समाज के दोषों को दूर करने का प्रयत्न किया और इसमें सफलता मिली। उसके बाद समाज-सुधार के पावन कार्य की ओर किसी का ध्यान नहीं गया। किन्तु इन्दुलेखा के कर्त्ता चन्तु मेनोन ने अपने समाज तथा नंपूतिरि समाज की गिरती हुई

अवस्था को गौर से देखा। उस समय ये दोनों समाज यद्यपि उन्नत समझे जाते थे, फिर भी पतन के गर्त की ओर जा रहे थे। नंपूतिरि लोग जमीन्दार थे। जमीन्दारी के दूषित फलों का चित्र प्रेमचन्द के समान हमारे सामने चन्तु मेनोन ने इसके द्वारा प्रस्तुत किया। उसके साथ ही जमीन्दारों के आश्रित, आचार-विचार, सामाजिक अवस्था, अलसता के कारण उन लोगों के अध:पतन आदि का इसमें अच्छा प्रदर्शन कराया गया। लेखक अंग्रेजी का बड़ा पंड़ित था और उस भाषा के उपन्यासों का अध्ययन करके उसी ढंग पर यहाँ के वातावरण में उपन्यास रचने का संकल्प उसके मन में दृढ़ हो गया था, जो 'इन्दुलेखा' में पूर्ण हो सका। चंतु मेनोन का जन्म उत्तर केरल में सन् १८४६ में हुआ। पहले वे अदालत के एक मामूली कर्मचारी थे, पर धीरे-धीरे मुंसिफ और सबजज बन गये। उस समय अचानक उनका स्वास्थ्य बिगड़ गया और सन् १८९९ में वे स्वर्गवासी हो गये।

इन्दुलेखा की कथावस्तु--पंचु मेनोन एक नायर जाति के परिवार का प्रधान था। उसे मालूम हुआ कि उसके भानजे और पौत्री में प्रेम-व्यवहार होने लगा है, अत: उसके विरुद्ध पौत्री का व्याह एक नंपूतिरि के साथ करने का निश्चय पंचु मेनोन ने किया। भानजा माधव और पौत्री इन्दुलेखा दोनों शिक्षित थे, अत: वे अपने परिवार के प्रधान और मामा की धमकी से जरा भी प्रभावित नहीं हुए। माधव और पंचु मेनोन के बीच झगड़ा हुआ और माधव अपना घर छोड़कर मद्रास चला गया। अच्छा अवसर पाकर पंचु मेनोन ने सूरि नंपूतिरि को अपने घर सादर बुलाया और ब्याह के लिए खास प्रबन्ध कर लिया। लेकिन इन्दुलेखा की चातुरी से विवाह संपन्न न हुआ।

उधर माधव ने समझा कि उसकी प्रेयसी की शादी हो शचुकी है। वह निराश हो बम्बई चला गया। उसका कोई समाचार नहीं मिला। इसी समय एक दूसरी लड़की के साथ उक्तनंपूतिरि का विवाह हो गया। माधव के घर के लोग उसकी खोज में देश-देश में घूमें, पर कोई फल न हुआ। अन्त में पंचु मेनोन अपने भानजे के गायब होने के समाचार से बहुत चिन्तित

हुआ, उसने यह भी वादा कर लिया कि यदि माधव आ जाय तो अपनी पौत्री का ब्याह उसके साथ करने के लिए वह तैयार है। कुछ दिन बाद लोगों ने माधव का पता लगाया और उसे अपने घर लाये। विवाह संपन्न हुआ। पर पंचु मेनोन ने अपनी प्रतिज्ञा भंग होने का प्रायश्चित्त ब्राह्मणों को दक्षिणा के रूप में स्वर्णमुद्रा देकर किया। पहले उसने प्रतिज्ञा कर ली थी कि पौत्री का ब्याह वह ब्राह्मण से ही करेगा। इस प्रकार से नंपूतिरि समाज की अहं-भावना तथा नायर समाज के अंधविश्वास आदि पर लेखक ने खूब आक्षेप किये है।

जब यह उपन्यास प्रकाशित किया गया तब दोनों समाजों के रूढ़िवादी लोग बहुत बिगड़े। उनके दम्भ को लेखक ने सुन्दर भाषा तथा कथा द्वारा लोगों के सामने रखा था। पंचु मेनोन तथा सूरि नंपूतिरि पुरानी पीढ़ी के प्रतिनिधि हैं और माधव तथा इन्दुलेखा वर्तमान समाज के। इनके बीच में जो संघर्ष होता है उसका सजीव चित्रण लेखक ने किया है। संक्षेप में कहा जाय तो इस नवीन कृति द्वारा चन्तु मेनोन ने अपने समाज को सुधारने में बड़ी सफलता पायी है। उपन्यास-क्षेत्र में इस ग्रंथ का उच्च स्थान है।

उनका दूसरा उपन्यास "शारदा"

लेखक की दूसरी कृति "शारदा" है। इसका पहला भाग लिखने के बाद लेखक की मृत्यु हो गयी। इसे पूरा करने के लिए दो-तीन महाशयों ने प्रयत्न किये। किन्तु प्रथम भाग के समान यह कृति सुन्दर नहीं निकली। यह रचना भी इन्दुलेखा के समान एक सामाजिक उपन्यास है। इसमें छोटी-सी बात के लिए अदालत की शरण लेनेवाले, विपक्ष और पक्ष के समर्थक मुकदमे को बढ़ाने के लिए प्रेरणा देनेवाले वकील, मुखिया लोग आदि भिन्न-भिन्न स्वभाव के मनुष्यों का चित्र तन्मयतापूर्वक खींचा गया है। पात्रों की सृष्टि में ग्रंथकार ने मौलिकता दिखायी है। जज होने के नाते अदालत सम्बन्धी कार्य और उससे जिन लोगों को काम लेना पडता

है उनके विचार, चालचलन आदि के वर्णन में लेखक को पूरी सफलता मिली है।

कथानक—पूंचोलक्करयिटम नामक एक प्रसिद्ध कुटुंब था। उसकी कई शाखाएँ हो गयी थीं। एक शाखा में कल्याणी नामक स्त्री थी। उस घर के प्रधान सदस्य की तानाशाही के कारण उस स्त्री को विवाह के बाद तलाक देना पड़ा। वह लाचार होकर उत्तर भारत की ओर चली गयी। वहाँ अपने देशवासी रामन मेनोन से उसकी भेंट हुई और उसका व्याह उस मेनोन के साथ संपन्न हुआ। उनको एक पुत्री पैदा हुई। उसका नाम शारदा रखा गया। कल्याणी अपने पतिदेव तथा पुत्री के साथ देश लौटी और अपने घर के प्रधान सदस्य यानी मामा से अपनी संपत्ति का हिस्सा देने की प्रार्थना की। इसी समय कल्याणी का निधन हो गया। पिता रामन मेनोन के लाख प्रयत्न करने पर भी घर की संपत्ति का एक तिनका तक शारदा को न मिला। अन्त में मेनोन अदालत में मुकदमा दायर करता है। उसको कई तरह की तकलीफें झेलनी पड़ती हैं। मुकदमें का अन्त क्या हुआ यह जानने के लिए पाठक अब भी उत्कंठित हैं। मलयालम साहित्य के अमूल्य ग्रंथों में ये दोनों रचनाएँ बहुमूल्य रत्न-जैसी जगमगा रही हैं।

तीन ऐतिहासिक उपन्यास

इसी समय तिरुवन्तपुरम के सी० वी० रामनपिल्ला ने मार्तण्ड वर्मा, धर्मराजा और रामराज बहुदूर ये तीन ऐतिहासिक उपन्यास लिखकर विश्व साहित्य में अमर स्थान प्राप्त किया। अंग्रेज़ी भाषा में स्काट, फ्रेंच भाषा में अलकजेन्डर डूमा, बँगला में बंकिमचन्द्र, मराठी में हरिनारायण आप्टे आदि को जो स्थान दिया गया है, वही स्थान सी० वी० रामनपिल्ला मलयालम में अलंकृत करते हैं। सी० वी० रामनपिल्ला तिरुवितांकूर राजमहल के कर्मचारियों के यहाँ पले थे। अतः वहाँ के राजाओं के प्रति आदरभाव होना स्वाभाविक है। उस समय के राजसचिवों को भी वे आदर की दृष्टि से देखते थे और उनके वीरोचित कार्यों की खूब सराहना

करते थे। भूत काल की पीढ़ियों का चन्तुमेनोन के समान परिहास भाव सी० वी० को पसंद नहीं था। स्थानीय कालेज में अंग्रेज अध्यापकों के शिष्यत्व में इन्होंने शिक्षा पायी थी। उसके पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव इनकी कृतियों में पर्याप्त आ गया है।

शिक्षा पाने के बाद सी० वी० सरकारी कर्मचारी हो गये थे। सेवा-निवृत्त होने से पहले ही वे साहित्य क्षेत्र में बड़े जोश के साथ काम करने लगे। सरकारी पाठ्यपुस्तक समिति के प्रधान पद पर रहकर उन्होंने महत्त्वपूर्ण कार्य किये, साथ ही अपने समाज के उद्धार के लिए भी उन्होंने सजीव भाग लिया। ईश्वर तथा राजा पर उनकी भक्ति अटूट थी। वे सद्-आचरण की मूर्ति थे। यद्यपि विदेशी अफसरों की कड़ी आलोचना वे समय-समय पर करते थे, तो भी राजाओं पर उन्होंने किसी प्रकार का कलंक नहीं लगाया। उपर्युक्त उपन्यासों के अतिरिक्त प्रेमामृतम्, कुरुप्पिल्लाक्कलरी, बटलर पप्पन, चन्द्रमुखीविलासम् प्रहसनम् आदि सोलह उत्तम कृतियाँ रचकर उन्होंने मलयालम भाषा को उन्नत स्थान दिलाया।

तिरुवितांकूर नरेश मार्तण्ड वर्मा के राज्यकाल में उत्तराधिकार के सम्बन्ध में उनको अपने मामा के पुत्र तंपियों के साथ अनेक वर्ष बड़े बड़े संघर्ष करने पड़े। इसी राजनीतिक तथ्य के आधार पर लिखा हुआ उपन्यास है 'मार्तण्ड वर्मा'। इसका प्रधान नायक अनन्तपत्मनाभ नरेश का आश्रित था जो शत्रुओं के हाथ घायल किया जाता है। शत्रुओं ने समझा कि वह मर गया। तब उस ओर एक मुसलमान सरदार अपने काफिले के साथ पहुँचता है और घायल व्यक्ति को चंगा कर देता है। तब से अनन्तपत्मनाभ कपट-वेष धारण कर अपने स्वामी नरेश तथा अपनी प्राणप्रिया पारुक्कुट्टी को दुश्मनों के पंजे से छुड़ाने में प्रवृत्त होता है और अन्त में विजयी होता है। यही है इसकी कथावस्तु। इसके अध्ययन से हमें उस समय की राजनीतिक तथा सामाजिक अवस्थाओं का पूर्ण परिचय मिलता है।

वर्तमान कालिक अनुसंधान के फलस्वरूप इतिहासज्ञों ने सिद्ध किया है कि राजनीतिक क्षेत्र के सम्बन्ध में सी० वी० ने जो वर्णन किया है उसमें झूठी बातें भी मिल गयी हैं। प्रसाद, ओज और मधुरत्व इन तीनों गुणों का समावेश इसमें पाया जाता है। घटनाओं के मर्मस्पर्शी चित्रण में लेखक की शक्ति अमोघ है।

'मार्तण्ड वर्मा' का प्रकाशन सन् १८९१ में हुआ। दूसरा उपन्यास 'धर्मराजा' सन् १९१३ में प्रकाशित हुआ। इसमें रामवर्म महाराज के राज्यकाल की प्रारंभिक अवस्था का वर्णन है। टीपू सुलतान के साथ उस राजा का संघर्ष रामराजबहुदूर की कथावस्तु है।

प्रेमामृतम्

मिस मेरी कोरेली (Miss Mary Corelle) के प्रसिद्ध उपन्यास 'वेनडेट्टा' के तत्त्वों का खंडन करते हुए लेखक ने 'प्रेमामृतम्' लिखा। मेरी कोरेली ने अपनी पुस्तक में स्थापित किया है कि संसार की सारी बुराइयों की जड़ स्त्रियों का चपल स्वभाव है। किन्तु रामन-पिल्ला ने उसका खंडन करते हुए जोशीली शैली में साबित किया कि पुरुषों की दूषित मनोवृत्तियों तथा व्यवहारों के कारण ही दुनिया में बुराइयाँ फैलती हैं। इसमें लेखक ने 'वेनडट्टा' की घटनाओं की नकल टेढ़े-मेढ़े रूप से की है, तो भी ऐसे बहुत-से अंश पाये जाते हैं जो लेखक की अपनी कल्पना हैं।

इन पुस्तकों के प्रारम्भ में स्काट के समान, लेखक ने कथा को सूचित करनेवाले कवितांश जोड़ दिये हैं। पात्रों के देश, स्वभाव, संस्कृति आदि के अनुसार संभाषण करना इन रचनाओं की विशेषता है।

मणिप्रवाल शैली में वलिय कोयित्तंपुरान ने 'अकबर' लिखकर प्रकाशित किया। इसकी शैली संस्कृत-मिश्रित है। अतएव सी० वी० और चन्तु मेनोन के उपन्यासों की कोमल कान्तपदावली के सामने वह निस्तेज हो गया। इनके अलावा यों तो मलयालम में अनेक उपन्यास लिखे गये हैं

किंतु वे उतने महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। अतः सबकी चर्चा छोड़कर कुछ इने-गिने उपन्यासों का विवरण आगे दिया जाता है।

अन्य लेखकों की रचनाएँ

कोच्चि राज्य के नरेशों के वंशज अप्पन तंपुरान संपादक, अनुसंधानकर्त्ता, आलोचक, उपन्यासकार और गद्यकवि के रूप में मलयालम साहित्य के नभोमंडल में उदित हुए। उनकी कई रचनाओं में मुख्य 'भूतराय' उपन्यास है। इसमें ऐतिहासिक घटनाएँ लिखी गयी हैं, लेकिन उनकी प्रामाणिकता सर्वसम्मत नहीं है। पर यह तो निश्चित है कि पेरुमाल राजा जब यहाँ राज्य करते थे उस समय की सामाजिक अवस्था पर खूब प्रकाश डाला गया है। पात्रों की सृष्टि तथा कथा में यद्यपि उन्होंने कोई मौलिकता नहीं दिखायी तो भी पुस्तक पढ़ने में रोचक है। कहते हैं कि लगभग चालीस वर्ष तक विविध क्षेत्रों में उन्होंने भाषा-देवी की पूजा निःस्वार्थ भाव से की है। हमारे भक्त कवियों के समान अपनी आत्मा की तृप्ति के लिए भी उन्होंने बहुत लिखा है।

के० रामकृष्ण पिल्ला के संपादन कार्य की चर्चा पहले हो चुकी है। ऐसे दो-तीन उपन्यास भी उन्होंने प्रकाशित किये थे जिन पर सामयिक राजनीतिक अवस्था की छाया दिखाई पड़ती थी। उनके नाम 'उदयभानु' और 'पारप्पुरम्' हैं। पारप्पुरम् के तीन भाग हैं। इन पुस्तकों ने पहले एक बड़ा आन्दोलन खड़ा कर दिया था। कुछ समय बाद जब वह आन्दोलन शान्त हुआ तब उनको पढ़ने की रुचि भी कम हो गयी। उपन्यासों में इनका स्थान महत्त्वपूर्ण नहीं है।

अंबाटी नारायणप्पुनुवाल के 'केरलपुत्रन' उपन्यास में भूतराय के समान पेरुमाल राजाओं से सम्बन्धित मर्मस्पर्शी घटनाओं के चित्र पाये जाते हैं। लेखक ने कई कहानियाँ भी लिखी हैं। रामन नंपीशन का केरलेश्वरन् तथा कप्पनाकृष्ण मेनोन का चरमानपेरुमाल उस समय के मुख्य उपन्यास हैं।

ऐतिहासिक उपन्यास

ऐतिहासिक घटनाओं के आधार पर श्री के० एम० पणिक्कर ने पाँच उपन्यास रचे हैं। इनमें से चार में केरल प्रान्त के विविध राज्यों तथा एक में भारत के इतिहास की कुछ घटनाओं का चित्र खींचा गया है। 'परंकिप्पटलाळि' पढ़ते समय पाठक को पुर्तगाली लोगों का आगमन, केरल में अड्डा जमाना, धार्मिक परिवर्तन के लिए उनका यत्न आदि कई बातों का पता लगता है। इसके अतिरिक्त राज्य विस्तार के लिए मार्तण्ड वर्मा के कई राज्यों पर हमले, चेंपकश्शेरी जैसे छोटे राजाओं द्वारा संधि करके उसका सामना करना तथा लाचार होकर हैदर अली की सहायता माँगने का प्रयत्न जैसी ऐतिहासिक बातें उस पुस्तक से समझी जा सकती हैं।

'केरलसिंह' पणिक्कर के उपन्यासों में प्रथम माना जाता है। देशभक्त वीरशूर पषशी नरेश के राज्यकाल में टीपू और अंग्रेज़ों ने उस राज्य का नाश करने का बीड़ा उठाया। तब नरेश ने बड़ी वीरता से उनका सामना किया, परिणाम में कठोर यातनाएँ उसको झेलनी पड़ीं। इन सब बातों की झलक उक्त उपन्यास में पायी जाती है। भारत-सम्राट् अकबर के समय में बहुत-सी रोमांचकारी घटनाएँ हुई थीं। उन ऐतिहासिक तथ्यों को ध्यान में रखकर लिखा हुआ उपन्यास है 'कल्याणमल'। इसके कई स्त्री और पुरुष पात्र काल्पनिक हैं।

सामाजिक उपन्यास

चन्तु मेनोन के सामाजिक उपन्यासों के सम्बन्ध में कहा जा चुका है। सी० वी० रामन पिल्ला के 'प्रेमामृत' में तिरुवन्तपुरम् के कर्मचारी, अफसर, साधारण लोग आदि की रहन-सहन और आचार-विचार का चित्र खींचा गया है। कण्णन मेनोन ने 'स्नेहलता' एवं टी० के० वेलुपिल्ला ने 'हेमलता' लिखकर मलयालम-भाषा-साहित्य की उपन्यास-शाखा को परिपुष्ट किया है। सरल उपन्यासों में 'विरुतन शंकू' का स्थान उत्तम है। उसके लेखक

काराट्ट अच्युत मेनोन हैं। वर्तमान काल की अंग्रेजी वेष-भूषा, भाषा, आचार आदि की नकल करके समय बितानेवाले लोगों की हँसी उड़ाने के लिए के० एम० पणिक्कर ने 'दोरशिणी' उपन्यास लिखा है। नंपूतिरि समाज के विवाह का क्रम, उनके गूढ़ विचार आदि को लक्ष्य करके भवत्रातन नंपूरिप्पाट ने आकर्षक शैली में एक उपन्यास लिखा, जिसका नाम है 'अफन्टे मकळ'। पात्रों की सृष्टि तथा कथा के संगठन में उन्होंने खूब ध्यान दिया है। इसमें अपने समाज के अंधविश्वास का खंडन उन्होंने कलापूर्ण ढंग से किया, अतएव जब इसका प्रकाशन हुआ तो समाज के कई लोगों ने उनके विरुद्ध आन्दोलन खड़ा किया। किन्तु बाद में वह अपने आप शान्त हो गया।

वर्तमान काल के उपन्यासकारों ने अंग्रेजी के अलावा और भी कई यूरोपीय भाषाओं का अध्ययन किया है। उसके फलस्वरूप उन भाषाओं के' खास कर रूसी, फ्रेंच आदि भाषाओं के उत्तम ग्रन्थों का अनुवाद करने का आयोजन हुआ। श्री ए० बालकृष्ण पिल्ला, केशवदेव आदि लेखकों के अत्यन्त यत्न से कई उपन्यासों तथा कहानियों की रचना मलयालम में हुई। उनमे नवयुग की चेतना का प्रतिबिंब स्पष्ट दिखाई पड़ता है।

वर्तमान काल के उपन्यासकारों में तकषि शिवशंकर पिल्वला, केशवदेव बैकमबशीर और एस० के० पोट्टकाट्ट मुख्य हैं। तकषि ने प्रसिद्ध लेखक 'मोम्पासा' को आदर्श मानकर 'पतितपंजकम्' और 'प्रतिफलम्'; ये दो छोटे उपन्यास लिखे। प्राचीन काल के उपन्यासकारों द्वारा सदाचरण के स्वीकृत सिद्धान्तों के विरुद्ध इन्होंने कथा का संगठन और पात्रों की सृष्टि की। जब इनकी पुस्तकें प्रकाशित हुईं तब रुढ़िवादी लोग बहुत बिगड़े। किन्तु इन्होंने कोई परवाह नहीं की।

सामान्य जन-जीवन का चित्रण

भविष्य में होनेवाली समस्याओं को समाज के सामने इन्होंने दीर्घदर्शी के रूप में प्रस्तुत किया। उन्होंने दिग्दर्शन कराया कि पूंजीपतियों के विरुद्ध

एक नया साम्यवादी दल उठ खड़ा होगा और इन दलों में बड़ा संघर्ष होगा। उनकी भविष्यवाणी ठीक निकली। पूंजीवादी सरकार और साम्यवादी दल के बीच तिरुवितांकूर राज्य के उत्तर भाग में स्थित वयलार नामक गांव में बड़ा संघर्ष हुआ। कई साम्यवादी लोग मारे गये। उस घटना के आधार पर 'तलयोट' (खोपड़ी) नामक उपन्यास लिखा गया। 'तोट्टियुटे मकन' (भंगी का बेटा), 'तेण्डिवर्गम्' (भिखारी समाज) इन दो उपन्यासों में लेखक ने अछूत लोगों की दयनीय स्थिति का चित्रण मर्मस्मर्शी ढंग से किया है। इसमें एक भंगी अपने पुत्र को पढ़ा-लिखाकर समाज में उन्नत स्थान पाने का बड़ा प्रयत्न करता है। माँ-बाप ने पुत्र के पढ़ाने का खर्च जुटाने के लिए अपने खून को पसीना बनाते हुए भारी श्रम किया। किन्तु सब विफल हो गया। मां-बाप विषाद के कारण मर जाते हैं। पुत्र अपने बाप का पेशा स्वीकार करता है। धीरे-धीरे वह भंगियों का नेता बनता है और अपने समाज की उन्नति करने के प्रयास में अपनी आत्मा का होम कर देता है। यही है 'भंगी का पुत्र' नामक उपन्यास की कथावस्तु। भंगियों के नारकीय जीवन का अच्छा परिचय इस पुस्तक से हमें प्राप्त होता है।

"रंटि टडङःषि (दो सेर) उपन्यास में खेत में काम करनेवाले पुलय समाज के जीवन का सजीव चित्रण पाया जाता है। तिरुवितांकूर राज्य के मध्यभाग में पंपा नदी के संगम स्थल पर कुछ कृषिक्षेत्र है जो जल से घिरा हुआ है। उसके हजारों एकड़ में जमीन्दारी के अधीन धान की खेती होती है। उपन्यास का प्रधान कथापात्र कोरन है जो स्थानीय जमीन्दार का आज्ञाकारी नौकर है। जमीन्दार तथा उसके पुत्र के कठोर व्यवहार से कोरन धीरे-धीरे उनके विरुद्ध हो जाता है और संगठन की स्थापना करता है। एक दिन जमीन्दार का पुत्र मौका पाकर कोरन की स्त्री का चरित्र भंग करता है, इतने में कोरन वहाँ आता है। दोनों में द्वन्द्वयुद्ध होता है और उसमें जमीन्दार का पुत्र मारा जाता है। कोरन कैद हो जाता है। मजदूर लोग उस समय एकता के सूत्र में बँध जाते हैं। अन्त में कोरन मुक्त हो जाता है।

इस तरह इसमें पूँजीपतियों और मजदूरों के संघर्ष के चित्र सुन्दर और प्रभावकारी शैली में खींचे गये हैं।

वर्तमान काल के उपन्यासकार

मछुए लोगों के जीवन से तादात्म्य करके लिखा हुआ उपन्यास है 'चेम्मीन'। यह प्रेमाख्यान के रूप में सुख्यात हो गया है। अंबलप्पुषा के समुद्री किनारे पर बसनेवाले मछुओं के दैनिक जीवन, उनकी प्रेम भावना, कौमी सुशीलता, अनगिनती कठिनाइयाँ, गरीबी इत्यादि के सम्बन्ध में ओजभरी भाषा में कलापूर्ण ढंग से इसमें लिखा गया है। उस समाज का अंधविश्वास है कि चरित्रहीन स्त्री अपने पति को उदधि-रूपी माँ के क्रोध का शिकार बनाकर मरवा डालती है। पुस्तक को पढ़ने पर ऐसा मालूम होगा कि लेखक ने इस अन्धविश्वास से प्रभावित होकर पात्रों की सृष्टि की है।

तकषी ने इन उपन्यासों द्वारा समाज में होनेवाले विविध प्रश्नों को उठाकर उन्हें सुलझाने का मार्ग दिखाया है। जीवन के तथ्यों को चित्रित करने में लेखक को खूब सफलता मिली है। भारत सरकार की ओर से पाँच हजार रुपय का पुरस्कार 'चेम्मीन' के रचयिता को दिया गया है। कहा जाता है कि यह पुरस्कार केवल ऐसे लोगों को दिया जाता है जिन्होंने सुन्दर से सुन्दर रचना की हो। प्रेमचन्द जी के समान निम्न वर्ग को उबारने में तकषी ने बड़ा परिश्रम किया है।

सामान्यतः जनता तथा गिरी हुई अवस्था में रहनेवाले लोगों के जीवन के विविध पहलुओं और समस्याओं पर तकषी के समान केशवदेव ने भी अपनी तीखी कलम चलायी है। देव के अधिकांश पात्र मानवता की सजीव मूर्ति हैं। उन्होंने 'गंदी नाली से' (ओटयिल निन्न्) नामक उपन्यास में रिक्शेवाले 'पप्पु' के त्याग और स्नेहमय जीवन पर अच्छा प्रकाश डाला है। पप्पु ने एक अच्छा काम पाने के लिए बड़ी कोशिश की, कई प्रकार की तकलीफों का सामना किया। अन्त में निराश होकर वह रिक्शाचालक

बन गया। एक दिन वह अपना रिक्शा खींचता चला जा रहा था। अचानक उससे टकराकर एक मासूम लड़की गंदी नाली में गिर पड़ती है। उसे नाली से उठाकर अपनी पुत्री के समान पप्पु उसका पालन-पोषण करता है। उसे स्कूल भेजकर सुशिक्षित बना देता है। कालेज में जाने तक वह सयानी हो जाती है। एक कुलीन युवक के साथ उसका विवाह संपन्न हो जाता है। इसी बीच पप्पु के ऊपर आपत्तियों का पहाड़ टूट पड़ता है। लेकिन वह उसकी परवाह किये बिना ही अपनी पुत्री की परवरिश के लिए कठोर यत्न करता है और फलस्वरूप वह रोगी बन जाता है। जिसके लिए उसने अपनी सारी जिन्दगी को बरबाद किया, उसको उसके प्रति जरा भी सहानुभूति नहीं होती। वह अपने विलासमय जीवन में सर्वस्व भूली बैठी है।

एक दिन आधी रात के समय खाँसता हुआ पप्पु उसी दुमंजिले मकान के नीचे से जाता है जहाँ उसकी बेटी पतिदेव के संग गहरी नींद ले रही थी। सब कहीं सन्नाटा छाया हुआ है। पप्पु लाठी टेकता चला जा रहा था। वह कहाँ जा रहा है, उसका पता किसी को नहीं है। उसके बाद पप्पु इस संसार से हमेशा के लिए ओझल हो जाता है। यह पुस्तक लोगों के समक्ष सोचने-समझने के लिए कई प्रश्न प्रस्तुत करती है।

सामाजिक प्रश्नों पर देव ने 'उलक्का' (उलूखल), 'नटी' आदि उपन्यास भी लिखे हैं। लोगों को उत्तेजित करने का प्रयास इन कृतियों द्वारा लेखक ने किया है। पूंजीपतियों की कुचेष्टाओं का सुन्दर चित्र इनमें पाया जाता है और उनके विरुद्ध आवाज उठाने का आह्वान भी जोशीली भाषा में लेखक ने किया है।

मुसलिम समाज की झाँकी

मलयालम प्रदेश के मुसलमानों के आचार-विचार, रहन-सहन आदि का चित्र खींचते हुए 'वैकम' निवासी मुहम्मद बशीर ने बहुत-सी सुन्दर कहानियाँ और दो उपन्यास लिखे हैं। उनकी कृतियों ने केरली साहित्य में एक अच्छा स्थान प्राप्त कर लिया है। 'बाल्यकाल सखी' और 'मेरे पिता जी

का एक हाथी था' ये दोनों उनके उत्तम उपन्यास माने जाते हैं। मुसलिम समाज के घरेलू जीवन का चित्रण, आपस में झगड़ा, उस समुदाय की भिन्न-भिन्न श्रेणी के लोगों की आर्थिक स्थिति, उनका धूर्त जीवन, गरीब लोगों की दयनीय स्थिति आदि का चित्रण तन्मयतापूर्वक किया गया है।

पतन की ओर पल-पल पर जानेवाले एक धनवान् मुसलमान कुटुम्ब और एक गरीब मेहनती मुसलमान कुटुम्ब; इन दोनों के घरों की स्त्रियों, पुरुषों और बच्चों की सामाजिक, आर्थिक तथा मानसिक स्थितियों का प्रतिबिंब 'मेरे पिता जी का एक हाथी था' उपन्यास में पाया जाता है। उपन्यास की शैली उज्ज्वल तथा अनूठी है। इसमें मुसलमानों के बीच में बोली जानेवाली एक निराली भाषा-शैली का प्रयोग लेखक ने अपनाया है जो बशीर की रचनाओं की अपनी विशेषता है।

मुसलिम समुदाय के अंधविश्वास, सामाजिक कुरीतियों, आदि पर तेज कलम लेखक ने चलायी है। इन ग्रंथों के अध्ययन से पाठक को मुसलिम समुदाय के सभी क्षेत्रों का पूर्ण परिचय अवश्य प्राप्त होगा। वर्तमान काल में भी लेखक नयी-नयी कृतियों द्वारा साहित्य को पुष्ट करता जा रहा है।

अन्य उल्लेखनीय कृतियाँ

यथार्थवाद तथा प्रेमानुभूति का सुन्दर समन्वय एस० के पोट्टक्काट की कृतियों में पाया जाता है। विषकन्यका, मूटुपटम् (परदा), नाटन प्रेम आदि उनकी अनूठी कृतियाँ हैं। किसानों की कठिनाइयों का चित्र मर्मस्पर्शी ढंग से लेखक ने 'विषकन्यका' में खींचा है। प्रस्तुत पुस्तक में तिरुवितांकूर से कुछ किसान जमीन की खोज में मलबार प्रदेश में पहुँचते हैं। शीतातप से उन्हें कड़ी तकलीफों का सामना करना पड़ता है। साहस के साथ वे आगे बढ़ते हैं और अन्त में विषकन्यका के आश्लेषण से नायक की दयनीय मृत्यु हो जाती है। यही इसकी कथावस्तु है। ऊपर भूमि को विषकन्या के रूप में चित्रित किया गया है। इसे पढ़ने से एसा प्रतीत होता है कि लेखक

ने प्रसिद्ध उपन्यास "Good Earth" को आधार बनाकर लिखा है। इसकी ओजभरी शैली सबको आकर्षित करती है।

सुन्दर भावनाओं को महत्त्व देकर मुसलिम समाज के आचार-विचार आदि पर प्रकाश डालते हुए 'उम्माच्चु' नामक एक रोचक उपन्यास कुट्टि कृष्ण ने लिखा है। यह मासिक पत्र में खण्डशः प्रकाशित किया गया था। कहा जाता है कि केरल के आबाल-बृद्ध लोग इस धारावाही उपन्यास को पढ़ने के लिए मासिक पत्र की प्रतीक्षा में बड़े अधीर रहते थे और उसे पढ़कर अपनी उत्सुकता शान्त करते थे। सच्चे प्रेम के सामने जाति-बन्धन, आर्थिक अवस्था आदि कुछ भी बाधक नहीं है, यह लेखक ने इस कृति के द्वारा साबित किया है। प्रेम की साधना में सब कुछ उत्सर्ग करने का साहस इसमें हम देख सकते हैं। सामाजिक तथा भावना-प्रधान उपन्यासों में 'उम्माच्चु' बेजोड़ है।

जोसफ मुण्डश्शेरी का 'कोन्तयिल निन्न कुरुशिलक्के', पोञ्ञिक्कश राफी का 'पामिकळ', 'फुलटैम कामुकन', कैनिक्करा पत्मनाभ पिल्ला का 'ओषुक्कुळ', 'मकन्टे अम्मा' आदि उपन्यास विख्यात हो गये हैं। श्री मुण्डश्शेरी के उपन्यास में ईसाई लोगों के पुरोहितों की प्रभुता, समय-समय पर राजनीतिक क्षेत्र में उनका प्रवेश करना, धार्मिक बन्धन की शिथिलता, त्यागी ईसामसीह के उपदेशों की समीक्षा अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए करना आदि कई बातों पर प्रकाश डाला गया है। पुरोहित लोग उनके विरुद्ध खड़े हुए, किन्तु उन्होंने उसकी परवाह नहीं की। ज्यों-ज्यों ईसाई धर्म के पुरोहितों की दुर्भावना बढ़ी, त्यों-त्यों उस धर्म के अंधविश्वास और दुराचारों की ओर उनकी कलम और भी जोश से चलने लगी। इसीसे अब वे समाजवाद के पक्के प्रतिनिधि बन गये हैं। हास्यरस प्रधान उपन्यास है राफी का 'पुलटैम' कामुकन। मानसिक शक्ति के दिग्दर्शनार्थ लिखित कैनिक्करा की पुस्तकें हैं। जीवन के तथ्यों और आदर्शों के सम्बन्ध में कलापूर्ण ढंग से प्रस्तुत ग्रंथों में लेखक ने आलोचना की है। इनकी शैली गंभीर तथा आकर्षक है।

श्री विवेकानन्द ने 'कल्लि चेल्लम्मा' नामक एक उपन्यास लिखकर गाँव के भोले-भाले मजदूरों के कष्टमय जीवन की ओर लोगों का ध्यान बलात् आर्कषित कर दिया है। आधुनिक काल के उपन्यासों में इसका स्थान मह वपूर्ण है। इसकी एक विशेषता यह है कि दूसरे उपन्यासों के समान इसमें नायक और नायिका नहीं हैं, किसी प्रश्न को भी नहीं उटाया है और न किसी सन्देश का प्रचार ही किया गया है। एक गाँव, उसमें बसनेवाले लोग, उनके जीवन आदि के प्रति हमारे मन में लेखक ने सहानुभूति पैदा कर दी है। अतः इसे एक यथार्थवादी उपन्यास कहने में अत्युक्ति जरा भी नहीं है। उनकी और एक कृति 'यक्षिपरंप' है। इसमें लेखक ने एक आदर्श तथा प्रेममय संसार की सृष्टि की है और अन्तमें वह संसार एक भयानक श्मशान के रूप में परिवर्तित हो जाता है; यह तथ्य दिखाया गया है।

इन मौलिक उपन्यासों के अतिरिक्त मलयालम में हिन्दी, बँगला, रूसी, अंग्रेजी आदि भाषाओं की उत्तम से उत्तम कृतियों का अनुवाद बड़े पैमाने पर हुआ है और हो रहा है। इनमें बंकिमचन्द्र के विषवृक्ष, कपालकुण्डला, दुर्गेशनन्दिनी आदि बारह ग्रंथ और रवीन्द्र के रार्जाप, विधिविलास आदि सात ग्रंथ प्रधान हैं। यशपाल के राज्यद्रोही, पार्टी कामरेड, प्रेमचन्द्र के कई उपन्यास, इलाचन्द्र जोशी के संन्यासी, गिरिजाकुमारी, मुल्कराज के दो ग्रंथ, सांकृत्यायन के अनार्य आदि कई उपन्यास अनूदित किये गये हैं। टाल्स्टाय, गोर्की, मोम्पासा, वाल्टेयर, पर्ल बक आदि चालिस से अधिक विदेशी लेखकों के उपन्यासों का अनुवाद मलयालम में किया गया है। कुल करीब सौ से अधिक उपन्यासों का अनुवाद अबतक हुआ है। इनमें कुछ तो मौलिक उपन्यासों के समान सुन्दर हैं, कुछ धन के प्रलोभन में पड़कर लिखे गये हैं। अतः वे मूल कृतियों की बराबरी में नहीं आते। सचमुच ऐसे अनवादकों ने मौलिक रचनाओं के प्रति अन्याय भी किया है।

सत्रहवाँ अध्याय

नाटक

१८वीं शताब्दी तक मलयालम भाषा में किसी भी प्रकार के नाटक की रचना नहीं हुई। सन् १८८२ में केरलवर्मा ने कालिदास के प्रसिद्ध नाटक अभिज्ञानशाकुंतल का अनुवाद संस्कृत तथा मलयालम के सरल कोमल शब्दों में किया, जिसकी मोहक शैली ने सभी सहृदयों को आकर्षित कर लिया। कई विद्वानों ने उस ढंग पर अनेक नाटकों का अनुवाद संस्कृत से मलयालम में शुरू किया। करीब पन्द्रह साल तक यह काम जारी रहा। अनूदित नाटकों के अलावा पुराण-कथाओं को आधार मानकर स्वतंत्र नाटकों का निर्माण भी होने लगा। इसी समय चात्तुकुट्टि मन्नाटियार ने जानकीपरिणयम् और उत्तररामचरितम् ये दो नाटक अनूदित किये। ए० आर० राजराजवर्मा का मालविकाग्निमित्रम् और कोट्टरत्तिल शंकुण्णि का विक्रमोर्वशीयम्, तथा कुञ्ञिकुट्टन तपुंरान का आश्चर्यचूड़ामणि विख्यात अनूदित नाटक हैं। संस्कृत के वेणीसंहारम्, प्रबोधचन्द्रोदयम्, स्वप्नवासवदत्तम् आदि कई नाटकों का अनुवाद मलयालम में हुआ।

धीरे-धीरे स्वतंत्र रूप से नाटक रचने की मनोवृत्ति लोगों में जाग्रत होने लगी। उसमें कोच्चुण्णि तंपुरान के 'कल्याणी' नाटक को प्रथम स्थान देना चाहिए। कुञ्ञिकुट्टन तंपुरान ने चन्द्रिका, लक्षणासंग और गंगावरतण ये तीन नाटक लिखे। चङ्ङनाश्शेरी रविवर्मा का कविसभारंजनम्, बयस्करा निवासी मूस्सत का मनोरमाविजयम् सरस कवि के० सी० केशव पिल्ला के लक्ष्मीकल्याण, राघवमाधव और नटुवत्त अच्छन नंपूरी का भगवद्दूत आदि नाटक प्रसिद्ध हैं।

दूसरे कई नाटक भी स्वतंत्र रूप से लिखे गये। नाटककारों में प्रमुख स्थान कुण्डत्तिल वरुगीस माप्पिला को मिला। उन्होंने अंग्रेजी के कई नाटकों का अध्ययन किया, फिर नाटककला में कुशलता प्राप्त की। उनके नाटक का नाम 'इब्रायिक्कुट्टि' है। बाइबिल की एक कथा के आधार पर इसकी रचना हुई है। सौतेली माँ के पुत्रों से कुट्टि को बड़े कष्ट झेलने पड़ते हैं, किन्तु अन्त में उन पुत्रों को नायक अभय देता है। ये सब घटनाएँ मर्मस्पर्शी ढंग से लिखी गयी हैं। नाटक की रचना में वरुगीस माप्पिला की प्रतिभा, मार्मिकता तथा कवित्व सभी पंडितों ने एक-कंठ से मान लिया। कोच्चीपन माप्पिला का 'मरियाम्मा', तोट्टाक्काट्ट इक्कावम्मा का 'सुभद्रार्जुन' तथा कुमारनाशान का 'विचित्र विजय' उस समय के प्रधान नाटक हैं। धीरे-धीरे अंग्रेजी से शेक्सपियर के कई नाटक मलयालम में अनूदित करने का प्रयास होने लगा। उनमें प्रधान कृतियाँ कलहनी दमन का (Taming of the Shrew), वेनिस का व्यापारी, आदि हैं।

सी० वी० रामन पिल्ले ने इसी समय चन्द्रमुखीविलासम्, पण्डत्ते पाच्चन, कुरुप्पिल्लाकलरी आदि हास्यरस प्रधान नाटक लिखे। संगीत-नाटकों की रचना भी इसी समय हुई। इन पर तमिल भाषा का प्रभाव खूब पड़ा है। 'सदारामा' एक सुन्दर कृति है। लोगों ने यह नाटक पढ़कर और अभिनय करके उसके प्रति अपना प्रेम प्रकट किया है। अनेक नाटक-मंडलियों की स्थापना हुई। समय-समय पर केरल के विविध भागों में नाटकों का अभिनय करने का आयोजन भी हुआ। नये-नये नाटक लिखे जाने लगे। लोगों में यह धारणा भी होने लगी कि नाम पाने के लिए नाटक की रचना आवश्यक है। उसके फलस्वरूप साधारण मनुष्य भी नाटक रचना में दत्तचित्त होने लगे। सैकड़ों नाटक लिखे गये। साहित्य में उनका कोई मूल्य न रहा। तब सच्चे साहित्यकारों ने सोचा कि इस प्रकार के नाटकों से भाषा समृद्ध नहीं हो सकती। अतः उन नाटकों की कड़ी आलोचना करते हुए दो हास्यप्रधान नाटक लिखे गये। उनके नाम 'चक्की चंकरम्' और 'दूस्पर्शानाटकम' हैं। चक्कीचंकरम के रचयिता रामक्क-

रुप्प राजकीय कालेज में मलयालम पढ़ानेवाले प्राध्यापक थे। दो प्रेमकथाओं को मिलाकर संस्कृत नाटक के समान यह नाटक लिखा गया है। बीच-बीच में उस समय के नाटकों की कड़ी आलोचना नायक तथा नायिका के संभाषण के द्वारा की गयी है। इसका प्रकाशन हो जाने के बाद नाटकों का निर्माण एकाएक बन्द हो गया। कहा जाता है कि प्रतिभासंपन्न नाटककारों ने भी इस ओर साहस नहीं दिखाया। नाटककार के यशस्वी होने का भ्रम हमेशा के लिए मिट गया। उस नाटक के पात्र कुभाण्ड के द्वारा रचयिता कहते हैं—"योग्य लोग नाटक लिखें, मुझे कोई विरोध नहीं है, किन्तु पामर लोगों का नाटक-निर्माण तनिक भी शोभा नहीं देता। उन्हें इस क्षेत्र से भगा देना चाहिए।"

हास्यरस प्रधान कृतियाँ

कुंचन नंप्यार के बाद हास्यरस प्रधान कृतियों की रचना में रामक्कुरुप्प का स्थान अद्वितीय माना जाता है। पहले लिखा जा चुका है कि सी० वी० रामनपिल्ला ने कुछ नाटक रचे हैं। उनके पश्चात् उसी ढंग पर ई० वी० कृष्णपिल्ला ने हास्यरस प्रधान रूपक लिखकर भाषा की श्रीवृद्धि की। बी० ए० मायावी, पेण्णरशुनाटे, प्रणयक्कम्मीपन, कुरुप्पिन्टे डेयिली, विस्मृति आदि मुख्य रूपक हैं। इनके अतिरिक्त सी० वी० को आदर्श मानकर ई० वी० कृष्णपिल्ला ने राजा केशवदास, सीतालक्ष्मी, इरविक्कुट्टिप्पिल्ला नामक ऐतिहासिक नाटक रचकर एक दूसरी धारा प्रवाहित की। आधुनिक काल में श्री एन० पी० चेल्लप्पन नायर ने प्रणयजांबवान्, लफ्टनन्ट नाणी आटमबोम्ब, मिन्नलप्रणयम् आदि हास्यरस प्रधान नाटक लिखे। लोगों ने इनका अच्छा स्वागत किया। एम० जी० केशवपिल्ला के रूपकों में जस्टे पेग्ग, सम्बन्धालोचना (शादी के लिए सलाह देना) और प्रमाणिपट्टम प्रधान हैं। राजधानी तिरुवनन्तपुरम् में इनका अभिनय हुआ है और ये बहुत प्रसिद्ध हो गये हैं।

गंभीर समस्याओं का चित्रण करते हुए मनोवैज्ञानिक ढंग से सुन्दर

तथा रोचक शैली में प्रहसन लिखने में टी० एन० गोपीनाथन का स्थान उन्नत है। 'निलातुं निषलुं' (चाँदनी और छाया), विधि ये विधि पूक्कारि, प्रतिध्वनि, परिवर्तनम् आदि उनके नाटक हैं। अभिनयकला की दृष्टि से ये नाटक उत्तम माने जाते हैं।

कैनिक्करा पद्मनाभ पिल्ला ने ईसामसीह के स्वर्गारोहण की कथा को आधार मानकर 'कालवरियिले कल्पषादपम्' नाटक लिखा, जिससे नाटक साहित्य की प्रसिद्धि में चार चाँद लग गये। आधुनिक नाटकों के विकास में यह एक नया कदम है। वेलुत्तंपी दलवा, अग्निपंजरम्, विधिमण्डपम् आदि नाटक भी उन्होंने लिखे हैं। उनके भाई कुमारपिल्ला ने पौराणिक कथाओं का आलंबन करके हरिश्चन्द्र, मोह तथा मुक्ति ये दो नाटक रचे। अपने आदर्श का पालन करने के लिए लोगों को जो-जो कष्ट उठाने पड़ते हैं उनका सजीव चित्रण इन रचनाओं में पाया जाता है। सामाजिक नाटक रचना में भी इस लेखक ने अपनी कलम खूब चलायी है। पारिवारिक जीवन में व्यक्तियों के बीच कैसे संघर्ष होते हैं, सदाचरण का महत्त्व क्या है, आदि कई बातों का आभास इनमें मिलता है। रंगमंच सामाजिक कुरीतियों को दूर करने का एक उत्तम साधन समझा गया। उसके फलस्वरूप कई सामाजिक नाटकों का निर्माण हुआ और उनके अभिनय का आयोजन होने लगा। नंपूतिरि समुदाय की जटिल समस्याओं को सुलझाने का प्रयत्न उस समुदाय के नवयुवकों ने बड़े जोश से आरंभ किया। उस समाज की विधवा नारियों की स्थिति सचमुच दयनीय थी। उन्हें समाज के कड़े नियंत्रण में नरक-यातना भोगनी पड़ती थी। इसे सुधारने के लिए टी० वी० रामन भट्टतिरि जैसे प्रतिभासंपन्न व्यक्तियों ने महत्त्वपूर्ण कार्य किये। उनकी कृति 'अटुक्कलयिल निन्नु अरङ्ङत्तेक्क' (रसोईघर से रंगमंच की ओर) नंपूतिरि समाज के अंधविश्वासों और बुरे आचार-विचारों को दूर करने में कुछ हद तक सहायक हुई। दूसरा एक सामाजिक नाटक है 'ऋतुमती' जिसके रचयिता एम० पी० भट्टतिरि हैं।

धीरे-धीरे भारत को विदेशी शासन के पंजे से छुड़ाने का यत्न कन्याकुमारी

से कश्मीर और अटक से कटक तक होने लगा। इसका प्रभाव केरल राज्य पर भी खूब पड़ा। साहित्यकार शक्ति के अनुसार इसमें भाग लेने से पीछे न रहे। इस सम्बन्ध में नाटक, कहानियाँ, कविताएँ, लेख आदि बड़े पैमाने पर लिखे जाने लगे। इसके साथ ही जमीन्दारी प्रथा, मद्य-निषेध जैसे राज्य के अन्दरूनी मामलों पर भी रचनाएँ हुईं। जमीन्दारी के दुष्परिणाम पर 'पाट्टबाक्कि' नाटक के० दामोदरम् ने लिखा। इसका सारांश यह है—

एक मजदूर अपनी मजदूरी से कुटुम्ब का पालन करने में जब असमर्थ हो गया तब वह चोरी करने लगा। पुलिस ने उसे पकड़ा और कुछ वर्ष के लिए उसे जेल की सजा भुगतनी पड़ी। उसकी बहिन असहाय हो गयी। इस दशा में उसका सतीत्व भंग करने के लिए उसके घर का जमीन्दार प्रयत्न करने लगा। यद्यपि वह स्त्री सतीत्व पर अटल रहना चाहती थी तो भी कुछ समय के बाद लाचार होकर उसको वेश्यावृत्ति करनी पड़ी। उसका भाई जेल से मुक्त होकर बाहर आया। उस समय से दोनों समाज के कल्याण में प्रवृत्त हो गये। लेखक ने दिखाया है कि परिस्थिति के कारण ही लोग बुरे और अच्छे मार्ग का अनुसरण करते हैं। अनेक मर्मस्पर्शी घटनाओं पर लेखक ने सुन्दर ढंग से कलम चलायी है। इस नाटक का प्रत्येक अंश पढ़ते समय पाठक अनायास उत्तेजित हो जाते हैं। आम जनता ने इसे खूब अपनाया, क्योंकि उसे स्पर्श करनेवाली कई समस्याओं का समावेश इसमें हुआ है।

कृषक जनता के कष्टों पर प्रकाश डालते हुए इटश्शेरी गोविन्दन नायर ने एक समाजिक नाटक लिखा, जिसमें राजनीतिक घटनाओं की भी मुहर लगी हुई है। इसमें भूमि से होड़ लगाकर श्रम करनेवाले किसान के जीवन का वर्णन है। इसकी नैसर्गिक शैली सबको हठात् आकर्षित् कर लेती है। 'प्रतिभा' नामक राजनीतिक नाटक ने मलयालम भाषा के नाटक साहित्य पर चार चाँद लगा दिये हैं। देशी राज्य तिरुवितांकूर में जो-जो राष्ट्रीय आन्दोलन हुए, उन सबकी छाया इस रचना में दिखाई पड़ती है।

तानाशाही के अन्त के साथ जनतंत्र की महिमा और विजय भी तन्मयता-पूर्वक इसमें लेखक ने दिखायी है। इनका नाम कृष्णपिल्ला है। केशवदेव तकषि, शिवशंकर पिल्ला, पोनकुन्नम वर्क्की आदि लेखकों ने भी कई नाटक लिखे हैं।

नाट्य-रचना पर नया दृष्टिकोण

यूरोप के नाटककारों में इब्सन का नाम मुख्यात है। उस भूखंड के लोगों की सामाजिक अवस्था पर उन्होंने कई नाटकों की रचना की है। इब्सन ने अपनी रचनाओं में मन की दशा, आन्तरिक प्रेरणाएँ आदि मनुष्य को किस प्रकार प्रभावित करती हैं, यह दिखाया है। नाटक-रचना की पुरानी रीति को तोड़कर उन्होंने एक नयी शैली अपनायी जिसका स्वागत लोगों ने बड़े प्रेम से किया। इब्सन के कई नाटकों का अनुवाद मलयालम में आरम्भ हो गया है। ए० बालकृष्ण पिल्ला ने 'प्रेतङ्ङल' का अनुवाद किया। सी० नारायण पिल्ला ने 'मुल्लटक्कल भवनम्' नामक एक सामाजिक नाटक रचा। प्रस्तुत रचना इब्सन के 'रोसम्र्रोम' का अनुवाद है। अनुवादक ने इस ग्रंथ का रूपान्तर स्वतंत्र रीति से किया है। क्रमशः 'डोलस हौस' 'Enemy of the People' आदि नाटक भी मलयालम में अनूदित किये गये। इब्सन की नाटक-रचना को आदर्श मानकर मलयालम साहित्य में उस सरणी का बीज श्री एन० कृष्णपिल्ल ने बोया। अनुकूल वातावरण पाकर वह बीज अच्छी तरह अंकुरित हुआ, पल्लवित हुआ और फूला-फला। सर्वत्र इसकी शाखाएँ फैल गयीं। श्रीकृष्ण पिल्ला की अमूल्य कृतियों में उत्तम भग्नभवनम्, कन्यका, बलाबलम्, अनुरंजनम् आदि प्रसिद्ध हैं।

पतन की ओर जानेवाले एक कुटुम्ब का चित्रण भग्नभवन (टूटा मकान) में खींचा गया है। विधि के आगे किसी का दखल नहीं, यही इसका प्रतिपाद्य विषय है। किसी साधारण मनुष्य की पुत्री एक आदमी को प्यार करती है, किन्तु परिणाम यह निकलता है कि उसका व्याह ऐसे व्यक्ति के साथ

होता है जिसे वह प्रयत्न करने पर भी प्यार नहीं कर सकती। उसकी दूसरी पुत्री भी पति के साथ कष्टमय जीवन बिताती है, तीसरी पुत्री एक निर्मम विषयलंपट के पंजे में पड़कर बड़ी यातना भोगती है। अपनी सन्ततियों की दयनीय स्थिति देखकर माँ-बाप को बड़ा दुःख होता है। यही है इस नाटक की कथावस्तु। मानसिक अवस्थाओं का विश्लेषण इसमें अच्छी तरह किया गया है। उस घर के लोगों पर जो आपत्तियाँ पड़ती हैं उन्हें देखकर पाठक का हृदय द्रवीभूत हो जाता है। यह कृति पाठकों को सोचने-विचारने की ठोस सामग्री प्रदान करती है।

उनकी अन्य रचना कन्यका भी जीवन में होनेवाली समस्याओं को मूर्त रूप में उपस्थित करती है। स्त्री के लिए विवाहित जीवन अनिवार्य है, यह लेखक ने साबित किया है। आफिस में काम करनेवाली एक स्त्री पहले तो तीस वर्ष तक अविवाहित रहती है, किन्तु परिस्थितियों से लाचार होकर वह अपने कार्य से इस्तीफा देकर अपने नौकर से शादी करने के लिए घर, माँ-बाप, नातेदार आदि को छोड़कर कहीं चली जाती है। यही 'कन्यका' की कथावस्तु है। सास के अत्याचारों से पुत्रवधू किस प्रकार तंग होती है, इसका चित्रण मनोवैज्ञानिक ढंग से नाटककार ने 'बलाबलम्' में किया है। मानसिक अवस्थाओं का विश्लेषण करते हुए लेखक ने अन्य कई रचनाएँ की हैं, जिनसे उनका नाम मलयालम साहित्य में अमर हो गया है।

सामाजिक प्रश्नों को सुलझाकर उपस्थित करनेवाले भी कई नाटक लिखे गये हैं। उनमें मुहम्मद बशीर का 'कथा-बीज', के० टी० मुहम्मद का 'करवट्ट पशु' और सी० जे० तोमस्स का 'अवन वीण्डुम वरुन्नु' (वह फिर भी आनेवाला है) आदि मुख्य हैं।

संगीत-नाटकों का निर्माण कुछ काल के लिए रुक-सा गया था। धीरे-धीरे लोगों का ध्यान उस ओर आकर्षित होने लगा। नये-नये नाटकों की रचना हुई। प्राचीन काल के नाटकों की अपेक्षा इन नाटकों में सामयिक प्रश्न, भावयुक्त गीत, प्रश्नों को सुलझाने के उपाय आदि का समावेश खूब हुआ है। प्रचलित शासन की खूब हँसी उड़ाते हुए तोप्पिल भासी ने

'निङङ्ल एन्ने कमूणिस्ट आक्कि' (तुमने मुझे कम्यूनिस्ट बनाया) नाटक लिखा। इसकी शैली इतनी प्रभावशाली हुई कि केरल के कोने-कोने में इस नाटक का अभिनय हुआ और हजारों की संख्या में लोग इस नाटक को देखने के लिए उत्सुक हो उठे। 'विशक्कुन्न करिंकालि', 'मुटियनाय पुत्रन' (धूर्त पुत्र) ये दो संगीतनाटक भी भासी ने लिखे हैं। सामान्य जनता के जीवन को भली-भाँति प्रतिबिंबित करनेवाले संगीतनाटकों में चेरुकाट का 'नम्नलोन्न' (हम एक हैं), के० टी० मुहम्मद का 'इतु भूमियाण' (यह भूमि है) आदि उत्तम माने जाते हैं।

पौराणिक कथाओं को आधार भानकर स्वर्गीय वी० कृष्णन तंपी ने ताटकावध, ध्रुवन आदि संगीत-नाटक लिखे। ताटकावध में ताटका को दानवी के रूप में न रखकर नाटककार ने एक स्त्री-गुण-संपन्ना मानवी के रूप में चित्रित किया है, यह इस नाटक की विशेषता है। के० एम० पणिक्कर के नाटक मण्डोदरी में वर्त्तमान काल के अनुसार पात्रों का चित्रण हुआ है। श्री उल्लूर के उत्तम तथा उज्ज्वल गद्य-नाटक 'अंबा' का अध्ययन करते समय ऐसा मालूम पड़ता है कि उन्होंने पौराणिक आदर्शों का प्रचार करने में बड़ा परिश्रम किया है। श्री कैनिक्करा पद्मनाभ पिल्ला ने यवनिका, अग्निपंजर, विधिमण्डप आदि नाटक लिखे हैं। उनमें मनोवृत्तियों का सूक्ष्म विश्लेषण पर्याप्त किया गया है।

श्री जी० शंकर कुरुप्प, के० सुरेन्द्र, जी० विवेकानन्द, टी० एन० गोपीनाथन नायर जैसे कलाकारों ने संध्या, अरक्किलम, केटाविलक्क (अनबुझा दीप), स्वप्नमेखला आदि स्वप्नात्मक नाटक (Dream plays) लिखकर नाट्यसाहित्य में एक विशेष शैली प्रचलित की। टी० एन० गोपीनाथन नायर ने अपने नाटकों में ऐसे कथापात्रों की सृष्टि की है जो इस दिशा में एक नया परिवर्तन सूचित करते हैं। उनके नाटकों में पूक्कारि का नायक पुलिसमैन, प्रतिध्वनि का खूनी आदि पात्र एक विशेष ढंग के हैं। रंगमंच पर खेलने योग्य नाटकों में नायर के नाटक बहुत सुन्दर निकले हैं। इनके कथापात्रों के संभाषण में यद्यपि सजीवता नहीं दिखाई पड़ती,

तो भी आदि से अन्त तक ये नाटक मनोरंजक हैं। लोगों को हँसाने तथा रिझाने में इन्होंने अच्छी सफलता पायी है।

सुखान्त नाटकों के स्तर को ऊँचा उठाने के उद्देश्य से कैनिक्करा कुमार पिल्ला ने वेषङ्ङल और अग्निपरीक्षा ये दो नाटक लिखे। आधुनिक काल के जीवन की भिन्न-भिन्न समस्याओं पर भी कई नाटकों का निर्माण हुआ। प्रसिद्ध युवक नाटककारों में के० टी० मुहम्मद, मुहम्मद यूसुफ, सुरेन्द्र, ओंचेरी नारायण पिल्ला, तिक्कोटियन आदि गणनीय हैं। किन्तु इन लोगों की रचनाओं में हास्यरस सम्बन्धी बातों का अभाव देखा जाता है। छोटी-सी बात को लेकर शब्दाडम्बर के साथ इन्होंने अपनी कथावस्तु को बढ़ाने का भरसक प्रयत्न किया है। इससे रचना का महत्त्व घट गया है। 'ओराल कूटि कल्लनायि' (और भी एक चोर हो गया) पुस्तक का कथानक बहुत कम वाक्यों में लिखा जा सकता था। के० टी० मुहम्मद के नाटकों पर मुसलिम समुदाय के आचार-विचार, रहन-सहन, संभाषण की शैली आदि का खूब प्रभाव पड़ा है। उनकी नवीन शैली लोगों को बहुत पसन्द आयी। इस समय मलयालम भाषा में सैकड़ों नाटकों की रचना हुई, विस्तार-भय से उनका केवल संकेत ही किया जा सका है।

एकांकी नाटक

एकांकी नाटक आजकल बड़ी संख्या में लिखे जाने लगे हैं। ऐसा एक भी मासिक या साप्ताहिक पत्र नहीं है जिसमें कम से कम दो या तीन एकांकी नाटक न प्रकाशित किये जाते हों। एकांकियों में के० एम० कृष्ण पिल्ला का कमण्डलु, कल्लानाणयम (झूठा पैसा), जी० विवेकानन्द का जीवित-तरङ्ङल, केशवदेव का समरकवि, तोण्डुकारी आदि मुख्य हैं। आनन्द-कुट्टन, डा० के० एम० जार्ज, पाला गोपाल नायर, नरेन्द्रनाथ आदि तरुण कलाकार इस शाखा को पुष्ट करने के लिए जी-तोड़ प्रयत्न कर रहे हैं।

अठारहवाँ अध्याय

लघु कथाएँ

मलयालम साहित्य की विविध शाखाओं में लघु कथा साहित्य चरम सीमा पर पहुँच चुका है। मलयालियों के लिए अभिमान की बात है कि हाल में ही लघु कथाओं की प्रतियोगिता में के० टी० मुहम्मद की रचना को भारतीय साहित्य में प्रथम स्थान प्राप्त हुआ है। कथाओं की संख्या निर्बाध गति से बढ़ती जा रहीं है। हजारों की संख्या में कहानियाँ निकल चुकी हैं। अतः यहाँ स्थलसंकोच के कारण उनका केवल सिंहावलोकन किया गया है।

आरम्भ में अंग्रेजी की नकल करके कुछ लोग मलयालम में कथाएँ लिखते थे। उनका प्रकाशन 'विद्याविनोदिनी', 'भाषापोषिणी', जैसी मुख्य मासिक पत्रिकाओं में हुआ। कहानीकारों में ओटुविल कुञ्ञु कृष्ण मेनोन सी०-एस० गोपाल पणिक्कर, आंपाटी नारायण प्पुतुवाल, के० सुकुमारन, ई० वी० कृष्ण पिल्ला आदि माने जाते हैं।

कुञ्ञुकृष्ण मेनोन की 'नालु कथकल' (चार कहानियाँ) में केरल प्रान्त की सामाजिक अवस्था का प्रतिबिम्ब हम देख सकते हैं। घटना-प्रधान प्रस्तुत कथाओं का अन्त विवाह में होता है। मनोरंजन का अच्छा मसाला इनमें मिलता है। कल्याणिकुट्टि, जानु आदि उनकी प्रसिद्ध कथाएँ हैं। प्राचीन केरल की ऐतिहासिक घटनाओं के आधार पर जी० कुञ्ञिरामन नायर ने कई कहानियाँ लिखी हैं जो अद्भुत रस-प्रधान हैं।

आंपटि नारायणप्पुतुवाल ने सरस भाषा में प्रभावात्मक ढंग से किंवदन्तियों पर अनूठी कथाएँ लिखीं। इनमें किसी व्यक्ति के जीवन को स्पर्श

करनेवाली कोई बात नही पायी जाती। वाक्यशैली की दृष्टि से उनकी पटुता श्लाघनीय है।

'सुकुमार कथा मंजरी' के नाम से के० सुकुमारन ने अनेक कहानियाँ लिखकर कथासाहित्य में अमर स्थान पा लिया है। पात्रों का संवाद, सुन्दर कथावस्तु, आदि से उनकी कहानियाँ ऊँचे स्तर की मानी जाती हैं। यद्यपि जीवन के विभिन्न पहलुओं पर लेखक ने प्रकाश नहीं डाला तो भी उनकी कहानियाँ आदि से अन्त तक मधुर तथा आनन्दप्रद मालूम पड़ती हैं। साधारणतः उनकी कथाओं का सारांश इस प्रकार है—"एक तरुणी है। उसे प्राप्त करने के लिए कुछ नौजवान कोशिश करते हैं। इसी सिलसिले में उनके बीच संघर्ष होता है। अन्त में एक की विजय होती है और वह उस तरुणी का पति बन जाता है।" उनकी सभी रचनाओं में एकरूपता मिलती है, भाषा सरस है, शैली आकर्षक और अनूठी है। हास्य-रस प्रधान इनकी उक्तियाँ पढ़कर लोग अतीव प्रसन्न होते हैं।

कहानी-साहित्य का युग-परिवर्तन

हास्यसम्राट् ई० वी० कृष्णपिल्ला के आगमन से कहानी साहित्य का आदिपर्व समाप्त हो जाता है। उनकी प्राथमिक कथाएँ 'केलीसौधम' नाम से चार भागों में प्रकाशित हुई हैं। उन्होंने प्राचीन परम्परा का उल्लंघन कर पाश्चात्य शैली का अनुकरण किया है। कथाओं में सजीवता का समावेश प्रचुर होने के कारण उनकी रचना हृदयग्राही होती है। इन कहानियों ने लोगों के हृदय में एक प्रकार की हलचल मचा दी है। उनकी 'प्रेमदास्यम्' नामक कहानी का आकर्षक सारांश इस प्रकार है—एक पुरुष किसी युवती को अपनी प्रिया बनाने के लिए जीतोड़ प्रयत्न करते हुए भी विफल मनोरथ होता है। उस युवती का ब्याह दूसरे व्यक्ति से हो जाता है। प्रथम पुरुष अत्यन्त निराश होकर सोचता है कि मैं अपनी प्रेमिका का दास बनकर जीवन बिताऊँगा। तुरन्त वह उस स्त्री के घर जाता है और उसका सेवक बनकर कृतकृत्य हो जाता है। कृष्णपिल्ला

की कहानियों में कथा-पात्रों का स्वतंत्र व्यक्तित्व पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है।

ई० वी० के समान भवत्रातन नंपूतिरि और राम वार्यरियर भावप्रधान तथा प्रेमात्मक कहानियाँ लिखकर मलयालम को समृद्ध बनाने में सफल हुए हैं। वारियर के कहानी-संग्रह 'बाष्पांकुरम्' और 'वनान्तरंगम्' हैं जिनमें मर्म स्पर्शी घटनाओं का चित्र खींचागया है।

भवत्रातन की कथाएँ नंपूतिरि समुदाय की भिन्न-भिन्न समस्याओं के आधार पर लिखित हैं। दहेज प्रथा से गरीब लोग कितने तंग होते हैं इसका रूप मर्मस्पर्शी ढंग से नंपूपिरि ने 'आत्माहुति' में दिखाया है। एक नंपूतिरि परिवार का पुरुष धनाभाव से अपनी सयानी बेटी का ब्याह करने में बहुत दिन तक असमर्थ रहा। किसी न किसी प्रकार विवाह का निश्चय हुआ। किन्तु उसके पूर्व दिन अपनी गृहिणी तथा प्यारी बेटी का कष्ट देखकर पिता आत्महत्या कर डालता है। यही है आत्माहुति की कथावस्तु। दहेज की प्रथा को मिटाने के लिए प्रस्तुत कहानी ने गहरा प्रभाव डाला है। इनकी एक कहानी 'विधवयुटे विधि' (विधवा की विधि) में नंपूतिरि समाज की विधवाओं की दयनीय स्थिति का मार्मिक चित्रण किया गया है।

ललितांबिका अन्तर्ज्जनम ने भी भवत्रातन के समान अपने समाज की कुरीतियों, अन्धविश्वासों तथा अनाचारों को मिटाने के लिए सरस कहानियों द्वारा भरसक प्रयत्न किया है। धीरे-धीरे कहानीकारों का ध्यान यथार्थवाद की ओर मुड़ने लगा; यह अन्तर्ज्जनम की कथाओं से हम समझ सकते हैं। उनके प्रकाशित कहानी-संग्रहों में अंबिकांजलि, मूटुपटत्तिल (परदे में), तकर्न्न तलमुरा आदि महत्त्वपूर्ण हैं।

लघुकथा साहित्य के दूसरे युग के प्रमुख प्रवर्तक तकषी शिवशंकर पिल्ला, केशवदेव, वैकम बशीर, पोनक्कुन्नम वर्क्की, एस० के० पोट्टक्काट, कारुर नीलकण्ठ पिल्ला, पी० सी० कुट्टिकृष्ण आदि हैं। उपन्यास शाखा को पुष्ट करने में भी इन्होंने खूब योग दिया है, जिसका जिक्र पहले हो चका है।

तकषी शिवशंकर पिल्ला

तकषी ने सबसे पहले 'मोम्पासा' जैसे प्रसिद्ध विदेशी साहित्यकारों की कहानियों के अनुसार लघु कथा रचना आरम्भ की। इस पथ पर उनसे पहले मलयालम में आचार्य बालकृष्ण फ्रेंच साहित्य के यथार्थवाद को स्वीकार कर लिखने लगे थे। तकषी ने कुट्टनाट[१] इलाके में और समुद्र किनारे रहने वाले लोगों की दुर्दशा का वर्णन प्रभावशाली शैली में किया है। सच्ची स्थिति का चित्र खींचते समय उन्होंने बड़े साहस से काम लिया है। यौन विषय सम्बन्धी घटनाएँ लिखते समय तकषी ने किसी का लिहाज नहीं किया। लोगों की दृष्टि में इन प्रसंगों की चर्चा असभ्यतापूर्ण मानी जाती है। किन्तु ये असभ्य बातें छिपी तौर पर तथाकथित सभ्य मनुष्य लगातार अपनाते रहते हैं। यह चीज़ तकषी के हृदय में खटकी। अपने को सभ्य समझने वाले लोग तकषी की कृतियाँ पढ़कर उत्तेजित हो उठे। पर उन्होंने किसी की परवाह नहीं की। दलित वर्ग का उत्थान करने और उनमें प्रचलित अन्धविश्वासों तथा अनाचारों को मिटाने का उन्होंने बड़ा यत्न किया और सफलता पायी। दूषित प्रथाओं पर उनकी तेज कलम खूब चली है। गरीबों की दयनीय स्थिति का चित्रण करके उनकी ओर सहानुभूति दिखाने का आह्वान तकषी द्वारा अच्छी तरह हुआ है।

कुट्टनाट ऐसा प्रदेश है जहाँ के निवासी बाढ़ से हर साल अत्यन्त पीड़ित होते हैं। उनकी ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करने के लिए लेखक ने एक कुत्ते की कहानी लिखी है। जल-प्रलय से बचने के लिए एक कुत्ता किसी मकान के छप्पर पर आश्रय पाता है। उस प्राणी की दशा का वर्णन पढ़कर लोगों को जल-प्लावन की भयंकरता का बोध हुआ। उसके फल स्वरूप उस प्रदेश की बाढ़ से रक्षा करने के लिए बाँध बाँधे गये हैं। जैसे

१. केरल के एक इलाके का नाम।

डाक्टर लोग आपरेशन द्वारा रोग की जड़ दूर करते हैं वैसे ही तकषी अपनी रचनाओं से समाज की बीमारी को दूर कर देने में सफल हुए हैं। तकषी मधुर वचनों और उपदेशों द्वारा लोगों के सुधारने के पक्ष में कभी नहीं हैं। कबीर के समान चुटीली बातों से लोगों के हृदयों को घायल करके उनमें परिवर्तन लाने का उन्होंने खूब प्रयत्न किया। उन की लघु-कथाओं की संख्या लंबी है। इन्कलाब, मकलुटे मकल (बेटी की बेटी), प्रतीक्ष-कल (प्रतीक्षाएँ), प्रतिज्ञा आदि विविध नामों से उनकी कहानियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं।

केशवदेव

समाज में से उच्च-नीच की भावना हमेशा के लिए मिटाने का उपाय केशवदेव ने अपनी लघु कथाओं के द्वारा किया। गरीबों का आदर समाज नहीं करता, चाहे वे सर्व गुणसंपन्न हों, विद्वान् हों। किन्तु जिसके पास धन है उसका आदर सब कहीं होता है। समाज की इस नीति का देव ने आदि से अन्त तक लंघन करने का उपदेश जोश भरे वाक्यों में दिया। सामान्य जनता के सामने अपने को सच्चा, सीधा तथा त्यागी दिखाने का प्रयत्न करनेवालों की भीतरी हालत का वर्णन तीखी शैली और मँजी हुई भाषा में करके उनसे सावधान रहने का उपदेश वे देते रहते हैं। तकषी के समान देव भी गरीबों की अच्छी तरह वकालत करते हैं। सामान्य जनों के जीवन पर प्रकाश डालकर उनके आचार-विचार और रहन-सहन के बारे में कहानियाँ लिखने में देव ने कमाल किया है। 'भीनकारन कोरन' (मछली-वाला कोरन) जैसी मनोवैज्ञानिक ढंग की कहानियाँ लिखने में भी लेखक सिद्धहस्त हैं। किसी भी प्रकार के व्यक्ति या समाज के संबंध में ओजपूर्ण शैली में कथाएँ लिखने में देव की योग्यता प्रशंसनीय है।

कलापूर्ण ढंग से लिखी हुई इनकी कहानियाँ मलयालम साहित्य की अमूल्य निधि हैं। लघुकथा-संग्रह में प्रधान दीनाम्मा, भाविवरन, रेड-वालण्टियर आदि हैं। उलक्का (मूसल), मातृहृदयम्, कामुकन्टे कत्त

(कामुक का खत) आदि लंबी कथाएँ भी लेखक ने लिखी हैं। पहले वे साम्यवाद के हिमायती थे, पर अब उन्होंने कांग्रेस के आदर्शों पर लिखना तथा भाषण करना शुरू किया है। एक मज़दूर के रूप में वे जनता के सामने आये थे और अब मज़दूरों की उन्नति में ही लीन रहते हैं।

एस० के० पोट्टक्कट

राजमल्लि, जलतरंगम्, हिमवाहिनी, चन्द्रकांतम्, मेघमाला आदि लगभग अठारह कथाकुंजों का निर्माण करके एस० के० पोट्टक्काट ने लघु कथा साहित्य पर अमिट छाप लगा दी है। लेखक ने संसार के विभिन्न देशों में रहनेवाले लोगों की स्थिति पर कलम चलायी है, यह उनकी अपनी विशेषता है। प्रकृति वर्णन में भी दूसरों से वे आगे हैं। हास्यरस-प्रधान उनकी रचनाओं में जीवन की कठिनाइयों का चित्रण पाया जाता है। उनकी कथाएँ पढ़कर हमारे मन को एक प्रकार की शान्ति मिलती है। पर देव तथा तकषी की कहानियाँ पढ़ने पर पाठक का मन समाज के प्रति क्षुब्ध हो उठेगा। लेखक ने संसार के विभिन्न भागों में भ्रमण किया है, वहाँ के लोगों से निकट संपर्क रखा है, उन लोगों के आचार-विचार, रहन-सहन आदि से खूब परिचय प्राप्त किया है। इन सब बातों का प्रभाव उनकी रचनाओं पर पड़ना स्वाभाविक है। उनकी लघु-कथाएँ पढ़ते समय ऐसा मालूम पड़ता है मानों रसभरी कविताएँ पढ़ी जा रही हों।

वैकम बशीर

जीवन की यंत्रणाओं के शिकंजे में पड़कर सदा कष्ट झेलनेवाले भावुक बशीर ने अपने धर्म के लोगों की दयनीय अवस्था का चित्रण करते हुए कई लघु कथाएँ लिखी हैं। अपने अनुभव से वे लोगों को समझाते हैं कि जहाँ देखो वहाँ दुःख ही दुःख है। अपना अस्तित्व स्थिर रखने के लिए मानव आपस में संघर्ष करते हैं। अधिकार पाने के लिए किसी भी प्रकार का घृणित कार्य करने में वे तत्पर दिखाई पड़ते हैं। यद्यपि उनकी अधिकांश कहानियों

में शोक छाया हुआ है, तो भी वे जीवन से ऊबते नहीं। कहीं-कहीं उनमें हास्य की रेखा भी दिखाई पड़ती है। संग-रहित व्यक्ति के समान वे सबका निरीक्षण करते हैं। अपने समाज की बिगड़ती दशा पर उन्होंने कथाएँ लिखी हैं और लिख रहे हैं। कथा-संचयों में मुख्य जन्मदिनम्, मुच्चीट्टु कलि, विशप्प (भूख), स्थलत्ते दिथन्, पात्तुम्मायुटे आट (पात्तुम्मा की बकरी) आदि हैं। बशीर तथा उनके घर के लोगों के जीवन की झाँकी उनकी रचनाओं में ही मिलती है।

पोनकुन्नम वर्की

ईसाई धर्म के पुरोहितों की तानाशाही, सांसारिक कार्यों में उनका भ्रम, उस समाज की समस्याएँ; इन सब विषयों पर पोनकुन्नम वर्क्की ने सुन्दर शैली में अनेक लघु कथाएँ लिखी हैं। इनके पहले और किसी को ऐसी बातों पर लिखने का साहस नहीं हुआ। ओज तथा जोश से भरी उनकी रचनाएँ पढ़कर अधिकारी तथा पुरोहित वर्ग तिलमिला उठा। समाज की कुरीतियाँ तीखे ढंग से लिखकर उन्होंने लोगों के सामने रखीं जिससे बहुत लोग उनके दुश्मन बन गये। किन्तु उन्होंने उसकी तनिक भी परवाह न कर अपना काम जारी रखा। पुरोहितों ने उनको धर्मच्युत करने की धमकी दी, तरह-तरह की यातनाएँ पहुँचायीं, पर वे अपने पथ पर अटल बने रहे। विकारसदनम्, अणियरा (रंगमंच) निवेदनम्, आरामम् आदि अनेक कथा-संग्रह उन्होंने प्रकाशित किये हैं।

के० सरस्वती अम्मा

महिलाशिरोमणि के० सरस्वतियम्मा ने विवाहसम्मानम्, पोन्नुमकुटम्, कलामन्दिरम्, स्त्रीजन्मम् इत्यादि कथा-समुच्चय प्रकाशित करके मलयालम कहानी शाखा की पुष्टि की है। मधुर बातें करके तथा लोभ दिखा कर कन्याओं का सतीत्व भंग करनेवाले युवकों की हँसी उड़ाते और कोसते हुए लेखिका ने अनेक कथाएँ रची हैं। पुरुषों की स्वार्थलोलुपता तथा

कामुकता दिखाने के लिए उन्होंने चुटीली भाषाशैली का प्रयोग किया है। समाज में जहाँ स्त्रियों के विरुद्ध अन्याय, अनीति और अत्याचार दिखाई पड़ते हैं वहाँ उनका सामना करने के लिए सरस्वती अम्मा अपनी बहनों को बुलाकर आवेशभरे सन्देश सुनाती हैं। स्त्रीसमुदाय का उत्थान करने में लेखिका दत्तचित्त रहती है। सामाजिक प्रश्नों के अलावा और विषयों पर भी सरस्वती अम्मा ने कई कहानियाँ लिखी हैं, किन्तु वे उतनी महत्त्वपूर्ण नहीं हैं।

पी० सी० कुट्टिकृष्णन

हास्यरस प्रधान कहानियाँ लिखने में पी० सी० कुट्टिकृष्णन का स्थान बेजोड़ है। उनकी रचनाएँ पाठक के हृदय को जगाती हैं, समझाती हैं और अतीव आनन्द देती हैं। भावनासंपन्न लेखक ने जीवन के अनुभवों के आधार पर सुन्दर, सरस तथा मर्मस्पर्शी कहानियाँ लिखकर लोगों को प्रभावित करने में अद्‌भुत सफलता पायी है। लोगों पर वे आदर्शों को लादते नहीं, बल्कि रसमयी घटनाओं का चित्रण कलापूर्ण ढंग से करते हैं। लोग उसमें डूब जाते हैं और अन्त में आनन्द के कूल पर पहुँचते हैं। पाठकों को वे धोखा नहीं देते। हम पूर्ण रूप से उन पर विश्वास कर सकते हैं। कृत्रिमता का नामोनिशान उनकी कहानियों में नहीं पाया जाता। ग्रामीण लोगों की बोली में उनकी वाक्‌पटुता प्रशंसनीय है। 'उरूब' उपनाम से वे कहानियाँ और उपन्यास लिखते हैं। नवोन्मेषम्, तुरन्निट्ट, जालकम् (खुला द्वार), निलावेलिच्चम् (चन्द्रिका, चांदनी) आदि उनके कथा-संग्रह प्रकाशित हो गये हैं।

कारूर नीलकंठ पिल्ला

कारूर नीलकण्ठ प्पिल्ला ने अध्यापक लोगों की गिरी हुई अवस्था का वर्णन उन्मुक्त भाव से करके लोगों का ध्यान उनकी ओर खींचा है। किसी भी भयानक घटना का वर्णन स्थिर-चित्त से करने की क्षमता वे

रखते हैं जो और किसी कहानीकार में नहीं पायी जाती। उनके कथापात्रों में अध्यापक, किसान, धर्मपुरोहित, हिन्दू-मुसलिम-ईसाई आदि विभिन्न वर्ग तथा व्यवसाय के व्यक्ति मिलते हैं। उन्होंने सब प्रकार के मानवों से संपर्क रखा है। कथावस्तु ग्रामीण जीवन है। उद्वेगरहित हैं उनकी कहानियाँ। पढ़ते समय हमें ऐसा अनुभव होता है कि मानो लेखक हमारे पास बैठकर कथा सुना रहा हो। प्रसादात्मकता लेखक की निजी विशेषता है। हँसी-मज़ाक करने में कारूर की बराबरी करनेवाला शायद ही कोई हो। इरुट्टिल (अँधेरे में), गृहनायिका, मेल्विलासम् (पता), ओरु पिटि मण्ण (एक मुट्ठी मिट्टी) वगैरह कई कहानीसंग्रह कारूर ने प्रकाशित किये हैं।

अपने तथा आसपास के गाँवों में रहनेवालों के जीवन पर नागवल्लि आर० एस० कुरुप्पु ने नेटुवीरप्पुकल (लंबी साँस), मिण्डाप्राणिकल, पंप विलक्कु आदि नौ से अधिक कथाचयन प्रकाशित किये हैं। इनकी कथाओं में विषाद की छाया रहती है, कहीं-कहीं मधुरता भी रहती है। इनकी शैली निराली है। कथावस्तु के चयन में उन्होंने अद्भुत कुशलता दिखायी है। इनके सतत प्रयत्न के फलस्वरूप आकाशवाणी के द्वारा छोटी-छोटी कहानियों को प्रसारित किया जा रहा है। तरुण कलाकार वेट्टूर रामन नायर, मज़दूरों के प्रतिनिधि राफी, टी० पत्मनाभ, ई० कोऊर, चेल्लप्पन नायर, एन० पी० मुहम्मद आदि बहुत-से सहृदयों ने मलयालम में कहानियाँ लिखी हैं। केरल सरकार के भूतपूर्व शिक्षामंत्री प्रोफेसर जोसेफ मुण्डश्शेरी ने कटाक्षम्, सम्मानम् आदि कथा-संग्रह लिखकर प्रकाशित किये हैं। इन लोगों के अतिरिक्त के० टी० मुहम्मद, नन्तनार, जी० विवेकानन्दन, ए० के० बालकृष्ण पिल्ले जैसे कई तरुण कहानीकारों ने सुन्दर-सुन्दर कथाएँ लिखकर मलयालम कथा-साहित्य को विश्व साहित्य में स्थान दिलाया है। हर सप्ताह कई कहानियाँ प्रकाशित की जा रही हैं। उन सब पर पूर्ण रूप से लिखना शक्ति के बाहर की बात है। इसका हम गर्व कर सकते हैं कि कथा-साहित्य की उन्नति शीघ्रता से हो रही है। मौलिक

कहानियों के अतिरिक्त अंग्रेजी, रूसी, फ्रेंच, जर्मन, इटालिय, चीनी, उर्दू, मराठी, हिन्दी, बँगला आदि विदेशी तथा देशी भाषाओं से अनेक कहानियाँ अनूदित होती रहती हैं। लोगों में जाग्रति पैदा करने में ये सब कहानियाँ सहायक हो रही हैं।

उन्नीसवाँ अध्याय

आधुनिक कविता

कविकुल सम्राट् कुंचन नंप्यार के देहान्त के बाद कविता-क्षेत्र में बड़ा परिवर्तन हुआ। संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग बहुत कम होने लगा। पर उस भाषा के सरल शब्दों की सहायता से कविगण कविता रचने लगे। मलयालम तथा संस्कृत के सरल शब्दों से मिली हुई यह नवीन शैली सबके लिए आकर्षक बन गयी। इस शैली के अनुसार कविता रचनेवालों में प्रधान स्थान वेण्मणि-निवासी नंपूतिरि कविद्वय को देना चाहिए। दोनों कवि पिता-पुत्र थे। वे वेण्मणि अच्छन नंपूतिरि और मकन नंपूतिरि नाम से पुकारे जाते हैं। किसी भी प्रकार के मनुष्य के स्वभाव और प्रवृत्तियों के चित्रण में उन दोनों की अद्‌भुत सामर्थ्य है। सुन्दर, सुकोमल और हास्यभरी भाषा में मित्रों, नातेदारों और नौकर-चाकरों के चित्र खींचना उनकी आदत थी। सबसे पहले वे विनोद के रूप में यह सब लिखते थे। विनोद में उनका अभिनिवेश इतना बढ़ गया था कि ईश्वर की स्तुति में भी उसका समावेश होने लगा। हास्य तथा श्रृंगार-रस-प्रधान कविताओं के निर्माण में इन दोनों का स्थान अतुल्य है।

इनके पूर्ववर्त्ती कवि पौराणिक कथाओं को आधार मानकर कविता रचते थे। किन्तु इन दोनों ने देश के बड़े-बड़े उत्सवों आदि का वर्णन अच्छी तन्मयता से किया। वेण्मणि महन नंपूतिरि ने तिशिवपेरुर नगरी के उत्सव 'पूरम' पर बहुत सुन्दर कविता रची। उत्सव देखने के लिए आनेवाले विभिन्न जाति के लोग, उनका स्वभाव, वेश-भूषा, रमणियों का आगमन, उनकी बातचीत; इन सबका वर्णन सरस कोमल कान्त पदावली में किया

गया है। उस कविता की मनोहारिता के कारण इनका खूब नाम हुआ। इन कवियों की और एक विशेषता यह है कि यदि कोई विषय या कोई आदमी इनको पसन्द न आता तो संकोचरहित होकर ये उसकी कड़ी आलोचना हास्यपूर्ण ढंग से करते थे। कोई बात कहें या लिखें तो उसमें हास्य का पुट अवश्य होता था। इसी से स्त्रियों के संबंध में वर्णन करते समय अश्लील भावनाएँ उसमें आ जाती थीं। शोक, स्वाभाविक प्रेम आदि मनोवृत्तियों की ओर इनका ध्यान नहीं गया।

यद्यपि ऐसे दोष उनकी कविता में पाये जाते हैं, तो भी कवियों की मार्मिकता, वाक्पटुता, रसज्ञता आदि की प्रशंसा करनी ही पड़ती है। वर्णन में भी उन्होंने अनोखी प्रतिभा दिखायी है। महन नंपूतिरि का "पूरप्रबन्ध" उत्तम काव्यग्रंथ समझा जाता है। श्रृंगार रस प्रधान कविताओं के साथ ही हम उनके ऐसे पद भी देख सकते हैं जिनमें श्रृंगार रस का स्पर्श तक नहीं हुआ है। कवित्व की दृष्टि से उनकी कविताओं को प्रथम स्थान दिया जा सकता है। इन्होंने आधुनिक कवि ा की जो धारा चलायी है उसके अनुसार कोटुङङल्लूर निवासी कोच्चुण्णि तंपुरान, कुञ्ञकुट्टन तंपुरान, कात्तुल्लि अच्युत मेनोन, शिवोल्लि नंपूतिरि, कुण्टूर नारायण मेनोन, कोट्टारत्तिल शंकुण्णि आदि प्रतिभासंपन्न नवीन कवियों ने कविता रचना आरंभ किया। कुञ्ञकुट्टन तंपुरान की कृतियों में पालुल्लिचरितम्, केरलम्, कूटल माणिक्यम्, तुप्पलकोलांबि आदि प्रबन्धकाव्य उत्तम माने जाते हैं।

शुद्ध मलयालम भाषा में लिखित कोमप्पन, कण्णन, शक्तन तंपुरान् आदि भावप्रधान काव्य साहित्य की अमूल्य निधियाँ हैं। उनके रचयिता कुण्टूर नारायण मेनोन हैं। इन ग्रंथों में अश्लील साहित्य का अभाव रहता है। ऊपर कहे हुए कवियों की कविताओं में साधारण मनुष्य के जीवन की जटिल समस्याओं की झाँकी नहीं मिलती। ऐसा मालूम होता है कि जीवन की कठिनाइयों की ओर उनका ध्यान ही नहीं गया। वे सुखी और संपन्न थे, हमेशा भोग-विलास में डूबे रहते थे। यह तो स्पष्ट ही है

कि उस समय के लोग सुखमय जीवन बिताते थे, अन्नसंकट, बेकारी, बीमारी आदि से वे विमुक्त थे।

उस समय तक मासिक, साप्ताहिक, दैनिक पत्रों का खूब प्रचार हो गया था। ये पत्र इन कवियों की कविताओं का मूल्यांकन करने का अखाड़ा बन गये। एक कवि अपने विपक्षी के विरुद्ध कोई कविता प्रकाशित करता तो तुरन्त उसके खंडन तथा मण्डन के रूप में विविध प्रकार की कविताओं का प्रकाशन होने लगता था। कविता में चिट्ठियाँ भी लिखी जाती थीं। समस्यापूर्ति के लिए अवसर मिलता था। सारांश यह है कि कविता का प्रचार राजमहल से लेकर झोपड़ी तक व्यापक हो गया। सब प्रकार के व्यक्तियों ने इसमें रस लिया और अपनी शक्ति के अनुसार काव्यक्षेत्र को विशाल बनाने का प्रयत्न किया। पर खेद के साथ लिखना पड़ता है कि ये कविताएँ केवल मनोरंजन का ही काम कर सकी हैं।

अनुप्रास-विवाद

उस समय के कवियों पर फूलों का आरोप करके कात्तुल्लि अच्युत मेनोन ने, 'कवि पुष्पावलि' लिखी। उसमें वेण्मणि अच्छन नंपूतिरि को प्रमुख स्थान नहीं दिया गया। इस कारण उनके पुत्र ने उनके विरुद्ध कविता लिखी। खूब वाद-विवाद हुआ। फल यह निकला कि दोनों ने आपस में कविता के द्वारा डाँट-डपट शुरू की। उसी समय कुञ्ञिकुट्टन तंपुरान ने 'कविभारत' लिखा जिसे लेकर काफी विवाद हुआ। धीरे-धीरे वह आन्दोलन अपने आप रुक गया।

उस समय 'मलयालमनोरमा' नामक समाचार पत्र में किसी अज्ञात व्यक्ति ने मलयालम कवियों के शब्दालंकार भ्रम[१] की कड़ी आलोचना की। उसी क्षण शब्दालंकार की महत्ता पर लेख निकलने लगे। वृत्यनुप्रास,

टिप्पणी—१. शब्दालंकारों के विषय में अति मोह (अधिक रुचि)।

अव्ययानुप्रास, द्वितीयाक्षर प्रास आदि शब्दालंकारों से भरपूर कई कविताओं का निर्माण हुआ। विरोधी दल ने अर्थालंकारों को महत्त्व देकर विवाद आरम्भ किया। उस दल के लोगों ने लिखा कि शब्दालंकारों में खास कर द्वितीयाक्षर प्रास का प्रयोग बिना किये उत्तम कविता रची जा सकती है। उस पक्ष के नेता ए० आर० राजराजवर्मा तथा उनके प्रिय शिष्य के० सी० केशवपिल्ला आदि हैं। विपक्षी दल के नेता राजराजवर्मा के मातुल वलिय कोयित्तंपुरान, उल्लूर एस० परमेश्वरय्यर आदि हैं। उनकी मान्यता है कि द्वितीयाक्षर प्रास[१] कविता के लिए अनिवार्य है। बहुत दिन तक सभा-समाजों और समाचार-पत्रों में बड़ा आन्दोलन चला।

अन्त में जब के० सी० केशवपिल्ला ने 'केशवीय' नामक एक महाकाव्य लिखा, जिसमें द्वितीयाक्षर प्रास का नामोनिशान भी नहीं है, तब जो आंधी चल रही थी वह एकाएक शान्त हो गयी। किन्तु द्वितीयाक्षर का महत्त्व दिखाते हुए उल्लूर ने 'उमाकेरल' महाकाव्य लिखा। कवित्व की दृष्टि से ये दोनों काव्य उत्तम निकले। अन्त में यह निष्कर्ष निकाला गया कि उत्तम कविता लिखने के लिए द्वितीयाक्षर प्रास आवश्यक नहीं है और यदि उसका प्रयोग हो तो उससे कोई हानि भी नहीं हो सकती। इस समय तक अनेक काव्यों का निर्माण हो गया था। संस्कृत के शाकुन्तल नाटक का अनुवाद केरलवर्मा ने मणिप्रवाल शैली में किया है और उसका रूपान्तर उनके भानजे राजराजवर्मा ने स्वतंत्र रूप से किया। जब कि केरलवर्मा संस्कृत भाषा के मायाजाल में फँसे थे, राजराजवर्मा ने मलयालम भाषा की नयी शैली को स्वतंत्र रूप देने का श्लाघ्य यत्न किया।

१. मलयालम में प्रचलित एक शब्दालंकार। पद्य के प्रथम दो चरणों के दूसरे अक्षरों में जहाँ समानता हो वहाँ द्वितीयाक्षर प्रास होता है, यथा—गुरुनाथन तुण, तिरु नामंगल।

उण्णिनीलिसन्देश के बाद मेघसन्देश का अनुवाद राजराजवर्मा ने किया, जिसका बड़ा स्वागत किया गया। जब केरलवर्मा को राजनीतिक कार्यों के कारण अपनी प्रिया से अलग होकर 'हरिप्पाट्ट' नामक स्थान पर रहना पड़ा तब उन्होंने एक उत्तम सन्देशकाव्य लिखा। उन्होंने अपना सन्देश एक मयूर के द्वारा भेजा जिससे उसका नाम 'मयूरसंदेश' हो गया। कहा जाता है कि यह कृति सन्देश-काव्यों में उत्तम है। इसकी शैली आकर्षक, शब्दालंकारों की प्रचुरता और प्रकृति-वर्णन अत्यन्त सरस है। पद-योजना हृदयहारी है। अनेक विद्वानों ने इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है। किंतु कुछ लोगों का कहना है कि हृदयगत विकारों को प्रभावशाली ढंग से चित्रित करने में कवि को पूर्ण सफलता नहीं मिली है। केरलवर्मा ने जो मार्ग दिखाया है उसके अनुसार बहुत-से सन्देशकाव्य लिखे गये। तब इस प्रकार के काव्यों की आलोचना करते हुए शीवोल्लि नंपूतिरि ने 'दात्यूह-सन्देश' रचा, जिससे सन्देश-काव्यों की धारा एकाएक रुक गयी।

इसी बीच संस्कृत साहित्य की काव्य-धारा का अनुकरण कर केरलवर्मा ने अमरुकशतकम् और अन्यापदेशतकम् इन दो ग्रंथों का रूपान्तर किया। किन्तु उनका प्रचार जनता के मध्य में बहुत कम हुआ। सन् १९०२ के बाद करीब बीस वर्षों में मलयालम काव्यक्षेत्र में बड़ी उन्नति हुई। 'रामचन्द्रविलासम्' इस समय का प्रथम काव्य कहा जा सकता है। उसके बाद 'रुक्मांगदचरित' महाकाव्य का प्रकाशन हुआ। इसके लेखक प्रकांड-पंडित, सुशील पन्तलम् निवासी केरलवर्मा तंपुरान हैं। इन्होंने कथा कौमुदी, अजामिलमोक्षम्, वंचीशशतकम् आदि कई काव्य रचे हैं। विद्वानों की राय है कि संस्कृत के 'माघ' कवि का स्थान इन्होंने मलयालम में प्राप्त कर लिया है। के० सी० केशवपिल्ला का केशवीयम्, उल्लूर का उमाकेरलम्, कोच्चुण्णि त्तंपुरान का पांडवोदयम्, मलयामकोल्लम् आदि महाकाव्य उत्तम माने जाते हैं।

ईसाई धर्म के कवियों में चेरियान माप्पिला ने श्रीयेशुविजयम् तथा के० वी० सैमण ने वेद्विहारम् लिखकर काव्य शाखा को पनपाया। 'इस्रा-

येलवंशम्' की गणना भी महाकाव्यों में होती है। कोच्चुण्णि तंपुरान लिखित तीन महाकाव्यों में पाण्डवोदयम् का स्थान प्रथम माना जाता है। विराट पर्व की कथा इस ग्रंथ का वर्ण्य विषय है। महाकाव्य के सभी लक्षण इसमें विद्यमान हैं। अवसर के अनुसार विभिन्न रसप्रधान घटनाओं के वर्णन में कवि ने मौलिकता दिखायी है।

तिरुवितांकूर तथा कोच्चि देश के इतिहास पर तंपुरान ने दो महाकाव्य लिखे हैं। उनके और एक महाकाव्य 'मलयांकोल्लम्' में केरल की प्रकृति का वर्णन सुन्दर रूप से किया गया है। प्रत्येक भाग में केरल की प्रकृति किस प्रकार बदलती रहती है, इसके चित्रण से कवि का रचना-कौशल सूक्ष्म निरीक्षण, कल्पनाशक्ति, ज्योतिष, वैद्यक, पुराण, इतिहास आदि में उनके अगाध पांडित्य का परिचय पाठक को मिलेगा। कवि की अटल ईश्वर-भक्ति इस काव्य में दिखाई पड़ती है। रुक्मिणी के स्वयंवर को लेकर कात्तुल्लिल अच्युत मेनोन और कोच्चुण्णि तंपुरान, इन दोनों ने एक महा-काव्य रचा है।

सर्वतोमुखी प्रतिभा रखनेवाले कुञ्ञिकुट्टन तंपुरान ने कविभारतम्, अंबापदेशम्, पालुल्लिचरितम् कंसन आदि दस महाकाव्य मलयालम में रचे हैं। इनके अतिरिक्त उन्होंने कई रूपक, गाथा, खण्डकाव्य आदि भिन्न-भिन्न प्रकार की रचनाओं से भाषा की सेवा की है। वे साहित्य-नभोमण्डल के कवि, गद्यलेखक, आलोचक, गवेषक, और संपादक के रूप में जाज्वल्यमान मार्तण्ड बन गये हैं।

इस प्रकार एक ओर महाकाव्यों का निर्माण बड़ी संख्या में हो रहा था, दूसरी ओर खण्डकाव्य भी लिखे जाने लगे। कल्पनाप्रधान खण्ड-काव्यों में उच्च स्थान के० सी० केशवपिल्ला के 'आसन्नमरणचिन्ताशत-कम्' को देना चाहिए। मृत्युशय्या पर पड़े हुए एक केरलीय की चिन्ताओं का मार्मिक तथा सजीव चित्रण बड़ी तन्मयता से इसमें किया गया है। वह व्यक्ति बाल्यावस्था, यौवनावस्था तथा वृद्धावस्था में व्यतीत जीवन, अपने मित्र, स्त्री, पुत्र, पौत्र आदि के संबंध में स्वयं विचार कर कितना

दुखी होता है, इसका प्रतिबिम्ब उसमें पाया जाता है। इसे 'आत्मगीत' कहने में अनौचित्य नहीं होगा। सुन्दर कविता-रचना की प्रतियोगिता के लिए बहुत कम समय में यह काव्य लिखा गया है और इस पर कवि को प्रतियोगिता-पुरस्कार मिला है। खेद है कि इस कविता की रचना के कुछ समय बाद कवि की मृत्यु हो गयी। इस प्रसंग पर, अर्थात् जब कोई मनुष्य मृत्युशय्या पर रहता है उस समय की चिन्ताओं, भावनाओं और संकल्पों पर मूलूर पद्मनाभ पणिक्कर जैसे कवियों ने खण्डकाव्य के रूप में कविता रची है। इसकी भी शैली अनूठी है।

कुञ्ञिकुट्टन तंपुरान रचित केरलम्, कूटलमाणिक्यम् जैसे खण्डकाव्यों की चर्चा हो चुकी है। कुण्टूर नारायण मेनोन और सुब्रह्मण्यन पोट्टि जैसे विद्वानों ने अंग्रेजी से प्रेरणा पाकर खण्डकाव्यों का निर्माण किया। नारायण मेनोन की वीर तथा श्रृंगार रसप्रधान पुस्तकें जोशभरी कविताओं के संग्रह हैं। प्रसिद्ध वीर तच्चोल्लि तेनन के शौर्य, प्रेम आदि पर भी उन्होंने कविता रची है। विलापकाव्य के रूप में पोट्टि ने रचना की है। अत्यन्त प्रिय व्यक्ति के निधन पर पोट्टि ने उसके प्रति अपनी स्मरणांजलि अर्पित की है। मित्र के विरह से मन का आकुल होना, जीवन की क्षणभंगुरता, मृत्यु की अनिवार्यता, इन सबका चित्रण उसमें पाया जाता है। अपनी प्रिय पुत्री के देहान्त पर पोट्टि ने एक विलापकाव्य रचा है जिसकी कविता बहुत ही सुन्दर है। एम० राजराजवर्मा का प्रियविलाप करुणापूर्ण है। राजराजवर्मा ने इस धारा में अनेक कविताएँ लिखी हैं, उनमें प्रधान मलयविलासम् है। मद्रास से आते समय कोल्लम के पूर्व भाग में स्थित घनी पर्वतमालाओं तथा ऊँचे वृक्षों का वर्णन भी बड़ी तन्मयता से किया गया है। प्रकृति के वर्णन में कवि ने यहां यथेष्ट मौलिकता दिखायी है।

विलापकाव्य लिखनेवालों में वी० सी० बालकृष्ण पणिक्कर का स्थान बहुत ऊँचा है। २६ वर्ष की युवावस्था में उनका देहान्त हुआ। वे एक उज्ज्वल नक्षत्र के समान अतुल प्रकाश फैलाते हुए साहित्य-गगन में प्रकट हुए और थोड़ी ही देर में विलुप्त हो गये। सोलह वर्ष की उम्र के

पहले ही उन्होंने कुमारचरित्रम् नाटक, नंगानंदम् आदि छः कृतियाँ रचीं, कई मुक्तक भी लिखे। उनके विलापकाव्य की कथावस्तु यों है—एक युवा पुरुष की प्यारी स्त्री के शीतला रोग से छटपटाकर मर जाने पर वह विलाप करता है। उस समय आस-पास रहनेवाले लोग उस भयंकर रोग से भयभीत होकर अन्यत्र चले जाते हैं। सब ओर श्मशान-स्थल की मूकता छा जाती है। कोई सहायता करनेवाला नहीं है। अपनी प्राणप्यारी को गोद में लिटाकर वह युवक अन्तिम यात्रा का सन्देश कहता है।

वह दृश्य सचमुच कारुणिक है और हृदय को झकझोर देनेवाला है। पूर्वकाल का स्मरण करके वह जीवन की क्षणभंगुरता का अनुभव करता है। फिर तत्त्वचिन्ता में लीन होकर कहता है—"हमारा यह पंच-भूतमय शरीर अनित्य है। मनुष्य केवल उस महाशक्ति के इशारे पर नाचनेवाला प्राणी है। जन्म के साथ ही मृत्यु जीव को हरण करने का मौका देखती रहती है।" यद्यपि ये सब बातें उसके मुँह से निकलती हैं तो भी उसका दुःख जरा भी शान्त नहीं होता। इस प्रकार का शोकपूर्ण काव्य बहुत कम ही लिखा गया है। यह कहना अत्युक्तिपूर्ण नहीं कि विलापकाव्य रूपी हीरों में यह काव्य कोहनूर के सदृश है।

समग्र दिन सागर के किनारे खड़े होकर प्रकृति के भिन्न-भिन्न दृश्यों को देखने से पणिक्कर के हृदय में जो अनुभूति हुई उसका सजीव रूप उन्होंने अपनी प्रसिद्ध कृति "विश्वरूप" में दिया है। पणिक्कर बड़े अध्ययनशील व्यक्ति थे। टामस ग्रेवर्ड्सवर्थ आदि अंग्रेज कवियों का प्रभाव उन पर खूब पड़ा है। उनकी मृत्यु से केरली की अपूरणीय क्षति हुई है। जब तक केरली पृथ्वी पर रहेगी तब तक वह अपने इस दुलारे एवं सुयोग्य पुत्र को भूल नहीं सकेगी।

बीसवाँ अध्याय

कुमारनाशान

पणिक्कर के बाद ऐसी एक महान् विभूति का अवतार केरल में हुआ जिसकी प्रकाश-किरणें वर्तमान काल में भी केरलवासियों के अज्ञानान्धकार को मिटाने में सहायता दे रही हैं। वे स्वर्गीय महाकवि कुमारनाशान हैं।

कुमारनाशान का असली नाम कुमारन था। आशान शब्द का अर्थ है गुरु। साधारणतः प्राथमिक शिक्षा देनेवालों को केरल में 'आशान' कहकर पुकारते हैं। कुमारन ने संस्कृत में पाण्डित्य प्राप्त करके जब लड़कों को पढ़ाने का काम शुरू किया तब से वे 'कुमारनाशान्' नाम से प्रसिद्ध हुए। सन् १८७२ के लगभग उनका जन्म चिरयिनकीष नामक तहसील के कायिक्करा गाँव में हुआ। उन्होंने बंगलोर और कलकत्ता जाकर संस्कृत का गहरा ज्ञान प्राप्त किया। बचपन से ही शृंगार रसप्रधान कविता की रचना में उनकी रुचि थी। संयोग से संन्यासिवर्य श्री नारायण गुरु से उनकी भेंट हुई। गुरु का प्रभाव आशान पर खूब पड़ा। उसी दिन से भक्ति की ओर उनका मन झुक गया। कलकत्ते में रहते समय बंगाल के कई पंडितों से उनका परिचय हुआ और श्री रामकृष्ण परमहंस, विवेकानन्द जैसे आध्यात्मिक गुरुओं का उन पर प्रभाव पड़ा। बंकिम, रवीन्द्र आदि उद्भट साहित्यकारों की कृतियों से साहित्य में जो परिवर्तन हुए उनसे भी वे यथेष्ट परिचित हुए।

अध्ययन समाप्त कर स्वदेश लौटते ही वे अपने गुरु के चलाये संघ के नियम पालन में दत्तचित्त रहने लगे। उस संघ का नाम 'श्री नारायण धर्म-परिपालन योगम्' (एस० एन० डी० पी०) है। उसमें आशान ने महत्त्वपूर्ण

भाग लिया। लोगों ने समझा कि कुमारनाशान अपने गुरु के अनुसार गेरुए वस्त्र पहनकर संन्यास ले लेंगे। उनको चिन्न स्वामी (छोटा स्वामी) नाम दिया गया। किन्तु अचानक उनका विवाह हो जाने पर लोगों में बड़ी खलबली मच गयी। अन्त में यह पता लगने पर कि गुरु के उपदेश के अनुसार ही आशान ने विवाह किया है, वह हलचल रुकी।

आरंभिक काल में आशान ने शंकरशतकम्, सौन्दर्यलहरी (अनुवाद), विचित्रविजयम् (नाटक) आदि लिखे। उनकी प्रौढ़ कृतियों में प्रधान वीणपूव (गिरा फूल), नलिनी, लीला, श्रीबुद्धचरितम्, बालरामायणम्, प्ररोदनम्, चिन्ताविष्टयाय सीता, पुष्पवाटी, दुरवस्था, करुणा इत्यादि हैं। राजयोगम्, मनःशक्ति, मैत्रेयी आदि गद्य ग्रंथों की रचना उन्होंने की है। वीणपूव (गिरा फूल) के रचनाकाल में मलयालम साहित्य में रोमाण्टिक कविताएँ बड़े पैमाने पर लिखी जा रही थीं। एक पुष्प जो लता से टूटकर पृथ्वी पर गिर पड़ा, तो भावुक कवि उसे देखकर बोल उठता है—हे पुष्प ! तू उन्नत पद पर एक रानी के समान विराजमान था। अतः तेरी दयनीय स्थिति देखकर मुझे इसमें जरा भी सन्देह नहीं है कि इस संसार में ऐश्वर्य क्षणभंगुर है। एक निमिष के पहले तू कितना कान्तिमान् था। वह छबि कहाँ चली गयी। अन्त में वे स्वयं अपने को सान्त्वना देते हैं; इस संसार में जितने प्राणी हैं उन सब की गति यही है। मानवजन्म की गति-विधि, नाश आदि का आरोप इस पुष्प के ऊपर किया गया है। एक छोटी-सी वस्तु के सहारे उपनिषद् ग्रंथों का सार आशान के समान विरले ही कवि समझा सकते हैं।

'वीणपूव' भावगीत

वीणपूव की कथा-वस्तु इस प्रकार है—जब पुष्प अपनी सुगंध चारों ओर फैला रहा था तब बहुत-से भ्रमर उसके पास मँडराते हुए मकरन्द का पान करने में मग्न थे। जब वह मकरन्द रहित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा तब कोई भी उसके पास नहीं आ रहा था। हाँ, एक भ्रमर चारों ओर

गुंजन करता हुआ दिखाई पड़ता है, मानो वह अपनी प्रिया की दयनीय स्थिति देखकर रो रहा हो और पत्थर पर सिर पटक रहा हो। कुछ समय बाद वह भी चल देता है। मनुष्य की भी यही हालत है।

हिन्दी में भी मानव के सुख-दुःख का आरोप प्रकृति की विभिन्न वस्तुओं पर करते हुए आशान के समान, पन्त, महादेवी वर्मा, निराला आदि कवियों ने कविताएँ लिखी हैं। वे छायावादी कवि संप्रदाय में आते हैं। अतः आशान को मलयालम का छायावादी कवि कहना असंगत नहीं है। वे यही समझाते हैं कि दीर्घकाल तक जीवन विताकर लोगों को कष्ट पहुँचाते हुए जीने की अपेक्षा उस अल्पजीवी पुष्प का जीवन धन्य है। अपने प्रियजनों की मृत्यु के समय लोग चिल्लाते हैं, कराहते हैं, सिर धुनते हैं। भ्रमर के द्वारा कवि उपदेश देते हैं कि संसार की गति यही है, यह जीवन एक दीर्घ स्वप्न के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। इस पुस्तक ने एक नयी दिशा की ओर लोगों का आह्वान किया है। यद्यपि शेली, कीट्स जैसे कवियों का प्रभाव इस पर दिखाई पड़ता है तो भी भारतीयता की छाप पूर्ण रूप से झलकती है। इसका प्रत्येक पद्य अमूल्य रत्न के समान है।

नलिनी और लीला

प्रेम के महत्त्व की दुहाई देनेवाले आशान ने अपनी कृति नलिनी और लीला में सच्चे प्रेम का परिचय दिया है। नलिनी के आरंभ में नायक दिवाकर को एक योगी के रूप में कवि ने उपस्थित किया है। इसके साथ ही योगिनी नलिनी के आगमन, दोनों के संभाषण आदि का चित्रण भी है। अन्त में मालूम होता है कि दिवाकर नलिनी का प्रेमी है, किन्तु दोनों समाज की कठोर नीति के कारण पति-पत्नी नहीं बन सके। नलिनी और दिवाकर बचपन के साथी थे। एक साथ उनकी शिक्षा-दीक्षा हुई थी। जब दोनों बड़े हुए तो नलिनी ने अपना हृदय अपने प्रेमी पर निछावर कर दिया। पर दोनों का विवाह न हो सका। दोनों को अत्यन्त निराशा के साथ घरबार और देश छोड़ना पड़ा। पर अन्त में उनका समागम हो गया। ये सब बातें प्रेमी

और प्रेमिका के संवाद द्वारा कवि पाठकों को समझाता है। अपनी ओर से वह स्वयं कुछ नहीं कहता। यही इसकी विशेषता है।

उसी प्रकार और एक कथा है जिसके पात्र लीला और मदन प्रणयसूत्र में बँध जाते हैं। किन्तु उनका विवाह संपन्न होने में बाधाएँ उपस्थित होती हैं और लीला का विवाह एक धनवान् व्यापारी के साथ निश्चित होता है। यह खबर पाकर मदन उन्मत्त हो जाता है। वह लीला का नाम पुकार-पुकार कर चिल्लाते हुए घूमता फिरता है। लीला का विवाह संपन्न होता है, पर कुछ समय के बाद वह विधवा हो जाती है। अपनी सखी माधवी के द्वारा लीला को ज्ञात होता है कि उसका प्रेमी मरा नहीं है, बल्कि पागल होकर मारा-मारा फिरता है। तुरन्त लीला अपने प्रियतम के पास पहुँचती है। एक मिनट के पुर्नमिलन के बाद मदन आत्महत्या कर डालता है। लीला भी उसी समय नदी में कूदकर प्रिय के साथ अपना शरीर छोड़ती है। अन्त में माधवी सूक्ष्मशरीरी लीला-मदन को उपदेश देती है। यही है वर्णित-वस्तु। ये दोनों कविताएँ रचना की दृष्टि से उत्तम मानी जाती हैं। ऐसा मालूम पड़ता है कि लैला-मजनू की प्रेमकथा के आधार पर इस पुस्तक 'लीला' का निर्माण किया गया हो। जटिल समाजव्यवस्था के कारण सच्चे प्रेम को निबाहने के लिए युवक-युवतियों को अपने जीवन की आहुति देनी पड़ती है; यह हम 'लीला' में देखते हैं।

विलापकाव्य

मलयालम भाषा को सब प्रकार से समुन्नत बनाने के लिए जिन महापुरुषों ने अनवरत प्रयत्न किया, उनकी मृत्यु पर शोक प्रकट करते हुए कुमारनाशान ने 'प्ररोदनम्' विलापकाव्य लिखा, जिसमें इस प्रपंच का पूरा रहस्य दिखाया गया है। कवि का स्नेहसिक्त हृदय जिस प्रकार अपने पूज्य गुरु के विरह में फूट-फूटकर रोता है उसका मर्मस्पर्शी चित्रण पाठक इसमें देख सकते हैं। 'उत्तर रामायण' की कथा को अवलंब मानकर 'चिन्ताविष्टयाय सीता' (चिन्ताकुल सीता) में कवि ने रामचन्द्रजी की कहानी पर कड़ी आलोचना की है जो इस पुस्तक की विशेषता है। सीता को केवल मानवी

के रूप में कवि ने दिखाया है। मूर्ख लोगों की बात मानकर अपनी प्राणप्यारी को घने जंगल में हिंस्र जन्तुओं के बीच में राम छोड़ देते हैं। इस प्रसंग पर सीता के विचार कुछ कठोर हो जाते हैं। तो भी अन्त में पतिदेव से विदा माँगकर हमेशा के लिए सीता देवी इस धरती को छोड़ जाती हैं। प्रस्तुत खण्ड-काव्य की वर्णित वस्तु यही है। इसमें करुण रस की प्रधानता दिखायी गयी है। मनोवैज्ञानिक ढंग की रचना होने के कारण इसका प्रभाव लोगों पर खूब पड़ा है।

विषमता निवारक कृतियाँ

कुमारनाशान का जन्म उस समय की एक निम्न जाति में हुआ था। अस्पृश्यता के कारण उस समाज के लोगों को बड़े कष्ट झेलने पड़ते थे। कवि ने बचपन में अनेक यंत्रणाएँ सहन कीं। उनको प्रतीत हुआ कि अस्पृश्यता के निवारण से ही भारत में, खास कर हिन्दू जनता के बीच, शान्ति कायम होगी। बुद्धदेव का जीवन उनके हृदय को आदर्श मालूम पड़ा। बुद्धदेव के शिष्य ने जाति-पाँति का विचार तोड़कर एक चाण्डालकन्या पर कृपा-कटाक्ष रखकर उसे अपनी शिष्या बनाया था। इस कन्या को लेकर कुमारनाशान ने 'चण्डाल भिक्षुकी' की रचना की जो हिन्दू-धर्म के दुराचारों को मिटाने में सहायक सिद्ध हुई। इसमें बुद्धदेव की विश्व-भावना, समदृष्टि, स्नेह, उदारता, निस्स्वार्थ तत्परता तथा दयालुता की खूब प्रशंसा है। इसी समय बुद्धचरित के आधार पर अंग्रेजी में 'लाइट आव एशिया' नामक ग्रंथ रचा गया, जिसका रूपान्तर आशान ने सजीव भाषा में किया है।

कुलीन लोग निम्नकुल में जन्म लेनेवालों को अपना क्रीतदास समझते थे। उन्हें वे अपने पास आने नहीं देते थे। उनका विश्वास था कि यदि अछूत लोग उन्हें छू लें तो वे अपवित्र हो जायँगे। अस्पृश्य लोगों को मन्दिर में पूजा करने की अनुमति नहीं थी। उनके इस व्यवहार से बहुत-से अछूत

मुसलमान तथा ईसाई बनने लगे। ईसाई-मुसलमान बन जाने पर वे कुलीन हिन्दुओं के पास जा सकते थे, उनके जैसा व्यवहार कर सकते थे। आशान जैसे सच्चे, सीधे तथा संस्कृत चित्त व्यक्तियों को उच्च कुलवाले प्रतिक्रियावादी हिन्दुओं का यह बर्ताव अच्छा न लगा। उनका मन उन अत्याचारों की ओर से विद्रोही बन बैठा। फलस्वरूप निम्न कथावस्तु उन्होंने रची—मलबार के मुसलमानों तथा हिन्दुओं के बीच बड़ा भारी दंगा शुरू हुआ। जिसमें उच्च कुलवाले नंपूतिरि समुदाय के कई व्यक्ति मारे गये और कुछ मुसलमान बनाये गये। इस भगदड़ के बीच एक नंपूतिरि कन्या ने संयोग से एक पुलयन की झोपड़ी में शरण ले ली। (यह वर्ग अस्पृश्य समझा जाता था।) पुलयन युवा चात्तन ने कन्या का बड़ा सत्कार किया और मुसलमानों के अत्याचार से उसे बचाया। अनन्तर कन्या सावित्री असमंजस में पड़ी कि अब क्या करना चाहिए। वह जानती थी कि यदि मैं अपने गाँव जाऊँ तो मेरे संबंधी लोग मुझे दुत्कारेंगे और समाज से च्युत कर देंगे। अतएव मेरे लिए सुरक्षित स्थान इस झोपड़ी के अलावा और कहीं नहीं है। अन्त में उसने अभय-दाता चात्तन से विवाह करने की इच्छा प्रकट की। आरंभ में चात्तन कहता है कि मेरा स्थान कहाँ है और उच्च-कुल-जाता आपका स्थान कहाँ, जमीन आसमान का फरक है। सावित्री उसके तर्कों का खंडन करती हुई कसम खाकर कहती है कि इस जन्म में और किसी को अपना पति नहीं बनाऊँगी। अन्त में विवाह संपन्न होता है।

भविष्य में जाति-पाँति का भेद मिट जायगा, इसकी सूचना उक्त रचना द्वारा कवि पहले ही दे देता है। सावित्री की दुर्दशा का चित्रण इस कृति में बड़ी तन्मयता से खींचा गया है। अतः इसका 'दुरवस्था' नाम यथार्थ ही है। कवि ने यह भी दिखाया है कि सच्चे प्रेम में जाति-पाँति; आचार-विचार, रहन-सहन आदि बाधा नहीं डाल सकते, बाधा डाली जाय तो भी अन्त में सच्चा प्रेम सफल होता है। इस काव्य ने तथाकथित कुलीनों के बीच बड़ा आन्दोलन खड़ा कर दिया। पर कुछ समय के बाद वह अपने आप शान्त हो गया।

कवि की अन्तिम कृति 'करुणा' का स्थान उनके ग्रन्थों में अद्वितीय समझा जाता है। प्रसिद्ध वेश्या वासवदत्ता की जीवनी है इस काव्य की कथावस्तु। इस पर कवीन्द्र रवीन्द्र ने 'फलचयन' (Fruit gathering) नामक सुन्दर-कविता रची है जिसका अनुवाद अंग्रेजी में भी किया गया है। हिन्दी में 'मिलन मुहूर्त' कहानी इसी विषय पर लिखी गयी है। 'करुणा' का सारांश यह है—

मथुरा नगरी में वेश्या वासवदत्ता अत्यन्त भोगविलास करती हुई दिन बिताती है। उसके अपूर्व सौन्दर्य से आकृष्ट होकर राजा, रईस, धनाढ्य सब उसके किंकर बन गये थे। संयोग से बौद्ध भिक्षु उपगुप्त के दर्शन करने से वासवदत्ता बहुत प्रभावित हुई। उसने भिक्षु से प्रेम-याचना की। भिक्षु ने कहा "अभी समय नहीं है, फिर किसी दिन आऊँगा।" उसकी प्रतीक्षा में वासवदत्ता बहुत काल तक अपने सपनों में मग्न बैठी रही। इसी आशा से उसका सन्देश लेकर उसकी सखी भिक्षु के पास पहुँची। उसको भी वही उत्तर मिला।

इधर वासवदत्ता भ्रष्टाचार में अब भी लीन रहती है। एक दिन पैसे के प्रलोभन में पड़कर उसने अपने एक प्रेमी का वध कर डाला। न्यायालय में मुकदमा चला। उसके कान, नाक आदि अंग काट लिये गये और श्मशान के रास्ते में एक तरफ वह लिटा दी गयी। कराल यातना में पड़कर वह अन्तिम साँस ले रही थी। उपगुप्त अपने वचन के अनुसार वहां उपस्थित हुए। उन्होंने मधुर तथा सारवचन कहकर उसे सान्त्वना दी और अपने मठ की ओर ले गये। वह अन्त में चंगी होकर भिक्षुणी बन जाती है। इस कथा पर आशान की कविता सरस और प्रभावात्मक हुई है। अलंकार तथा पदयोजना में आशान की सामर्थ्य गजब की है। मथुरा पुरी में वासवदत्ता के महल का वर्णन, उसकी कुबेर-पदवी और श्मशान में उसकी दयनीय स्थिति आदि का वर्णन अति मार्मिक है।

आशान की कविताओं की विशेषता यह है कि उन्होंने निरर्थक शब्दों का प्रयोग नहीं किया है, भड़कीला शब्दाडंबर भी नहीं अपनाया है। आशय

स्पष्ट करने के लिए वे परिमित शब्दों का प्रयोग करते थे। पूर्वकालिक महापुरुषों का आशय समझने में कवि की प्रतिभा अमोघ है। जिन-जिन विषयों पर उनको लिखना अभीष्ट होता था उनके संबंध में वे भली-भाँति सोचकर ही अपनी लेखनी चलाते थे।

समय-समय पर पाठकों का ध्यान अपनी ओर खींचने में आशान कुशल थे। वे लोगों को हँसाते थे, रुलाते थे और सोचने-विचारने का खूब अवसर देते थे। कवि ने भावगीत लिखकर मलयालम में एक नयी धारा को जन्म दिया। इसके पहले अन्य भाषाओं में भावगीत (lyrics) लिखे गये थे। भावगीत में अपने अशान्त मन को सरल उपदेशों द्वारा स्वस्थ बनाने का प्रयत्न किया जाता है। उनका प्रथम भावगीत 'कलकण्ठगीत' है। इससे कवि अपने मनरूपी कोयल को उपदेश देता है कि यह संसार झूठा है, अनित्य में शाश्वत सुख समझना निरी मूर्खता है, संन्यास में ही शान्ति मिलती है। प्रयत्न करके शान्ति-देवता, मंगलमय भगवान् शिव का आश्रय लेने से इहलोक और परलोक आनन्दमय प्रतीत होगा।

कुलीन लोगों के अत्याचार के कारण हरिजनों को होनेवाले कष्टों और उस समय की उनकी विचार-तरंगों का चित्रण 'तीयक्कुट्टियुटे विचारम्' (हरिजन बालक के विचार) पुस्तक में मिलता है। इस ढंग की कई पुस्तकें कवि ने लिखी हैं। वे परम भक्त के रूप में पहले प्रसिद्ध हो चुके थे, उस काल में उनके द्वारा कई स्तुति-गीत लिखे गये। फिर आत्मज्ञान सम्बन्धी कविताओं का निर्माण हुआ। वे स्नेह की मूर्ति थे। हमेशा लिखा और कहा करते थे कि संसार की सार वस्तु स्नेह के अतिरिक्त और कुछ नहीं। अपने पूज्य गुरुदेव राजराजवर्मा की मृत्यु पर लिखित विलाप-गीत से उनकी भावुकता, सरलता तथा निष्कलंक हृदय का परिचय पाठक को मिलता है।

जब आशान ने व्याह कर लिया और अपने समाज की उन्नति के लिए बीड़ा उठाया तो लोग उन पर फबतियाँ कसने लगे। अखबारों में उनकी कड़ी आलोचना करते हुए कई लेख प्रकाशित हुए। इससे उनको बड़ा

दुःख हुआ। उस समय उन्होंने आत्मगीत लिखा, जिसका नाम है 'गाँव के वृक्ष पर बैठी कोयल' (ग्राम वृक्षत्तिले कुयिल)। उसमें आशान कोयल हैं जो एक आदर्श सेवक के समान सब तरह का अपमान सहते हुए लोगों का भला करने में लीन रहते हैं। कोयल अपने सुहावने पंचम स्वर से सभी संतप्त जनों को आनन्द-रसमग्न करती है। उसी प्रकार आशान का ध्येय था ऊँच-नीच भावना के बिना सबको शान्तिमय संदेश पहुँचा देना। भावगीतों में इस कृति का स्थान सबसे उत्तम माना जाता है।

आशान ने विभिन्न प्रकार की कृतियों से मलयालम-साहित्य में एक नया युग स्थापित कर दिया है। स्वामी विवेकानन्द ने पतंजलि महर्षि के योगसूत्रों पर टिप्पणियों के साथ राजयोग पर एक पुस्तक अंग्रेजी में लिखी है, जिसका रूपान्तर आशान ने सुन्दर गद्यशैली में किया है। वह पुस्तक आध्यात्मिक क्षेत्र के पथिक जिज्ञासुओं के लिए कल्पतरु के तुल्य है। किं-बहुना, गद्य तथा पद्य में सुन्दर-सुन्दर रचनाएँ लिखकर आशान ने विश्व-साहित्य में ऊँचा स्थान प्राप्त कर लिया है।

इक्कीसवाँ अध्याय

वल्लत्तोल नारायण मेनोन

केरली के प्रतिभाशाली सेवकों में श्री वल्लत्तोल नारायण मेनोन को अद्वितीय कहने में जरा भी अत्युक्ति न होगी। उन्होंने रूस, चीन, जैसे देशों में भ्रमण कर अपनी मातृभाषा की विशेषताओं पर अनेक भाषण किये हैं और उसकी विशेष संपत्ति 'कथकळि' का परिचय वहाँ के लोगों को कराया है। उसी का परिणाम है कि केरली का नाम देश-विदेश तथा द्वीप-दीपान्तरों तक फैल गया। इसके पहले मलयालम का नाम भारत के अन्य प्रान्तों में भी बहुत कम लोग जानते थे। उत्तर भारत के लोग मद्रास का नाम सुनते थे और दक्षिण में रहनेवाले सभी को मद्रासी कहकर पुकारते थे। वे लोग यह जानते थे कि यहाँ चार भाषाएँ बोली जाती हैं और मलयालम करीब डेढ़ करोड़ लोगों की मातृभाषा है। हर्ष के साथ कहना पड़ता है कि श्री वल्लत्तोल की यात्रा के बाद दूर देशों में रहनेवाले लोग भी मलयालम के संबंध में कुछ जान सके और कथकळि पर उन्होंने अधिक ज्ञान प्राप्त कर लिया है। कथकळि के विशेष गुणों की ओर जो लोगों का आकर्षण बढ़ा है, इस सबका कारण कवितिलक वल्लत्तोल ही हैं। अत्यन्त प्रतिकूल परिस्थिति में पले होने पर भी कवि की प्रतिभा का उन्मेष बढ़ता ही गया; यही उनकी विलक्षणता है।

प्रारंभिक जीवन में उन्होंने संस्कृत का अभ्यास शुरू किया। पिता ने अपने पुत्र को कविता के विषय में ज़रा भी प्रोत्साहन नहीं दिया। संयोग से दामोदरन नंपूतिरि नामक एक सहृदय से उनका परिचय हुआ। धीरे-धीरे उन दोनों का निकट संपर्क बढ़ने लगा। कहा जाता है कि बालकवि वल्लत्तोल

प्रति दिन कम से कम दस छन्द मलयालम में रचते थे। शब्द-योजना पर अधिक ध्यान दिया जाता था। अनुप्रास-प्रधान कई मुक्तकों का निर्माण हुआ। क्रमशः कवि की दृष्टि महाकाव्य लिखने की ओर गयी। कालिदास के 'ऋतुसंहार' को आधार मानकर वल्लत्तोल ने एक ग्रंथ लिखा, जिसका नाम 'ऋतुविलासम्' रखा गया।

द्राविड़ वृत्तों में काव्य रचना

उन्नीसवीं सदी के आरंभ में मलयालम भाषा में अनेक महाकाव्यों की रचना हुई। विद्वान् लेखकों की यह धारणा थी कि जो व्यक्ति महाकाव्य रचता है उसी को समाज में उन्नत स्थान मिलता है। अतएव वल्लत्तोल ने सोचा होगा कि मैं भी क्यों न एक महाकाव्य की रचना कर डालूँ? उसके फलस्वरूप उन्होंने महाकाव्य के सिद्धान्तों के अनुसार 'चित्रयोग' की रचना की। कवित्व की दृष्टि से यह प्रथम श्रेणी का महाकाव्य नहीं समझा जाता। फिर उन्होंने दण्डकारण्य नामक एक लघु काव्य लिखा। इसकी पद-योजना तथा अलंकार-योजना प्रशंसनीय है। कई रसपूर्ण प्रसंगों का समावेश इसमें पाया जाता है। वर्णित विषय दण्ड राजा की करतूत है। राजा दण्ड अपने गुरु भार्गव के उपवन में टहल रहा था। अचानक उसकी दृष्टि गुरुपुत्री पर पड़ी। उस रमणी का अपूर्व सौन्दर्य देखकर दण्ड मोहित हो गया और उसे अपने वश में करने की चेष्टा करने लगा। किन्तु उसके न मानने पर अन्त में राजा ने बलात्कार किया। यह समाचार सुनकर मुनि कुपित हुए और शाप दिया कि हे राजा! तुम्हारा राज्य, प्रताप, प्रजा सब कुछ नष्ट हो जाय। मुनि के शाप से दण्ड-राज्य का नाश हुआ। वहाँ घोर जंगल बन गया 'दंडकारण्य' की कविता आदि से अन्त तक सुन्दर है। कामान्ध राजा की कुचेष्टाएँ, उसका प्रलाप, उस रमणी के प्रत्युत्तर आदि प्रसंग अत्यन्त सरस हो गये हैं।

इसके अनन्तर अम्बास्तवम्, ओरनुमोदनम् (एक अनुमोदन), मातृ-वन्दनम्, मातृभूमि, वीरपत्नी आदि अनेक कविताएँ कवि ने लिखीं। उनका

प्रकाशन कवनकौमुदी और आत्मपोषिणी में हुआ। इन कविताओं के विषय सामान्य जनता को स्पर्श करनेवाले होते थे, इसलिए वे अत्यन्त लोकप्रिय हुईं। सर्वप्रथम वल्लत्तोल ने ही भाषा-वृत्त में प्रभावशाली ढंग से रचना आरम्भ की। इसको देखकर फिर तो बहुत-से लोग उस पथ पर चलने लगे। इससे पहले द्राविड़ वृत्तों में कविता की रचना प्रायः नहीं होती थी।

सन् १९१० में उन्होंने 'बधिरविलाप' लिखा, जो अत्यन्त करुण रस पूर्ण काव्य है। कवि बधिर थे, अतः इसमें वे अपनी बधिरता को दूर करने की देवी से प्रार्थना करते हैं। यद्यपि इसमें विषाद की छाया है तो भी कवि ईश्वर पर विश्वास तथा भक्ति रखकर प्रसन्न से दिखाई पड़ते हैं। इस काव्य की सरलता सबको हठात् आर्कषित कर लेती है।

प्रेमकाव्य

कवि के प्रेमप्रधान खण्डकाव्य 'बन्धनस्थनाय अनिरुद्धन' (बन्धनस्थ अनिरुद्ध) से मलयालम साहित्य में एक नूतन युग की स्थापना हुई। यह अंग्रेजी के एक खण्ड काव्य की शैली पर रचा गया है। असुरसम्राट् बाण की पुत्री उषा और उसके प्रेमी अनिरुद्ध की प्रेम-कथा इस काव्य का वर्ण्य विषय है। उषा की इच्छा के अनुसार उसकी सखी की प्रेरणा से अनिरुद्ध उषा के यहाँ आ जाता है। दोनों का मिलन, अन्तःपुर में उनका रहना, इस घटना का पता लगने पर बाण का क्रुद्ध होकर आना, अनिरुद्ध और बाण के बीच युद्ध आदि कई रोमांचकारी घटनाओं का चित्रण इसमें पाया जाता है। जब उषा का प्रेमी कारागार में बन्धनस्थ किया जाता है तो वह उसको एक बार देखने के लिए मंत्री से याचना करती है। यह भाग सचमुच हृदयस्पर्शी है। उषा अपने पिता के प्रति रोष दिखाती हुई कहती है—मैंने दूती के द्वारा प्रार्थनापत्र भेजा, इसी के कारण मेरे प्रेमी मेरे पास आये। इसमें उनका अपराध जरा भी नहीं है। ऐसे युवक को अन्याय से कैद में रखना पिताजी के लिए तनिक भी अच्छा नहीं है। यदि दंड देना हो तो मुझे

दीजिए, मेरे प्रेमी निर्दोष हैं। किन्तु अपने क्रोधी स्वामी के सामने मन्त्री क्या कर सकते थे ?

अन्त में उषा अपने प्रेमी के पास कारागार में चली गयी। यह अनिरुद्ध को अच्छा न लगा। वे दोनों आपस में खूब वाद-विवाद करते हैं। इस प्रसंग में नायिका ने जो धैर्य, शूरता तथा आत्माभिमान दिखाया है वह प्रशंसनीय है। अवसरोचित संवादों का ढंग इस प्रकार के शृंगार-रस-प्रधान काव्यों में बहुत कम पाया जाता है। केरल प्रदेशीय, विशेष कर नायर-तरुणियों में दिखाई देनेवाले स्वातंत्र्य-प्रियता, आत्मनिर्भरता आदि गुण इस कृतिमें खूब पाय जाते हैं। कवि ने उषा को वर्तमान काल की वीर तरुणी के रूप में चित्रित किया है। कारागार में उषा का प्रवेश पुराण में नहीं है। यहाँ कवि ने मौलिकता दिखायी है।

वल्लतोल ने इस प्रकार की और एक कृति रची जिसमें दिखाया गया है कि रुक्मिणी का भाई रुक्मी अपनी बहिन को एक पत्र भेजता है। इसे रुक्मी का पश्चात्ताप भी कहा जा सकता है। पत्र में रुक्मी लिखता है कि प्यारी बहिन ! तुम्हारे ब्याह में मैंने जो बाधा डाली थी उसके लिए क्षमा चाहता हूँ। अन्त में रुक्मिणी के पुत्र के साथ रुक्मी की पुत्री का व्याह करने की इच्छा भी प्रकट की गयी है। यह प्रसंग कवि की मौलिक कल्पना है। आदि से अन्त तक यह कविता मधुर है।

'साहित्यमंजरी' काव्यसंग्रह

कवि ने पहले खंडकाव्य के रूप में सैकड़ों छोटी कविताएँ प्रकाशित कीं। फिर 'साहित्यमंजरी' नाम से सबका आठ भागों में संकलन प्रकाशित किया गया। उसके प्रथम भाग में मातृवन्दनम्, मातृभूमि, वीरपत्नी आदि कविताएँ द्राविड़ वृत्त में मिलती हैं। हिन्दी कवि मैथिलीशरण गुप्त ने देशप्रेम से परिपूर्ण जैसी कविताएँ रची हैं उसी श्रेणी में वल्लत्तोल की कविताएँ आती हैं। दोनों ही देश की प्राचीन महत्ता पर विश्वास रखते हैं, दोनों ने ही वर्तमान काल के युवकों में नवचेतना का संचार किया है। वल्लत्तोल की 'उण्णिकृष्णन'

(बालगोपाल) नामक मार्मिक रचना ने कविता-प्रेमियों को खूब आकर्षित किया है। लिखा जा चुका है कि वल्लत्तोल ने द्राविड़ वृत्त में कविता रचकर तरुण कवियों के सामने एक नया दृष्टिकोण रखा, जिसका स्वागत सर्वत्र किया गया।

साहित्यमंजरी के दूसरे भाग में पहले की अपेक्षा और भी गंभीर कविताओं का चयन किया गया है। 'सत्यगाथा', पुराणंङल (पुराण), उण्णानिल्ला, उटुप्पानिल्ला (खाने को नहीं, पहनने को नहीं) आदि में कवि की गंभीरता, उज्ज्वलता, भाव-संपन्नता, रसात्मकता, धर्म-धुरन्धरता और आस्तिकता का आभास प्रचुर मात्रा में मिलता है।

भारत की अतीत महिमा पर लिखी हुई कविता है 'मातृभूमियोट' (मातृभूमि से)। उनकी उत्तम कृति पुराणंङल में हमारे पूर्वज आचार्यों की त्याग-भावना की प्रशंसा की गयी है। वे उसमें कहते हैं—हमारे आचार्य ऐसे महान् थे जिन्होंने समस्त सृष्टि-तत्त्वों का मूल जान लिया। वे विरागी थे, सदा योगानुष्ठान में तत्पर रहते थे, पर्णकुटियों में निवास करते थे, वायु, जल, पत्र आदि से अपना जीवन बिताते थे। उन्होंने जो ग्रंथ रचे हैं वे अमूल्य हैं। उनसे हमारी संस्कृति विकसित हुई है। उन्हीं के कारण हमारा देश अन्यान्य देशों की अपेक्षा उत्कृष्ट माना जाता है।

मंजरी के तीसरे भाग में प्रकाशित राघयुटे, कृतार्थता, कर्मभूमिटे चिन्चुकाल, एण्टे, गुरुनाथन आदि कविताओं का बड़ा स्वागत किया गया। 'एण्टे गुरुनाथ' (मेरे गुरुदेव) कविता में शिष्य वल्लत्तोल ने अपने गुरुवर्य महात्मा गांधी के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित की है। हृदय को स्पर्श करनेवाली कई बातें इसमें लिखी गयी हैं। अपने गुरुदेव के विषय में उनका कथन इस प्रकार है—मेरे गुरुदेव ऐसी महान् विभूति हैं जिनका कुटुंब सारा संसार है। त्याग है उनकी कमाई, वे विनीत भावना को अपनी उन्नति समझते हैं और योगरूपी साम्राज्य में स्वच्छन्द विहरण करते रहते हैं। गुरुदेव निन्दा-स्तुति, मान-अपमान तथा सुख-दुःख से अपने मन को अप्रभावित रखते हैं।

वल्लत्तोल की भावुकता पर चार चाँद लगानेवाली सुमधुर कृति है 'किलिक्कोञ्चल'। त्रेतायुग में जनक राजा की राजधानी के उपवन में जो घटना हुई वही है इसकी कथावस्तु। सीता उद्यान में खेल रही थी। उस समय वाल्मीकि के आश्रम से दो शुक-बालाएँ आकर अपने स्वर में रामायण कथा सुनाने लगीं। जब उन्होंने यह गाया कि श्री रामचन्द्रजी सीता जी को वरण करेंगे, तो सीता जी उठ खड़ी हुई, दौड़ती हुई माँ के पास जाकर पूछा "ये तोते क्या गाते हैं?" बस इतना ही कविता का विषय है। वह कितनी भावुकता के साथ लिखा गया है, यह कहने के लिए शब्द नहीं मिलते। भाषा-योषा के गले में चन्द्रहार के समान यह कृति शोभा पाती है।

वल्लत्तोल और आशान की तुलना

आशान तथा वल्लत्तोल की कविताओं का तुलनात्मक अध्ययन करते समय हमें यह प्रतीत हो जायगा कि आशान एक सत्यान्वषी गंभीर दार्शनिक के रूप में हमारे सामने आते हैं। उसी समय वल्लत्तोल प्रकृति और मानव हृदय की सरलता तथा मधुरिमा का पता लगा रहे है। सैकत पुलिनों, नदियों, हरे-भरे मैदानों और बाललीलाओं का वर्णन करते समय वल्लत्तोल पूर्ण विजयी होते दिखाई पड़ते हैं। प्रेमी-प्रेमिकाओं के चित्रण में भी कवि की प्रतिभा साफ निखर आयी है।

वल्लत्तोल का हृदय एक स्वच्छ तथा सान्त सरोवर है, जहाँ छोटी-छोटी ऊर्मियाँ हिलोरें लेती हैं, सुखद शीतल सुगंधित हवा चल रही है। देश-प्रेम पूरित उनके गीतों में क्षेभ का नामोनिशान भी नहीं है। वे गीत हमारे हृदयों में फूलों का-सा प्रभाव डालते हैं। आशान की कविताएँ पाठकों को चिन्तन करने की सामग्री देती हैं। वल्लत्तोल की सरल कोमल कान्त पदावली सब को सुख पहुँचानेवाली बन जाती हैं और आसानी से बोधगम्य होती है।

आशान की कविताएँ आम जनता के लिए दुर्बोध-सी हैं। यदि उनको किसी की निन्दा करनी होती तो वे तीखे तथा कठोर शब्दों का

प्रयोग करते थे। किन्तु वल्लत्तोल चिकनी-चुपड़ी बातों से निन्दा करते थे।

भारत की आजादी के लिए गांधीजी ने जो रचनात्मक कार्य लोगों के सामने रखे, वल्लत्तोल ने अपनी सुन्दर कविताओं द्वारा उनका समर्थन किया। जब कभी अवसर मिलता था तब भारत की प्रशंसा के दो चार शब्द बिना कहे वे चुप नहीं बैठ सकते थे। देश की सामाजिक अवस्था पर भी उन्होंने कविताएँ लिखीं। ज्यों-ज्यों उनकी आयु बीतती गयी त्यों-त्यों देश और काल की परिधि को लाँघकर उनका मन मानव गुणों के विकास करने की ओर उन्मुख हुआ। एक मजदूर की मृत्यु रेलवे स्टेशन पर बड़ी दुर्दशा में हुई। उसका चित्रण बहुत मर्मस्पर्शी ढंग से किया गया है। यह कविता पढ़कर कोई भी बिना आँसू बहाये रह नहीं सकता। उस प्रकार की अवस्था उस मजदूर की क्यों हुई ? कवि इस निष्कर्ष पर आते हैं कि सामाजिक परिस्थितियाँ ही इसका कारण हैं ? इस प्रकार हजारों दीन हीन लोग मृत्यु के गह्वर में प्रति दिन प्रवेश करते हैं। किन्तु किसी की आवाज उस अन्याय के प्रति नहीं उठती। जो उसके विरुद्ध खड़े होते हैं वे दुर्बल हैं, कुछ नहीं कर सकते। यहाँ कवि एक सच्चे समाज-सुधारक के रूप में प्रकट होते हैं। विलासितापूर्ण जीवन बितानेवालों को सावधान करने के उपदेश वे सदा देते रहे हैं।

साहित्यमंजरी के विविध भागों में भिन्न-भिन्न रुचिप्रधान कविताएँ प्रकाशित की जाती थीं। साथ ही वल्लत्तोल इतिवृत्तात्मक तथा जीवन की आलोचना करनेवाली कविताएँ भी लिखते थे। उनकी कृति 'शिष्यनुं मकनुं' (शिष्य और पुत्र) में शिवजी की कर्तव्यमूढ़ता का सुन्दर चित्र खींचा गया है। उनके शिष्य परशुराम और पुत्र गणेश के बीच झगड़ा होता है। गणेश को जब परशुराम घायल कर देते हैं तो पार्वती आपे से बाहर होकर शंकर जी से जवाब तलब करती हैं, बेचारे शिवजी निरुत्तर रह जाते हैं। उनकी उस समय की स्थिति उस व्यक्ति के समान है जो अपनी बहिन और भानजों की सहायता करता है जिससे कुपित होकर उसकी स्त्री उसको

डाँटती रहती है। केरल प्रदेशीय नायर समाज के गृहनायकों की अवस्था का सजीव चित्रण इसमें पाया जाता है।

अन्य उत्तम कृति 'नागिला' में माया की अमोघ शक्ति का प्रभावकारी वर्णन किया गया है। नागिला का प्रेमी भवदेव परिस्थिति के प्रबल वेग में पड़कर बौद्ध भिक्षु बन जाता है। उसी दिन से नागिला भी सच्चे त्यागी के समान अपना जीवन बिताती है, वह कठोर व्रत रखती है, पर कहीं जाती नहीं है। उसी समय प्रेमी भवदेव बुद्ध के आश्रम में जाकर आठ वर्ष तक बड़ी तपस्या करता है। बीच-बीच में नागिला का प्रेम उसके मन को झकझोर डालता है। सर्वस्व त्याग कर वह मुक्तिमार्ग में लीन रहने का सतत यत्न करता है। अंत में गुरुदेव का आशीर्वाद पाकर वह अपनी प्रेयसी से मिलने घर आता है। और उसके साथ रहने की उत्कट अभिलाषा प्रकट करता है। किंतु साध्वी नागिला यह कहकर अपने प्रेमी को उस उद्यम से हटाने की कोशिश करती है कि जिन महात्माओं के संसर्ग से सारे संसार को शांति मिलती है उनके शिष्य बनकर फिर संसार के मायाजाल में पड़ना आप के लिए शोभादायक नहीं है। सचमुच यह एक अपूर्व त्याग है जो संन्यासी लोग भी नहीं कर सकते। ऐसे बहुत-से रोमांचकारी प्रसंग वल्लत्तोल की कविताओं में देखे जा सकते हैं।

खण्डकाव्य

खंडकाव्यों में वल्लत्तोल के "मग्नलनमरियम्" का बहुत ऊँचा स्थान समझा जाता है। शीमोन नामक एक धनिक की प्रार्थना मानकर ईसा मसीह उसके यहाँ ब्यालू करने जाते हैं। तब वेश्या मरियम अपनी करनियों पर खूब पछताती हुई ईसा के चरणकमलों पर गिर पड़ती है और आँसुओं की धारा बहाती है। आँसुओं से ईसा के चरणकमल धुल जाते हैं, उसके साथ वेश्या का पाप भी धुल जाता है। यही कथावस्तु है। ख्रीस्त देव के पास मरियम का आगमन आकर्षक शैली में चित्रित किया गया है। यद्यपि इस कथा में कवि ने ईसा की दिव्यता का आरोपण गाया है, तो भी कथा को एक

मनोवैज्ञानिक रूप देने में कवि को सफलता मिली है। कवि की कल्पना-चातुरी और समयोचित्त बुद्धि का सुन्दर समन्वय इसमें दिखाई पड़ता है।

'अच्छनुं मकलुं' (पिता और पुत्री) नामक खंडकाव्य वल्लत्तोल के काव्यग्रन्थों का सिरमौर है। शाकुन्तलम् के अन्तर्नाटक का स्थान इसे दिया जा सकता है। सतत प्रयत्न के फलस्वरूप विश्वामित्र को ब्रह्मर्षि का पद मिल सका। वे अपने एक शिष्य के साथ कश्यप के दर्शन करने के लिए देवकूट में पहुँचे। उनके आगमन की सूचना देने के लिए शिष्य शुनःशेप आश्रम के अंदर चला गया। तब तक विश्वामित्र आश्रम के निकट स्थित अशोकवृक्ष के नीचे बैठ गये। तब "दादाजी को मैं दिखा दूंगा" इस प्रकार कहते हुए एक कोमल बालक वहाँ आ पहुँचा। उसे देखते ही विश्वामित्र को संदेह हुआ कि जिसे यह अपना दादा कहता है वह शायद इन्द्रपुत्र जयन्त होगा। बालक को देखकर मुनि का हृदय प्रेम से उमड़ उठा और उसे बड़े स्नेह से अपनी छाती से लगा लिया। इतने में उसकी माँ वहाँ आ पहुँची। उस तरुणी को देखते ही विश्वामित्र का मन भ्रम में पड़ा कि कदाचित् यह मेनका हो। उन्होंने पूछा "तुम कौन हो?" उत्तर मिला कि मैं विश्वामित्र की पुत्री शकुन्तला हूँ और यह लड़का आपका पौत्र है। विश्वामित्र अत्यंत प्रसन्न हुए।

बातचीत करने पर मुनि को मालूम हुआ कि शकुन्तला के पतिदेव ने उसका तिरस्कार किया है और माता मेनका के अनुकूल होने के कारण वह अपने पुत्र के साथ यहाँ रहती है। दुष्यंत के अनुचित व्यवहार पर विश्वामित्र कुपित होकर उसे शाप देने के लिए तैयार होते हैं। तब साध्वी शकुन्तला अपनी पूर्व-कथा का आभास देती हुई कहती है "मुझ जैसी दुर्भाग्यवती को पहले माँ बाप ने छोड़ दिया, फिर पतिदेव ने भी।" इस वाक्य ने मुनि के मन पर बड़ा प्रभाव डाला। वे अपनी करनी पर खूब पछताते हैं और अपने पौत्र को गोद में लेकर दुलारने लगते हैं। तब कवि पूछते हैं—"हे अतिमानव महामुने! मैं यह जानना चाहता हूँ कि समाधिस्थ होने पर जो सच्चिदानन्दन का अनुभव मिलता है, वह बड़ा है या इस कोमल बालक के

पुष्पसमान शरीर संस्पर्श से लभ्य अनिर्वाच्य सुख ? इसमें कौन अपको अधिक सुखदायी है?" ध्वनिप्रधान कई प्रसंग इस कविता में अत्युत्कृष्ट आये हैं। वल्लत्तोल ने भी आशान के समान मलयालम साहित्य में नयी काव्यधारा बहाकर अमर पद प्राप्त कर लिया है ?

बाइसवाँ अध्याय

उल्लूर एस० परमेश्वरैयर

केरल के सहृदय लोग मानते हैं कि आशान, वल्लत्तोल और उल्लूर केरली साहित्य के तीन स्तंभ हैं। आशान और वल्लत्तोल के संबंध में पहले लिख चुके हैं। अब उल्लूर का स्थान निर्धारित किया जाता है। तिरुवनंतपुरम् के समीप उल्लूर नामक एक गाँव में कवि ने जन्म लिया। अतः वे उल्लूर एस० परमेश्वरन नाम से पुकारे जाते थे। सन् १८७७ में उनका जन्म और १९४९ में गोलोकवास हुआ। बचपन से ही उन्होंने संस्कृत का गहरा अध्ययन और अंग्रेजी का अभ्यास किया था। बी० ए०, बी० एल० की परीक्षा पास कर कई साल तक ऊँचे अफसर के रूप में सरकार की सेवा उन्होंने की। सरकारी नौकरी से निवृत्त होने पर विश्वविद्यालयान्तर्गत प्राच्य विद्या संभाग (Oriental Faculty) के डीन रूप में महत्त्वपूर्ण कार्य कर उन्होंने अपनी जीवन-लीला समाप्त की।

केरल वर्मा वलियकोयित्तंपुरान के आज्ञाकारी शिष्य के रूप में उल्लूर ने साहित्यक्षेत्र में प्रवेश किया। अपने गुरुदेव की इच्छा के अनुसार 'उमाकेरलम्' महाकाव्य लिखकर उन्होंने द्वितीयाक्षर-प्रास की महत्ता और सौन्दर्य पर जोर डाला। पहले कहा जा चुका है कि इस समय बड़ा वितंडावाद छिड़ गया। इसके पक्ष में प्रमुख उल्लूर और विपक्ष में के० सी० केशव पिल्ला थे। केरलवर्मा की मृत्यु तक उल्लूर उनके चलाये मार्ग पर कविता रचते थे। उसके बाद उनको मालूम हुआ कि आशान और वल्लत्तोल कविता की नयी धारा में आगे बढ़ रहे हैं और उन महाशयों की पद्धति के अनसार कविता रचने से मातभाषा की सेवा और भी अच्छी की जा सकती

है। बस, अविलम्ब द्राविड़ वृत्त में सामाजिक तथा धार्मिक समस्याओं पर उल्लूर ने कविता रचना शुरू किया। सरकारी कर्मचारी होने के कारण राजनीतिक कार्यों पर कविता लिखने में उन्हें बहुत संकोच होता था, पर पेंशन लेने के बाद वे स्वच्छंद होकर कविताओं का निर्माण करने लगे।

कालेज में अध्ययन करते समय उल्लूर ने मलयाल-मनोरमा, भाषा-पोषिणी, रामानुजन जैसी पत्रिकाओं में कविताएँ प्रकाशित की थीं। सुभद्रा-शतकम्, स्यमन्तकम्, मणिप्रवालम आदि उस समय की कृतियाँ हैं। शेक्सपियर के नाटक 'Twelfth night' का मलयालम में रूपान्तर, प्रसिद्ध संदेश काव्य 'मयूरसन्देशम्' का अंग्रेजी में अनुवाद और सुजातोद्वाहम् चंपू, वंचीरागीति जैसे काव्यग्रंथ कवि ने अपनी तरुणावस्था में लिखे। उल्लूर ने 'उमाकेरलम्' महाकाव्य लिखने के पश्चात् एक अन्य काव्य लिखा जिसका नाम है 'मंगल-मंजरी'। नयी जाग्रति के फलस्वरूप उन्होंने कई कविताओं का संग्रह प्रकाशित किया, उसके पहले दूसरे कवियों से मिलकर सरला, विष्णु-माया, देवकी, पद्मिनी आदि अनेक कविताएँ लिखीं। अपनी गवेषणा के कारण रामचरित, कण्णश्श रामायणम् पर बहुत-सी बातें वे लोगों के सामने ला सके। उनकी भूमिकाएँ उन्होंने स्वयं लिखीं जो साहित्य के महान् ग्रंथ समझे जाते हैं। राजभक्ति, देशभक्ति-जैसे विषयों पर शब्दालंकार-प्रधान कविताओं का निर्माण भी प्रारंभिक काल में हुआ। अनन्तर जन-जीवन को प्रभावित करने वाले काव्य ग्रंथ लिखे जाने लगे। उनमें अर्था-लंकारों की योजना की खूबी रहती थी। छोटे-से विषय को विस्तृत रूप देने में कवि की कल्पना-शक्ति प्रशंसनीय रही है। पेरियार नदी का वर्णन करते समय उसकी सहायक नदियों, उत्पत्ति संबंधी किंवदन्तियों, जिन सुरम्य देशों से वह नदी बहती है उनका इतिहास, महिमा आदि कई बातों का सुन्दर वर्णन कवि ने किया है। इससे कवि के अपार पांडित्य का आभास पाठकों को होता है। फिर भी आलोचक कहते हैं कि वल्लत्तोल के समान उल्लूर की कविताओं में प्रसाद गुण नहीं है। साधारण जनता को इन्हें समझने में बड़ी कठिनाई प्रतीत होती है।

भावगीत

आशान की कविता 'वीणपूव' के समान उनके भावगीतों में मषत्तुल्लि (वर्षा की बूँद) नामक कविता प्रधान है। आकाश से पृथ्वी की ओर आने वाली बूँद को देखकर कवि के मन में भावनाओं की असंख्य तरंगें उठती हैं। इसमें कवि ने आशान के समान ही मनुष्यत्व का आरोप किया है। जिस मेघ ने उस बूँद को जन्म दिया उस की दुर्दशा पर कवि रो उठते हैं। जब सद्यः-प्रसूत पुत्र-रत्न की मृत्यु तुरंत ही हो जाती है तब माँ जिस प्रकार व्याकुल रहती है, वैसा ही चित्रण इसमें किया गया है। यद्यपि वह बूँद अपना मूल स्थान छोड़कर अपनी माँ से हमेशा के लिए बिदा ले लेती है, तो भी वह पृथ्वी पर गिरती है तब भूमि के लिए एक अमूल्य वस्तु की प्राप्ति सी लगती है। वह बूँद सीप में गिरकर मोती बन जाती है। पुष्पों और चातकों के लिए संजीवनी बूटी का काम करती है। हाँ! उसका जीवन क्षणभंगुर ही है। पर उसके उतने ही जीवन से पृथ्वी के चराचर अतीव प्रसन्न हो उठते हैं।

इस प्रकार की कई नूतन भावनाओं और प्रेरणाओं से भरी हुई हैं उनकी भावात्मक कविताएँ। इनके अध्ययन से हमें यह मालूम पड़ता है कि तात्त्विक कार्य समझाने के उद्देश्य से ही उन्होंने कविताएँ रची हैं। इस प्रकार के उपदेशों की अधिकता के कारण काव्य-सौष्ठव में न्यूनता आ गयी है। वल्लत्तोल कलाकार हैं तो उल्लूर तत्त्ववेत्ता के रूप में दिखाई पड़ते हैं। कवि के आख्यान-काव्यों में प्रधान वीरवैराग्यम्, हीरा, कबीरदास, वीर माता आदि हैं।

आख्यान काव्य

'कबीरदास' में कबीर का उज्ज्वल चित्रण हुआ है। अपने बनाये हुए कपड़े लेकर वे काशी के बाजार में बेचने आते हैं और सबसे चिल्ला-चिल्लाकर कहते हैं कि मेरे इस वस्त्र का दाम चार आना है। एक पैसा भी मैं ज्यादा नहीं चाहता। उनकी निश्छल वाणी सुनकर लोग हँसते चले जाते

हैं। किसी ने भी वह वस्त्र नहीं खरीदा। साँझ के समय एक बूढ़ा लाठी टेकते हुए और ठंड से ठिठुरते हुए उनसे गिड़गिड़ा कर प्रार्थना करता है कि हे मेरे प्यारे! मुझे वह वस्त्र दीजिए। इस कड़े शीत से बचने के लिए कोई दूसरा उपाय नहीं। कबीर बिना सोचे विचारे वह वस्त्र उस बूढ़े को देकर खाली हाथ घर लौटते हैं। उनको उस दिन उपवास करना पड़ता है, तो भी वस्त्रदान से उनको अपूर्व आनन्द होता है, जिसका चित्र सजीव भाषा में कवि ने खींचा है।

'विचारधारा' में हरिजन बालिका का चित्र जोशीली भाषा में खींचा गया है। बालिका अत्यन्त दुर्दशा में है। उसके बाल सँवारे हुए नहीं हैं, अच्छे वस्त्रों से उसके शरीर का आवरण नहीं किया गया है। खून को पसीना करते हुए वह जीवन बिताती है। यही उसकी महिमा है। उस बालिका का परिचय एक कुलीन स्त्री अपनी संतान को देती है। कथा-वस्तु यही है। छोटे-से विषय पर कवि ने इतना बड़ा काल्पनिक चित्र खींचा है।

स्वर्णयुगीय रचना

गुप्तजी की भाँति उल्लूर भी भारत के अतीत काल की विशेषताओं का वर्णन करने में जरा भी पीछे नहीं हैं। उनकी कविताओं में पौराणिक काल के सुवर्ण युग के साथ वर्तमान काल की दयनीय स्थिति की तुलना की गयी है। आधुनिक काल के लोगों की स्वार्थपरता, कृपणता, नास्तिकता और धर्म के प्रति घृणा-भाव इत्यादि का स्पष्ट वर्णन करके पौराणिक काल के लोगों के ऊँचे-ऊँचे आदर्शों की प्रशंसा की गयी है। धर्म-स्थापक भगवान् कृष्ण के असाधारण कार्यों के वर्णन में उनको शब्द नहीं मिलते, वे विश्वास करते हैं कि भगवान कृष्ण ने धर्म की स्थापना करने के लिए जिस प्रकार समय-समय पर अवतार लिया था, उसी प्रकार और एक बार वे हमारे बीच अवतरित होंगे और हमारा भारत प्राचीन काल के समान वैभव-संपन्न होगा।

आशान और वल्लत्तोल आदि के समान उल्लूर ने कई खंडकाव्य लिखे हैं। उनमें भक्तिदीपिका, कर्णभूषणम् और पिंगला का स्थान प्रधान है। भक्तिदीपिका का नायक सनन्दन श्री संकर का भक्त है। उसे अपने ज्ञान पर बड़ा गर्व था, नरसिंह के दर्शन करने के लिए उसने बड़ा यत्न किया, किन्तु असफल रहा। कई महीने और वर्षों तक उसने कड़ी तपस्या की। उसी समय चात्तन नामक एक मामूली भक्त अपनी सरल भक्ति से नरसिंह को बाँधकर सनन्दन के सामने प्रस्तुत करता है। चात्तन की निष्कलंक भक्ति देख महामुनि तथा पंडितवर्य सनन्दन अचरज में डूब जाता है और चात्तन के आगे नतमस्तक हो जाता है। यही है कथावस्तु। इसमें कवि ने भोले-भाले अशिक्षित व्यक्ति की निष्कपट भक्ति की खूब सराहना की है।

महाभारत के परम वीर तथा दानशील कर्ण के आत्मत्याग की कहानी को बहुत-से लोगों ने अपनी कविता का विषय बनाया है। हिन्दी के महाकवि दिनकर ने कर्ण की उदारता तथा निःस्वार्थपरता को लेकर बड़ी प्रशंसा कविता के द्वारा की है। इस प्रसंग पर उल्लूर ने जो रचना की उसका कथानक यह है —

महाभारत युद्ध छिड़नेवाला था। सबको मालूम था, कौरवों के मित्र कर्ण रहें तो अर्जुन का पराक्रम निस्सार होगा और जब तक कर्ण के पास अपने कवच और कुंडल रहेंगे तब तक कोई उसका बाल बाँका नहीं कर सकेगा। अर्जुन के पिता इन्द्र अपने पुत्र की रक्षा करने का उपाय सोचने लगे। अन्त में ब्राह्मण का वेष धरकर वे कर्ण के पास गये और कवच-कुंडल का दान देने की प्रार्थना की। दानशील कर्ण ने तुरंत आगा-पीछा बिना सोचे कवच देने का वादा किया। इसी समय कर्ण के पिता सूर्य वहाँ प्रत्यक्ष हुए और चेतावनी दी कि यदि ब्राह्मण की प्रार्थना मानकर कवच और कुंडल दे दिये गये तो कुशल न होगा। किन्तु दान को अपना धर्म माननेवाले कर्ण अपनी बात पर अटल रहे। उन्होंने कहा कि चाहे जो आपत्ति आ जाय मैं अपने वचन पर पक्का रहूँगा। पुत्र की क्षमाशीलता देखकर पिता को बड़ा अचंभा हुआ। लाचार होकर सूर्य ने अपने प्यारे पुत्र का आलिंगन

किया और उसकी आसन्न मृत्यु पर दुःख प्रकट करते हुए और बार-बार फिर फिरकर पुत्र का उज्ज्वल मुख देखते हुए वे चले गये। यह दृश्य सचमुच मर्मस्पर्शी है। इस प्रकार के कई हृदयहारी प्रसंग उनकी कविताओं में पाये जाते हैं।

कहा जाता है कि प्रारंभिक काल में उल्लूर शब्दों के मायाजाल में पड़ कर कविता रचते रहे। ज्यों-ज्यों आयु बढ़ने लगी त्यों-त्यों उनकी रचनाओं में गम्भीरता आने लगी। जीवन के अंतिम काल में उन्होंने मलयालम भाषा के साहित्य पर एक बृहत् ग्रंथ रचा जिसका प्रकाशन केरल विश्वविद्यालय की ओर से हुआ है। मलयालम का इस प्रकार का एक गवेषणात्मक और प्रामाणिक इतिहास अब तक कोई भी नहीं लिख सका है। प्रतिभा-संपन्न कवि और उज्ज्वल गवेषक के रूप में उल्लूर एस० परमेश्वरैय्यर ने केरली के उत्तम युग-रत्नों में एक उच्च स्थान प्राप्त कर लिया है, इसमें जरा भी अत्युक्ति नहीं है।

तेईसवाँ अध्याय

अन्य कवि

नालप्पाट नारायण मेनोन

वल्लत्तोल की कविताओं को आदर्श मान कर वहुत-से युवक कवियों ने सुन्दर तथा सरस कविताएँ रचना आरंभ किया। उनमें प्रधान स्थान नालप्पाट्ट नारायण मेनोन को मिला। उनका जन्म सन् १८८७ में मलबार में हुआ और १९५५ में उनकी जीवन-लीवला समाप्त हुई। यद्यपि उन्होंने हाई स्कूल तक शिक्षा पायी थी, तो भी अपने प्रयत्न से अंग्रेजी और संस्कृत में अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया। उन्हें बाल्यकाल में कई प्रकार के पारिवारिक कष्ट झेलने पड़े, इससे उनका मन संन्यास की ओर लग गया था। सत्ताइसवें वर्ष अलमोड़ा में जा कर संन्यासी बनने की इच्छा से चल दिये। किन्तु अपनी प्रिय माता की दशा का स्मरण करके वे लौट आये और माँ का वचन मानकर शादी कर ली। एक वर्ष के पश्चात् धर्मपत्नी का देहान्त हो गया। वह घटना उनके लिए हृदय-विदारक थी। उसके आधार पर उन्होंने एक विलाप काव्य रचा। इस श्रेणी में उस काव्य का स्थान अति उच्च माना जाता है। उसका नाम है 'कण्णुनीरतुल्लि'[१] (आँसू)। अनेक बाधाओं को पार करने के बाद ही कवि अपनी प्रेमिका के साथ विवाह करने में सफल हुए थे। बचपन से दोनों में घनिष्ठता थी। किन्तु प्रथम संतान के जन्म के साथ ही प्रिया का देहान्त हो जाने की घटना कवि के हृदय को झकझोर

१. कण्णु=आँख; नीर=पानी; तुल्लि=बूंद।

डालती है। साधारण मनुष्य के समान कवि रोते नहीं, बल्कि इन दुःखों के रहस्य का पता लगाने के लिए वे प्रयत्न करते रहते हैं।

वे कहते हैं—"अन्यथा चिन्तितं कार्यं दैवमन्यत्र चिन्तयेत्" (Man proposes God dispooses)। संसार की स्थिति समझना कठिन है। बेचारा मनुष्य इसके बारे में क्या जान सकता है? यह सोचकर कवि शान्त होते हैं कि जो दुःख आता है वह हमारी भलाई के लिए है। कवि ने अपनी प्रिया के साथ बाल्यकाल का समय जिस प्रकार बिताया इस पर वे कहते हैं—हमारे लिए एक ही खिलौना था, साथ ही हम खेलते थे, क्रीड़ास्थल भी एक ही था और हम एक-दूसरे पर निर्भर रहते थे। शैशवकाल की स्मृतियाँ, सुख साम्राज्य की कल्पना, सन्तान के जन्म से होनेवाले सुख दुःख आदि का मार्मिक चित्र इस रचना में खींचा गया है।

बाह्याडंबर पर कवि विश्वास नहीं करते थे। हमेशा उनकी मनोवृत्ति अन्तर्मुख रहती थी। वे कविता के द्वारा लोगों को समझाते हैं कि मनुष्य बेवकूफ है; वह यह नहीं जानता कि सच्चा सुख आत्मा में है। सुख की खोज में वह अनित्य वस्तुओं के पीछे दौड़ता है और संकल्प का महल बनाकर उसमें रमना चाहता है। वह महल थोड़ी देर में टूटकर चकनाचूर हो जाता है। फिर भी मनुष्य ऐसा महल बनाता रहता है।

बीच में कवि संकल्प करते हैं कि दूसरे जन्म में शायद मेरी प्रिया का पुनः समागम होगा। इस प्रकार रोते कलपते कवि इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि यह सारा संसार परिपावन तथा दिव्य प्रेम से भरा हुआ है। चींटी से लेकर मानव तक सभी प्राणी उस प्रेम को प्रकट करते रहते हैं। अन्तिम कविता-भाग से यह प्रतीत होता है कि कवि अपनी प्रिया की मृत्यु तक केवल उसी पर प्रेम करते थे, मृत्यु के बाद उनकी वह भावना विश्व-प्रेम में परिवर्तित हो जाती है।

आँसू के अतिरिक्त उनकी 'इन्नत्ते अम्मा' (आज की माँ) कृति वर्त्त-मान काल के काव्यों में सरस और सुन्दर मानी जाती है। माँ अपने प्यारे पुत्र का मुख चुंबन करके भावी जीवन को उज्ज्वल करने के लिए कई उपदेश

देती है—"यह संसार झूठे, फरेबी लोगों से भरा है, यहाँ सत्य का आदर करनेवाले लोग बहुत कम हैं। सब अपना-अपना स्वार्थ निकालने के लिए किसी प्रकार का काम करने में संकोच नहीं करते। अतएव मेरे प्यारे, ईश्वर पर भरोसा करके आगे बढ़। जो कुछ भगवान् दें उसे सन्तोष के साथ स्वीकार कर ले। किसी प्रकार के भ्रम में बिना पड़े अपने संपूज्य पूर्वजों के त्यागमय जीवन को आदर्श मानकर अपनी जीवन-नौका को उस पार पहुँचा दे।" इस प्रकार के कई उपदेश हम मेनोन की पुस्तक 'आज की माँ' में देख सकते हैं।

प्रतिक्रियावादी लोगों के धार्मिक सिद्धान्तों की कड़ी आलोचना करते हुए कवि ने 'पुलकांकुर' नामक काव्य लिखा है। उनकी दो कृतियों का (आँसू और चक्रवालम् का) तर्जुमा (अनुवाद) अंग्रेजी में किया गया है।

कुट्टिप्पुरत्तु केशवन नायर

कुट्टिप्पुरत्तु केशवन नायर वल्लत्तोल नारायण मेनोन के अनुयायियों में प्रमुख कवि हैं। काव्योपहारम्, नव्योपहारम्, प्रतिमा नाटक अनुवाद, प्रपञ्चम् आदि कृतियाँ रचकर उन्होंने अपनी मातृभाषा को पुष्ट करने का शक्ति के अनुसार प्रयत्न किया है। काव्योपहारम् की 'ग्रामीण कन्यका' में गाँव के निष्कलंक सौन्दर्य का सुन्दर चित्रण प्रभावशाली ढंग से किया गया है। हाल में ही उनकी मृत्यु हुई है।

कृष्ण वारियर

वर्तमान काल के सहृदयों को रुचनेवाले विषयों पर कृष्ण वारियर ने तेवर, काकतालीयम्, प्रकृति आदि सुन्दर काव्य लिखे हैं। धान के खेत में काम करनेवाले लोगों के स्वभाव, रहन-सहन, उनके काम आदि पर 'अणिचन' नामक कविता उन्होंने रची है। इसका नायक अणिचन पुलय समाज का व्यक्ति है और नायिका उसकी स्त्री है।

पुराने सिद्धान्त के अनुसार काव्य के नायक और नायिका राजवंशी हों,

यही नियम है। इसे तोड़कर कवि ने निम्न कुलजात मज़दूर वर्ग से नायक और नायिका को चुना—यह इसकी एक विशेषता है। तिरुवितांकूर प्रदेश के मध्य में बहनेवाली पम्पा नदी को रानी का रूपक देकर वर्णन किया गया है। वे अनुप्रासों पर जोर नहीं देते थे।

के० एम० पणिक्कर

उपन्यास, नाटक तथा निबन्ध क्षेत्र में तरह-तरह के ग्रन्थ रचकर श्री के० एम० पणिक्कर ने साहित्यिकों में अमर स्थान प्राप्त कर लिया है। हास्य रसप्रधान, तत्त्व सम्बन्धी, सन्देशकाव्य आदि विविध शाखाओं पर कवि ने अपनी कुशल लेखनी चलायी है।

एक रूढ़िवादी कुल में पणिक्कर का जन्म हुआ। परम्परागत विश्वासों का खण्डन करते हुए उन्होंने बिलायत जाकर अध्ययन किया। उस समय पहला महायुद्ध छिड़ गया था। ब्रिटिश द्वीप के आसमान पर आपत्ति के बादल मँडराने लगे। अंग्रेज़ लोग प्रति पल जर्मनों के आक्रमण की प्रतीक्षा करते हुए व्यग्र रहते थे। ऐसे समय एक दिन पणिक्कर ने सत्तर मिनट में एक सरस कविता रची जिसका नाम है 'एक संकट' (ओरपकटम्)। विदेश में रहते समय उन्होंने 'एक स्वप्न' और 'विमानसन्देश' दो कृतियों का निर्माण किया। उनकी 'विषादकारणम्' कविता भावगीतों की श्रेणी में आती है।

राजनीतिक शासनतन्त्र के अन्तर्गत उन्होंने बीकानेर राज्य के प्रधान मन्त्री, प्रान्त-सीमानिर्धारण कमीशन के सदस्य, विदेशस्थ राजदूत आदि दायित्वपूर्ण पदों पर रहकर अपने देश की सेवा की है और कर रहे हैं। इतने व्यस्त जीवन में भी अपनी प्यारी कविता-कामिनी को कभी नहीं भूलते। उनके रचे हुए काव्यग्रन्थों में मुख्य चिन्तातरंगिणी, भूपसन्देश, सांध्यरागम्, अपक्व फलम्, चाटूक्तिमुक्तावलि, प्रेमगीति, रसिकरसायनम्, हैदर नाटकम्, बालिकामतम् और पंकीपरिणयम् हैं।

'बालिकामतम्' में एक धूर्त व्यक्ति अपने माया-जाल में एक बालिका

को फँसा कर उसका सतीत्व भंग कर देता है। उन दोनों का मेल-जोल होता है, अन्त में उस सती को वह कामुक छोड़ कर चला जाता है। इन सब घटनाओं का सजीव चित्रण इसमें किया गया है। यह काव्य शृंगार रसप्रधान है।

'प्रेम गीति' मलयालम भावगीतों के शीर्ष-स्थान पर शोभा पाती है। विप्रलम्भ अवस्था में प्रेमी का विलाप, प्रेमी गौर प्रेमिका का मिलन, प्रेमिका का सत्कार, नायक-नायिकाओं का सम्वाद, नायिका का गर्वित होना, इन सबका चित्र कवि ने सरल, कोमल भावात्मक शैली में खींचा है। एक समालोचक का कहना है कि प्रेमगीति मलयालम भाषा कामिनी के गले में शोभित, शीतल तथा सुगन्धित पुष्पमाल्य है। 'चाटूक्तिमुक्तावलि' अमरुक-शतक के समान सुन्दर शृंगार रस का काव्य है।

'हैदर नाटक' की कथावस्तु इस प्रकार है—दक्षिणापथ में शूर-वीर बादशाह हैदर निष्कंटक होकर राजकाज करता था। पड़ोस के राज्य में उदयवर्मा भोगलालसा में रत होकर समय बिताता था। उसकी एकलौती पुत्री माधवी वसन्तकाल की माधवीलता के समान पल-पल बढ़ने लगी। उसका विवाह रामन मेनोन के साथ सम्पन्न हुआ। दोनों अतीव प्रसन्न होकर बड़े आनन्द से दिन बिताने लगे। इसी बीच हैदर ने अपने पड़ोसी राज्य केरल पर हमला करने के लिए बड़ी भारी सेना कमरूद्दीन के नेतृत्व में भेजी। विलासी राजा अपने स्वप्न से जागा। भयंकर युद्ध हुआ। अन्त में उस राज्य पर हैदर का अधिकार हो गया। एक दिन वेष बदलकर कमरुद्दीन भ्रमण कर रहा था। संयोग में माधवी पर उसकी नजर पड़ गयी। उसका अपूर्व सौन्दर्य देखकर कमरुद्दीन ने उसे अपने महल में लाने के लिए सैनिकों को भेजा। माधवी कमरुद्दीन के सामने लायी गयी। जब उसने माधवी पर बलात्कार करना चाहा तो माधवी ने कटार लेकर उसे मार डाला और स्वयं आत्महत्या कर ली। उसी समय हैदर वहाँ संन्यासी के वेष में उपस्थित होता है और उस सती-रत्न की आत्मशान्ति के लिए खुदा से दुआ माँगता है।

'पंकी परिणयम्' हास्य-रस-प्रधान कविता ग्रन्थ है। इसमें सरकारी कर्मचारियों, कवियों, जमींदारों और वकीलों के पेशे पर मार्मिक कविताएँ

रची गयी हैं। उनकी कड़ी आलोचना करने में कवि ने अपनी उग्र लेखनी का सफल प्रयोग किया है।

हाल में ही 'वेलुत्तंपी दलवा', 'कुरुक्षेत्र की गान्धारी' आदि अनेक पुस्तकें रच कर उन्होंने भाषा साहित्य को विपुल बनाया है। दूसरी भाषाओं में भी उनकी पुस्तकों का अनुवाद किया जा रहा है। मलयालम भाषा पर उनका पूरा अधिकार है और शब्दों के चयन में उनकी प्रतिभा अनुपम है। विविध क्षेत्रों में पुस्तकों का निर्माण करने की उनकी जैसी शक्ति बहुत कम व्यक्तियों में पायी जाती है।

पल्लत्तु रामन

कुमारनाशान के समान एक कम उन्नत समाज में महाकवि पल्लत्तु रामन ने सन् १८९२ में जन्म लिया और उच्च जाति के अत्याचारों के विरुद्ध बड़े ज़ोर से अपनी कलम से युद्ध किया। वे कालेज में मलयालम पढ़ाने का कार्य करते थे। पेंशन लेने के बाद वे एक पत्रिका चलाने का आयोजन कर रहे थे कि इसी बीच एकाएक हृदयगति रुक जाने से १९५० में उनका देहावसान हो गया।

वर्डस्वर्थ जैसे अंग्रेज़ी कवि का प्रभाव उन पर खूब पड़ा था, यह बात उनकी प्रारम्भिक कविताओं से जानी जाती है। श्रीमती सरोजिनी नायडू ने अंग्रेज़ी में 'Gift of India' नामक एक पुस्तक लिखी है; इसका अनुवाद रामन ने अपनी स्वतन्त्र शैली में किया है।

वे भी प्रासवाद के आन्दोलन से अप्रभावित नहीं थे। उनकी अधिकांश कविताएँ प्रासों से युक्त हैं। रूढ़िवादियों एवं तथाकथित कुलीनों के नृशंस व्यवहारों के वे कट्टर विरोधी थे। प्रगतिशील कवियों के समान नवीन विषयों पर भी उन्होंने कविता की है। प्रारम्भ में राजपूतों की वीरता पर रीझकर कवि ने अनेक कविताएँ लिखीं, जिनमें प्रधान वीरांगना, वीरसिंही आदि हैं। पञ्चक्कुटिल, अरिवाल गानम, तोषिल शालयिलेक्कु 'चुट्टिका' आदि उनकी अन्तिम काल की रचनाएँ हैं।

संगठित प्रचार की योजना

निष्कर्ष यह है कि इस समय अनेकों मनीषियों ने अपनी-अपनी प्रतिभा के अनुसार सैकड़ों कृतियाँ रचकर भाषा की सेवा की है। आपस में उनका पत्र-व्यवहार भी कविता में ही होता था। निकट सम्पर्क के लिए गोष्ठियों की योजना की जाती थी। साहित्यमहारथी केरलवर्मा और कार्यकुशल वरुगीस माप्पिला आदि के उत्साह से सन् १८९२ में कोट्टयम में एक विराट सभा बुलायी गयी। उसमें केरल के कोने-कोने से साहित्यप्रेमी सम्मिलित हुए। उसी समय एक कवि-समाज की स्थापना की गयी, जिसका उद्देश्य भाषा-शैली में एकरूपता लाना, गद्य साहित्य को पुष्ट करना, एक त्रैमासिक पत्र निकालना और प्राचीन कृतियों का शोधन करके प्रकाशित करना आदि था। समाज का नाम 'भाषापोषिणी' रखा गया। केरल के प्रधान केन्द्रों में इस संस्था को चलाने के लिए कार्यकर्ताओं ने पर्याप्त उत्साह दिखलाया। दूसरे कार्य-कलापों के साथ नाटकों तथा कविताओं की प्रतियोगिता होने लगी। वरुगीस माप्पिला के जीवनकाल तक त्रैमासिक पत्र बड़ी सजीवता तथा उत्साह से चला।

सन् १९११ में वैकम् नामक स्थान पर 'भाषापोषिणी' सभा का अधिवेशन हुआ, जिसमें देश भर के बहुत-से सहृदय विद्वान् उपस्थित हुए। उसके बाद वह सभा केवल नाममात्र की रह गयी। अंग्रेजों के शासन काल से भारत की प्रादेशिक भाषाओं में एक प्रकार की नयी जाग्रति हुई। उच्च अधिकारियों ने राजकाज चलाने के लिए अंग्रेज़ी को पाठ्यक्रम में प्रमुख स्थान दिया। साथ ही देशी भाषाएँ भी सिखाने का प्रबन्ध किया गया। विदेशी लोगों की स्वातन्त्र्यप्रियता, उनके शासन की व्यवस्था, भौतिक उन्नति आदि देखकर विचारशील लोगों के मन में भी ऐसी तरंगें उठने लगीं। वे सोचने लगे कि हम चालीस करोड़ लोग क्यों मुट्ठी भर अंग्रेज़ों के सामने पराजित हुए, इसका कारण हमारी दुर्बलता है या उनकी अजेय शक्ति ? यदि हमारी दुर्बलता हो तो उसका मूल कारण क्या है, कैसे परवशता की बेड़ी काटी जाय, आदि आदि।

कुछ लोगों ने सोचा, हम उन्हीं ऋषि-मुनियों की सन्तान हैं जिन्होंने 'अहिंसा परमो धर्मः', 'वसुधैव कुटुम्बकम्', 'लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु' आदि उच्च आदर्शों को अपनाया था; तो हमारे लिए आपस में झगड़ना, फूट डालना, किसी की उन्नति में बाधा डालना आदि घृणित कर्म उचित नहीं हैं। हमें उन्हीं महानुभावों के बताये मार्ग पर चलना चाहिए। इस विचार से कुछ लोग उसके लिए प्रयत्न करने लगे। समाज-सुधारकों ने सोचा, अस्पृश्यता नि ारण के बिना हमारी उन्नति नहीं हो सकती। सब कहीं अन्धविश्वास फैल गया है, उसे दूर करना अत्यन्त आवश्यक है। अधिकांश लोग ऊपर कहे हुए विचारों से प्रभावित हुए। सहृदय कवि, लेखक इन सब आशयों के प्रचार और प्रकाशन में दत्तचित्त हुए बिना नहीं रह सके। उसके फलस्वरूप भारतीय संस्कृति की निर्झरिणी संस्कृत भाषा से और नये-नये आशयों को प्रकाशित करनेवाले अंग्रेज़ी साहित्य से अनेक कृतियों का अनुवाद मलयालम में बड़ी संख्या में हुआ। विभिन्न प्रकार के ग्रन्थ रचे गये, उनमें कुछ केवल अनुवाद, कुछ भावानुवाद, कुछ स्वतन्त्र विवेचन के रूप में प्रकाशित हुए। छापाखानों की स्थापना भी कई स्थानों पर हुई, जिसके फलस्वरूप हजारों और लाखों की संख्या में तरह-तरह की पुस्तकें प्रकाशित होने से मलयालम साहित्य उन्नति की सीमा पर पहुँचा।

खेद के साथ लिखना पड़ता है कि जिन महानुभावों के कर-कमलों द्वारा लालित-पालित होकर साहित्य-देवी समयानुकूल परिपुष्ट हुई, वे धीरे-धीरे इस लोक को त्याग कर गोलोकवासी होने लगे।

'सरस-द्रुतकवि-किरीटमणि' नाम से सुख्यात कुञ्ञिक्कुट्टन तंपुरान सन् १९१३ में गोलोकवासी हुए। उसी वर्ष 'सरस गायक कवि' के० सी० केशव पिल्ला को अपना पंचभूतमय शरीर छोड़ना पड़ा। उसका शोक शान्त होने के पहले ही केरली माता को अपने तरुण तथा प्रतिभासम्पन्न पुत्र वी० सी० बालकृष्ण पणिक्कर का वियोग सहना पड़ा। महापण्डित, मेधावी कवि, कुशल लेखक वलिय कोयित्तंपुरान और उद्भट देशभक्त, मानी रामकृष्ण पिल्ला की मृत्यु भी इसी बीच हुई। उसके पश्चात् जिन महानुभाव ने

अलंकारशास्त्र, साहित्यालोचन आदि ग्रन्थ रच कर केरली को प्रौढ़ावस्था में पहुँचाया उनका देहान्त हुआ। उस समय केरल में ऐसा एक भी व्यक्ति नहीं था जिसने उनकी मृत्यु पर शोक प्रकट न किया हो। उसकी क्षति-पूर्ति अभी तक नहीं हो सकी है। सन् १९२४ में भावनासम्पन्न सी० वी० रामनपिल्लई के देहवियोग की वार्ता सुनकर लोग अत्यन्त दुखी हुए। दो वर्ष पश्चात् नौका-दुर्घटना में पड़कर प्रेम-गायक कुमारनाशान ने भी जल-समाधि ली। यह खबर सभी साहित्य-सेवियों के हृदय को आघात पहुँचानेवाली थी। उपर्युक्त शोकप्रद घटनाओं से केरली माता को अपार दुःख हुआ, यद्यपि वह उल्लूर, वल्लतोल जैसे होनहार पुत्रों को देखकर कुछ-कुछ आश्वस्त होती दिखाई पड़ती थी।

चौबीसवाँ अध्याय

स्वतन्त्रता-आन्दोलन

पिछले अध्यायों में कहा जा चुका है कि सन् १९२० के बाद समस्त देश के राजनीतिक क्षेत्र में बड़े-बड़े परिवर्तन होने के लक्षण दिखाई देने लगे। भारत के सुदूर दक्षिण-पश्चिम के कोने में स्थित केरल प्रान्त भी उनसे अप्रभावित नहीं रह सका। अस्पृश्य समझे जानेवालों में यह विचार धीरे-धीरे जमने लगा कि हम में और कुलीन लोगों में कोई भेद नहीं है, हम भी उनके समान एक ही स्थान पर जन्म लेते हैं और यहीं पर मरते हैं। अतः भेद-भावना ठीक नहीं है। कुमारनाशान जैसे प्रतिभासम्पन्न व्यक्तियों का ध्यान इस भेद-भावना को मिटाने की ओर गया, अनेक कुलीन लोग भी उनकी सहायता करने के लिए आन्दोलन करने लगे। सुख्यात वैंकम-सत्याग्रह में महात्मा गान्धीजी के आगमन तथा भाषण से लोगों को प्रेरणा मिली। उस समय पहले तो सरकार ने दमन नीति अपनायी किन्तु समाज-सुधारकों की संख्या अधिक बढ़ती देखकर तिरुवितांकूर नरेश ने अस्पृश्यों के मन्दिरों में प्रवेश करने की घोषणा १९३७ में की, जिसका स्वागत भारत भर में किया गया।

इसी समय कुलीन समुदाय में प्रमुख नंपूतरि नौजवानों ने अपने समाज की कुरीतियों और अन्धविश्वासों को मिटाने का संकल्प किया। उनका विचार था कि "दुराचारों के कारण हमारा समाज अन्धकार में भटकता फिरता है। संसार में आत्मिक उन्नति के साथ भौतिक उन्नति भी अनिवार्य है। उसके लिए पुरानी दूषित मनोवृत्तियों में एक नया परिवर्तन लाना चाहिए।" वे भी अस्पृश्यता-निवारण, विधवा-विवाह आदि के लिए अधिक यत्न करने लगे।

महात्मा गान्धीजी के दूसरे सत्याग्रह आन्दोलन का प्रभाव देशी राज्यों के लोगों पर भी खूब पड़ा। किन्तु ब्रिटिश भारत के लोगों के समान उन्होंने आवेश के साथ उसमें भाग नहीं लिया। कुछ समय के बाद देशी राज्यों में भी आन्दोलन की लहरें बड़े वेग से उठने लगीं। "रा-य कांग्रेस" नाम से कई संगठन देशी राज्यों में स्थापित हुए और भारतीय राष्ट्रीय सभा की सहानुभूति पाकर वे और प्रबल हो उठे।

तिरुवितांकूर राज्य के तत्कालीन दीवान सर सी० पी० रामस्वामी ऐयर ने आन्दोलन को दबाने के लिए तन, मन, और धन से बड़ा यत्न किया। अतः कुछ काल के लिए वह रुक-सा गया। तो भी दूसरे राज्यों में आन्दोलन ने ज़ोर पकड़ा। इसी समय महायुद्ध छिड़ गया। भारतीय राष्ट्रीय महासभा ने युद्ध के विरुद्ध नारा लगाया। अन्त में जाकर इसका परिणाम यह हुआ कि अंग्रेज़ लोगों को भारत छोड़ना पड़ा और १९४७ में हमारा भारत स्वतन्त्र हो गया।

आज़ादी पाने के बाद भारत में अनेक परिवर्तन हुए। बालिग मताधिकार लोगों को मिला। चुनाव हुआ। केन्द्र तथा प्रान्तों में कांग्रेस को बहुमत मिला, जिसके फलस्वरूप सब कहीं कांग्रेस की सरकारें शासन करने लगीं। देशी राज्यों का एकीकरण हुआ। केरल भी एक प्रदेश (राज्य) बन गया। लोग अपना अधिकार पाने में दत्तचित्त हुए। उनको धीरे-धीरे मालूम हुआ कि यदि हम एकमत हो जायँ तो अपनी इच्छा के अनुसार राजकाज कर सकते हैं। सत्ता पाने के लिए विभिन्न दल संगठित हुए और अधिकार पाने के उद्देश्य से सब आगे बढ़ने का प्रयत्न करने लगे।

'सन्मार्गपोषिणी सभा' का स्तुत्य प्रयास

समाज को प्रभावित करने में साहित्य का प्रमुख हाथ होता है। इसे ध्यान में रखते हुए भाषा के क्षेत्र में साहित्य की विभिन्न शाखाओं के परिपोषण के लिए कई समितियाँ बनायी गयीं। 'कवि समाज' और 'भाषापोषिणी सभा' की चर्चा की जा चुकी है। १९१३ में कोच्चि राज्य में

एक 'साहित्य समाज' की स्थापना हुई। उसके नौ वर्ष बाद 'सन्मार्ग-पोषिणी सभा' के नेतृत्व में केरल भर में साहित्य समाज को संगठित करने का प्रयास किया गया। फिर सन् १९२७ में इट्प्पल्लि नामक स्थान पर 'समस्त केरल साहित्य परिषद्' की स्थापना की गयी। वह संस्था अब भी अपना काम किसी न किसी प्रकार करती आ रही है। अप्पन, तंपुरान, उल्लूर एस० परमेश्वरैय्यर, वल्लत्तोल नारायण मेनोन, जी० शंकरक्कुरुप्प जैसे महान् व्यक्ति भाग लेकर वार्षिक सम्मेलनों की शोभा बढ़ा चुके हैं। इसके निम्न कार्यक्रम हैं—भाषा की विविध शाखाओं की प्रगति के विषय में भाषणों का आयोजन करना, गवेषणात्मक कार्यों को प्रोत्साहन देना, साहित्यिक प्रतियोगिताएँ चलाकर विजयी लोगों का सम्मान करना, देशीय कलाओं के विकास में सहयोग देना, सम्मेलनों में किये गये भाषणों का छपवाकर प्रचार करना आदि।

भाषा तथा साहित्य की प्रगति के लिए साहित्यकारों, शासकों तथा आम लोगों को किस प्रकार कदम उठाना चाहिए, इन सबकी चर्चा भी उन सम्मेलनों में होती थी। एक सर्वांगपूर्ण मलयालम कोश, विज्ञान कोश, केरली साहित्य और केरल देश का बृहत् इतिहास, आधुनिक शास्त्र ग्रन्थ, पुराने गीतों का संचय, केरल के भाषाप्रेमियों की जीवनियाँ, उत्तम ग्रन्थों का अनुवाद, एक विश्वविद्यालय की स्थापना आदि अनेक महत्त्वपूर्ण कार्यों की ओर इस परिषद् ने लोगों का ध्यान आकर्षित किया। धीरे-धीरे उनको कार्यान्वित करने के प्रयत्न भी होने लगे, जिसके कारण सबसे पहले विश्व-विद्यालय की स्थापना हुई। भाषा तथा साहित्य का इतिहास विश्वविद्यालय ने उल्लूर एस० परमेश्वरैयर से लिखवाकर अभी प्रकाशित किया है। बृहत् कोश तैयार किया जा रहा है। यद्यपि दूसरी भाषाओं से कई ग्रन्थ अनूदित किये गये और किये जा रहे हैं, तो भी प्रोत्साहन न मिलने के कारण उस कार्य में ढीलापन दिखाई पड़ता है। किन्तु सन्तोष है कि 'समस्त केरल साहित्य परिषद्' भाषा की उन्नति के लिए अनवरत प्रयत्न करती ही आ रही है। कोई और संस्था इस प्रकार कार्य करने में अभी तक

सफल प्रयत्न नहीं हुई है। यह परिषद् के लिए अभिमान और सम्मान की बात है।

परिषद् की स्थापना के दस वर्ष बाद 'जीवत्साहित्य (जीवन साहित्य) समाज' का संगठन किया गया। वह सात वर्ष के पश्चात् पुरोगामी (प्रगतिशील) साहित्य समिति के रूप में प्रसिद्धि पाने लगी। इस समिति के प्रयत्न से मलयालम भाषा के आधुनिक लेखकों, कवियों, समालोचकों और नाटककारों की रचना-पद्धति में कई परिवर्तन हुए।

प्रगतिवादियों का संगठन

१९३६ में भारतवर्ष के सभी प्रगतिशील साहित्यकारों की एक गोष्ठी ट्रिच्चूर में हुई। उसमें केरल के नौजवान तथा उदीयमान लेखक सम्मिलित हुए और उन्होंने अनेक तथ्यों का निर्धारण किया। धीरे-धीरे उनमें मतभेद होने लगा। सबने अपने-अपने आशय को सर्वांगीण बनाने के लिए कोशिश की। खूब वाद-विवाद हुए। उत्साह और स्फूर्ति छा गयी। इस समिति के प्रधान सुप्रसिद्ध प्रोफेसर एम० पी० पोल थे। जोसफ मुण्डश्शेरी, कुट्टिप्पुषा कृष्ण पिल्ला, केशवदेव, तकषी शिवशंकर पिल्ला, एम० एस० देवदास, पोनकुन्नम वर्क्कि आदि विद्वानों ने समिति के प्रस्तावों के प्रचार में सक्रिय भाग लिया। उनका सन्देश यह था कि जीवत्साहित्य का आदर्श मानवता की रक्षा करना और उसका लक्ष्य मानव की उन्नति है।

संस्कृत के आचार्यों ने काव्य की आलोचना के लिए जिन सिद्धान्तों का प्रचार किया था उनका खण्डन इन लोगों ने किया। 'कला कला के लिए' इस आदर्श का बड़ा विरोध किया गया। भूतकाल के अनुभवों के आधार पर वर्तमान काल का सूक्ष्म निरीक्षण करके भावी जीवन को आनन्दमय बनाने के लिए लोगों को प्रेरणा देनेवाले साहित्य का सर्जन करने का भार प्रगतिशील साहित्यकारों के ऊपर आ पड़ा। धीरे-धीरे सदस्यों के रूप में बहुत-से प्रतिक्रियावादी लोग परिषद् में भर्ती होने लगे। तब तरुण कलाकारों ने सोचा कि जब तक प्रतिक्रियावादियों का प्रभाव परिषद के कार्यों में अधिक

रहेगा तब तक परिषद् के द्वारा क्रान्तिकारी सिद्धान्तों का प्रचार करना कठिन है। अतः वे उसके कार्यों में सक्रिय भाग लेने में संकोच दिखाने लगे। कुछ समय बाद एम० पी० पोल जैसे उद्भट लेखक और आलोचक परिषद् के कार्यक्रमों से अलग हो गये।

इस समय केरल की संस्कृति, कला और साहित्य का ज्ञान दूसरे प्रान्तों के लोगों को कराने के लिए श्री वल्लत्तोल ने कलामण्डल की स्थापना की। केरल की विशिष्ट दृश्यकला 'कथकलि' का प्रचार भारत भर में इस मण्डल ने किया। फिर यूरोप, रूस, जापान, चीन जैसे दूसरे देशों में जाकर वल्लत्तोल नारायण मेनोन ने कथकलि का महत्त्व अभिनय द्वारा वहाँ के निवासियों को समझाया। जहाँ-जहाँ वे गये वहाँ-वहाँ उनका बड़ा आदर-सत्कार हुआ और सबने कथकलि की मुक्तकण्ठ से सराहना की।

प्रकाशन में सहकारी विधि का प्रयोग

विश्वविद्यालय की उच्च कक्षाओं में मलयालम भाषा और साहित्य सिखाने का भी प्रबन्ध किया गया। देशी भाषाओं के प्रोत्साहनार्थ यह एक अच्छा कदम था। केरलीय कलाओं के पोषण को ध्यान में रखकर तिरुवितांकूर विश्वविद्यालय की स्थापना १९३७ में की गयी। लेखकों और कवियों की रचनाओं का मूल्य उचित रूप में देने के लिए एक संस्था की स्थापना भी हुई, जिसका नाम है 'साहित्य प्रवर्तक सहकारी संघ'। इस संघ ने अनेक पुस्तकों का प्रकाशन तथा प्राचीन कृतियों का सम्पादन सुचारु रूप से किया। वर्तमान काल में कई ग्रन्थों का प्रकाशन करके यह संघ साहित्यकारों की बड़ी सेवा कर रहा है। इसके पहले पूँजीपति प्रकाशक लोग बेचारे लेखकों और कवियों की पुस्तकें कम मूल्य में खरीदकर अनुचित लाभ उठाते थे। सहकारी संघ की स्थापना के फलस्वरूप कलाकारों को आर्थिक संकटों से छुटकारा मिला। सन्तोष की बात है कि इस संघ के सदस्य साहित्यकार ही हैं।

संघ के समान कई संस्थाओं के अतिरिक्त केरल विश्वविद्यालय के

अधीन एक विभाग है जहाँ अनगिनत हस्तलिखित ग्रन्थों का संग्रह है। यह विभाग मलयालम की प्राचीन कृतियों का सम्पादन तथा संकलन करके केरली के भण्डार को पुष्ट कर रहा है। ट्रावनकोर के समान उस समय कोच्चि राज्य ने भी एक विभाग खोला जिसका प्रमुख कार्य पुरानी वस्तुओं तथा लेखों का संग्रह करके उन पर प्रकाश डालना था। उस विभाग के कर्मचारियों के सतत प्रयत्न से बहुत पुराने ताम्र-लेख पाये गये हैं, जिनका प्रकाशन धीरे-धीरे हो रहा है। मलयालम भाषा को शिक्षा का माध्यम बना देने के कारण उसका स्थान और भी उन्नत हो गया है। केरल के साठ से अधिक कालेजों और हजारों स्कूलों में मलयालम भाषा का अध्ययन कराया जा रहा है। प्रत्येक स्कूल तथा कालेज में 'साहित्य समाज' संगठित हो गये हैं। जिले-जिले में संगठित कला-समितियों द्वारा नाटकों का अभिनय होता रहता है। भाषण-कला का भी विकास खूब हुआ है। स्वयं केरल सरकार ने हाल ही में साहित्य के विविध अंगों की पुष्टि के लिए एक अकादमी की स्थापना की है।

पत्र-पत्रिकाओं द्वारा साहित्य का विकास

मलयालम के आधुनिक साहित्य की उन्नति में केरल के दो हजार से अधिक पुस्तकालयों ने प्रशंसनीय कार्य किया। १९४६ में एक 'ग्रन्थशाला संघ' की स्थापना हुई थी। उसके तत्त्वावधान में एक मासिक पत्र निकाला गया। वह विभिन्न प्रकार की पुस्तकों की आलोचना करके उत्तम ग्रन्थों के निर्माण में पर्याप्त सहायता करता रहता है। जहाँ पुस्तकालय होता है वहाँ केरल की संस्कृति का केन्द्र भी हो जाता है।

केरल की भाषा, धर्म, संस्कृति आदि के प्रचार में समाचारपत्रों का स्थान प्रमुख है। सामान्य जनों के जीवन को स्पर्श करनेवाली बातों पर भिन्न-भिन्न प्रकार की टीका-टिप्पणियाँ इन पत्रों द्वारा होती रहती हैं। राजनीतिक और सामाजिक कार्यो का ज्ञान पाने के लिए लोग बड़े चाव से अखबार पढते हैं।

केरल में राष्ट्रीय जाग्रति इतनी बढ़ गयी है कि निम्न से निम्न कोटि का व्यक्ति भी सबेरे समाचार पत्र बिना पढ़े बाहर नहीं निकलता। पत्र भी जनता की विचार-धाराओं का प्रतिनिधित्व करते हैं और वर्तमान काल में मनुष्यों को अवश्य जानने योग्य कार्यों को समय-समय पर समझाते रहते हैं। भाषा और साहित्य की श्रीवृद्धि के लिए पत्र सतत प्रयत्नशील हैं। नये सिद्धान्तों को प्रकट करने योग्य पारिभाषिक शब्दों का निर्माण ये पत्र करते रहते हैं। मलयालम की गद्य शैली को सक्षम बनाने में समाचारपत्रों ने अच्छा योग दिया है। हम देख सकते हैं कि समाचारपत्रों में लघु कथा, कविता, उपन्यास, निबन्ध, आलोचना, हास्यलेख आदि साहित्य की विविध शाखाओं का प्रकाशन नित्य होता रहता है। जिससे अप्रतीक्षित रूप से साहित्य समृद्ध बन रहा है। लेखक सबसे पहले अपनी रचना सम्पादकों के पास भेजते हैं, वे उन्हें अपनी पत्रिकाओं में छापते हैं। यदि लेख लोगों को पसन्द आया तो पुस्तक रूप में वह प्रकाशित किया जाता है। इस समय जितने उच्च ग्रन्थों का निर्माण हुआ है वे सब पत्र-पत्रिकाओं में खण्डशः प्रकाशित होने के बाद ही पुस्तक रूप में निकले हैं। यदि साहित्यकारों में मतभेद हो तो उसका पता पत्रों के द्वारा ही लोगों को लगता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि साहित्य के उन्नयन में पत्र-पत्रिकाओं का स्थान उच्च है।

साहित्यिक लक्ष्य की आलोचना

मलयालम भाषा की इस शाखा पर संक्षेप रूप से प्रकाश डाला जा चुका है। उसमें दो-तीन पत्र-पत्रिकाओं के सम्बन्ध में और भी जानकारी प्रस्तुत करना समीचीन होगा। सुख्यात समाचारपत्र 'केसरी' (मलयालम) के प्रतिभाशाली सम्पादक ए० बालकृष्ण पिल्ला ने अपने पत्र द्वारा यूरोपीय साहित्य की ओर सहृदयों का ध्यान आकृष्ट किया। इसके पहले अंग्रेज़ी के शिक्षितों का भी ध्यान उस ओर नहीं गया था। बालकृष्ण पिल्ला ने कई विशिष्ट कृतियों का अनुवाद मलयालम में प्रकाशित किया। यह तो सर्व-विदित है कि उन्नीसवीं सदी में अंग्रेज़ी भाषा में एक नयी काव्यधारा का

उद्भव हुआ। वह धारा 'रोमांटिसिजम' नाम से प्रसिद्ध है। इसकी मोहक शक्ति के ऊपर सभी सहृदय व्यक्ति मुग्ध हुए। उसके साथ ही फ़्रेंच, स्वीडिश, रूसी, जर्मन जैसी भाषाओं की उन पुस्तकों का अनुवाद भी किया गया जिनमें यथार्थवाद की झलक थी। श्री बालकृष्ण पिल्ला ने क्लासिज़्म, रोमान्टिसिज्म, रियलिज्म, नैचुरलिज्म, सिंबोलिज्म आदि साहित्य धाराओं पर कई समीक्षात्मक निबन्ध लिखकर लोगों को उनका रहस्य समझाया। वर्तमान कालिक वैज्ञानिक उन्नति के कारण यूरोपीय साहित्य में जो-जो परिवर्तन हुए हैं उन्हें ध्यान में रखते हुए यहाँ के साहित्य के लिए एक नया दृष्टिकोण रखने का उपदेश बालकृष्ण पिल्ला ने नवीन कलाकारों को दिया। साहित्य में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन करने के लिए उन्होंने युवक साहित्यकारों का आह्वान किया। पिल्ला की रसमयी पद्धति का स्वागत जी० शंकरक्कुरुप्प, चङ्ङम्पुषा, कृष्णपिल्ला आदि प्रसिद्ध कवियों ने अच्छी तरह किया है।

जी० शंकरक्कुरुप्प की निमिषम्', चङ्ङम्पुषा की 'स्पन्दिक्कुन्न अस्थिमाटम' (स्पन्दन करनेवाली हड्डी) आदि पुस्तकों की भूमिकाएँ बालकृष्ण पिल्ला ने लिखते हुए पाश्चात्य साहित्य की नवीन धाराओं पर और भी प्रकाश डाला और उनकी महत्ता की खूब सराहना की।

राजनीतिक क्षेत्र को भी पिल्ला ने अछूता नहीं छोड़ा था। उस समय भारत के अतीत काल की महिमा पर अनेक कवि तथा लेखक पुस्तकें लिख रहे थे। पिल्ला ने इन सबों का खूब खण्डन किया। संकुचित राष्ट्रीय भावना पर वे कड़ा आक्षेप करते थे। सारांश यह है कि श्री बालकृष्ण पिल्ला ने केरल के सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक आदि क्षेत्रों में परिवर्तन करने का भरसक प्रयत्न किया। यद्यपि अनेक लोग उनके विरुद्ध खड़े हो गये थे, तो भी बहुत से नवयुवक उनसे प्रभावित हुए और उनके दिखाये मार्ग पर चलने लगे। प्राचीन सिद्धान्तों में, काव्य के लक्षण तथा पात्र किस स्वभाव के हों, आदि विषयों के नियम बनाये गये हैं। उन नियमों पर आधारित रचनाएँ ही आदर्श मानी जाती नहीं हैं। किन्तु बालकृष्ण पिल्ला ने इन सब की

अवहेलना कर लिखना शुरू किया और वैसी ही कृतियाँ लिखने की प्रेरणा नवयुवकों को दी।

पश्चात्य नवीन धाराओं का प्रवेश

कुछ समय बाद प्रगतिशील साहित्यकारों की एक सभा हुई। उसमें बालकृष्ण पिल्ला ने भाग तो नहीं लिया, पर उसके सदस्य ऐसे सज्जन थे जो उनके आदर्शों को मानते थे। उन सबने साहित्य का लक्ष्य, साहित्यकार का कर्तव्य, समाज और साहित्य का सम्बन्ध आदि विषयों पर गम्भीर चर्चा की। सन् १९३६ में साहित्य परिषद् का एक बड़ा सम्मेलन हुआ। उसमें सुप्रसिद्ध साहित्यकार पी० शंकरन नंप्यार ने 'कला कला के लिए' सिद्धान्त को अपनाने की अपील की। इसके समर्थन में उन्होंने बहुत-सी बाते युक्ति समेत रखीं। उसके खिलाफ प्रकाण्ड संस्कृत-विद्वान् श्री० एन० गोपाल पिल्ला बोले। इसके अनुकूल-प्रतिकूल खूब विवाद हुआ। दैनिक, साप्ताहिक तथा मासिक पत्रों में सैकड़ों लेख निकले। अन्त में सब इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि मनुष्य का कर्तव्य अपने समाज की उन्नति करने में है, अतः उस समाज के दुराचारों को दूर करके सब लोगों को आनन्दमय जीवन बिताने की प्रेरणा देनी चाहिए। यदि किसी रचना से लोगों के उद्धार में सहायता नहीं मिलती तो उसका कोई प्रयोजन नहीं है।

इस ध्येय के अनुसार साहित्यकार समाज की उन्नति के लिए साहित्य का सर्जन करने लगे। दैनिक जीवन में होनेवाली घटनाओं का चित्रण किया जाने लगा। लिखने की शैली सरल तथा सजीव हो गयी। अतिशयोक्ति का नामोनिशान भी नहीं रहा। लम्बे-लम्बे समस्त पदों का प्रयोग बहुत कम हो गया। सरल तथा आडम्बर रहित जीवन का चित्रण किया जाने लगा। समाज की उन्नति को ध्यान में रख कर साहित्यिक ग्रन्थों की समीक्षा करने की परिपाटी प्रचलित हो गयी। इसके साथ ही प्रगतिशील साहित्यकारों की चेष्टाओं की आलोचना भी आरम्भ होने लगी।

कुछ साहित्यकारों के मन में यह प्रश्न उठा कि यदि हम सामयिक बातों पर ही लिखने लगे तो भविष्य में उसका क्या मूल्य होगा। इस चर्चा में कैनिक्करा कुमारपिल्ला, एम० पी० पोल जैसे व्यक्तियों ने सक्रिय रूप से भाग लिया। केरल के कोने-कोने में साहित्यकारों की गोष्ठियाँ हुईं। अन्त में सबका यही निष्कर्ष निकला कि इस चंचल तथा क्षणभंगुर जीवन में साहित्य-कृतियों के सम्बन्ध में एक शाश्वत-मूल्य का होना असम्भव है। कुछ विद्वानों का मत यह भी था कि संसार में कोई स्थिर वस्तु है तो वह साहित्य ही है और वह सत्यम्, शिवम् तथा सुन्दरम् है।

रूपभद्रतावाद

धीरे-धीरे सभी कलाकार इस निर्णय पर सहमत हो गये कि सब कला-वस्तुओं का ध्येय समाज की उन्नति के लिए होना चाहिए। इस आदर्श को मानकर कुछ कलाकारों ने अपनी शक्ति के अनुसार ग्रन्थों का निर्माण शुरू किया। उनमें प्रमुख जोसफ मुण्डश्शेरी हैं। भाव को सुन्दर रूप देकर प्रस्तुत करने की ओर उनका विशेष लक्ष्य रहता था। यह प्रकार 'रूप-भद्रतावाद' नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसके स्पष्टीकरणार्थ कह सकते हैं कि सामाजिक अवस्थाओं का प्रभाव जब कलाकार पर पड़ता है तब उसके मन में तरह-तरह की भावनाएँ जाग्रत होती हैं। उनको वह सुन्दर तथा रस-भरी भाषा में व्यक्त करता है। इस 'रूप-भद्रतावाद' पर भी विवाद चल पड़ा। समाजवादी विचार के साहित्यकार इस वाद के विरुद्ध उठ खड़े हुए। उन्होंने तीखे शब्दों में कहा—यह वाद उन लोगों का है जो पहले कहा करते थे कि 'कला कला के लिए है'। दैनिक जीवन से उसे कोई सरोकार नहीं।

अब साहित्य-क्षेत्र में नयी जाग्रति होने लगी। इसका असर राज-नीतिक क्षेत्रों में काम करनेवाले विभिन्न दलों पर भी पड़ा। समाजवादी लोगों ने कहा कि हमारा दल लोगों की भलाई करने में संलग्न है, अतः साहित्यकारों का कर्तव्य है कि वे हमारे दल के सदस्य बनें और हमारे

सिद्धान्तों का प्रचार सुन्दर तथा सरस रचना द्वारा लोगों के बीच में करें। दूसरे दल के व्यक्तियों ने इसका कड़ा विरोध किया। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि सच्चा कवि या साहित्यकार किसी भी संस्था का सदस्य न बने और धैर्य के साथ अन्याय का सामना करे। उसका यह आदर्श होना चाहिए कि संसार के सभी लोग सुखी, सम्पन्न हों, चाहे वे पूँजीपति हों या समाजवादी।

इस प्रकार के विवादों का यह परिणाम निकला कि स्वतन्त्र रूप से चिन्तन करनेवाले साहित्यकार प्रत्येक दल से बहिष्कृत हो गये। कुछ लोग समाजवादी दल के सदस्य रूप में अपना काम करने लगे। कुछ लोग दलों की दलबन्दी के परे रहकर साहित्य-निर्माण करते रहे। स्वतन्त्र व्यक्तियों में कतिपय लोग 'सोशलिस्टिक रियलिज़्म' नामक एक संघ स्थापित करके अपने राज्य तथा लोगों की उन्नति के लिए कदम उठा रहे हैं।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि सन् १९५० में प्रगतिशील साहित्य 'जन-साहित्य' के रूप में परिवर्तित हो गया। उक्त संस्था का आदर्श है ऐसे साहित्य की सृष्टि करना जिसे लोग आसानी से समझ सकें। उसमें जनता के जीवन का प्रतिबिम्ब पड़ना चाहिए। इन सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर प्राचीन तथा आधुनिक काल की कृतियों की समीक्षा की जाने लगी है। इस सिलसिले में कुछ लोगों ने सभा-समाजों में यह भी उद्घोषित किया है कि साहित्य की गति रुक गयी है, यद्यपि कुछ महाशयों का कहना है कि वर्तमान काल में साहित्य की प्रगति अधिक तीव्र हो गयी है।

पचीसवाँ अध्याय

विविध विषयों की प्रगति

पिछले अध्याय में आधुनिक काल के विविध पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है। इस अध्याय में मलयालम भाषा में इतिहास, धर्म, तत्त्व-मीमांसा, विज्ञान आदि विषयों पर जो ग्रन्थ लिखे गये हैं उनका परिचय देने का प्रयास किया जायगा।

भाषा-विज्ञान

भाषा, साहित्य तथा देश के इतिहास पर कई विचारपूर्ण ग्रन्थ लिखे गये हैं किन्तु वे सब प्रकाशित नहीं हो सके। मलयालम भाषा की उत्पत्ति, शब्दों के प्राथमिक रूप और दूसरी भाषाओं के सम्पर्क से मलयालम के शब्दों में जो परिवर्तन आ गये हैं उन सब विषयों पर अंग्रेज़ी तथा संस्कृत के समान किसी ने सूक्ष्म रूप से विवेचन नहीं किया है। आट्टूर कृष्णपिषारिटि, आर० नारायण पणिक्कर, ए० आर० राजराजवर्मा आदि महाशयों का ध्यान इस ओर गया और उन्होंने उपर्युक्त विषयों पर लेख लिखे। 'केरल-पाणिनीयम्' में प्रकाशित ऐसा एक लेख उत्तम माना जाता है। डा० काल्डवल (Caldwell) ने द्रविड़ भाषाओं के व्याकरण पर तुलनात्मक अध्ययन करके एक बृहत् ग्रन्थ रचा है। भाषा-विज्ञान पर लिखे हुए इस ग्रन्थ का अच्छा आदर है। कुछ समय बाद डा० गोदवर्मा ने विलायत जाकर भाषा-शास्त्र का गहरा अध्ययन करके 'केरल भाषा-विज्ञानीय' लिखा जिसका स्थान सर्वोत्तम है। इसे सभी साहित्यकार प्रामाणिक मानते हैं। मलयालम भाषा के प्रोफेसर श्री इलंकुलम् कुञ्ञन पिल्ला ने ताम्रलेख, शिलालेख आदि के सहारे भाषा का रूप समझने के

लिए कई वर्ष तक बड़ा प्रयत्न किया। केरल तथा भारत के कोने-कोने में उन्होंने भ्रमण किया और कई उत्कीर्ण लेखों की भाषा पढ़कर एक गवेषणात्मक ग्रन्थ का निर्माण किया। उसका नाम है 'केरल भाषायुटे विकासवुम परिणामवुम' (केरली का विकास तथा परिणाम) उक्त ग्रन्थ केरली भाषा के इतिहास की आधारशिला है।

इसके अतिरिक्त श्री कुञ्ञन पिल्ला ने और कई पुस्तकें लिखकर साहित्य की उक्त शाखा को सम्पन्न करने में स्तुत्य कार्य किया है और कर रहे हैं। उन्होंने केरल भाषा तथा केरल राज्य के चरित्र पर अनेक लेख प्रकाशित किये हैं। उनका अध्ययन-विषय मलयालम की प्राचीन कृतियाँ हैं। केरल के प्राचीन ग्रन्थों तथा तत्कालीन लोगों के राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक कार्यों पर कुञ्ञन पिल्ला ने अच्छा प्रकाश डाला है। गवेषणात्मक साहित्य में उनके ग्रन्थों का स्थान उन्नत है। गवेषण कार्य में उन्होंने अपना जीवन खपा दिया है। 'उण्णिनीलि सन्देश' पर भी उन्होंने एक सुन्दर समीक्षात्मक ग्रन्थ लिखा है। इस पुस्तक पर शूरनाट्टु कुञ्ञनपिल्ला, पी० वी० कृष्णननायर आदि साहित्यकारों ने भी आलोचनाएँ लिखी हैं। डा० के० एम० जार्ज ने अपनी पी० एच०-डी० उपाधि के लिए 'रामचरितम्' नामक एक पुरानी कृति पर थीसिस लिखी है जिसमें मलयालम भाषा के प्राचीन रूप समझाये गये हैं। भाषा के विविध रूपों पर उन्होंने आलोचनात्मक लेख भी लिखे हैं। डा० एल० ए० रविवर्मा ने आर्य तथा द्रविड़ भाषाओं के परस्पर सम्बन्ध पर एक उच्च ग्रन्थ रचा। उसमें उन्होंने सुन्दर रूप से यह चर्चा की है कि द्रविड़ भाषाएँ किस प्रकार संस्कृत की ऋणी हैं। भाषा-विज्ञान पर अभी बहुत कार्य करना शेष है। यह शाखा शैशवावस्था में है। दूसरी समृद्ध भाषाओं में इस विषय पर जितने गवेषणात्मक ग्रन्थ हैं उनकी अपेक्षा मलयालम में बहुत कम ग्रन्थ इस विषय पर लिखे गये हैं।

मलयालम साहित्य का इतिहास

श्री पी० गोपाल पिल्ला ने लगभग १८८१ में मलयालम साहित्य का

इतिहास लिखा। खेद के साथ लिखना पड़ता है कि इस शाखा की ओर इने-गिने व्यक्तियों का ही ध्यान गया है। आर० नारायण पणिक्कर ने केरली साहित्य पर एक बड़ा ग्रन्थ रचा जो सात भागों में प्रकाशित हुआ है। उल्लूर ए० परमेश्वर अय्यर का एक ग्रन्थ इस शाखा का महत्त्वपूर्ण प्रकाशन है। इन दोनों ग्रन्थों का स्थान मलयालम में काफी ऊँचा है। प्राचीन कवियों का सूक्ष्म विवरण देने में इन दोनों ने बहुत प्रयत्न किया है। आर० नारायण पणिक्कर के 'साहित्यचरित' पर भारत की केन्द्रीय अकादमी ने ५००० रुपये का पुरस्कार दिया है। उल्लूर के ग्रन्थों में विशेषतः, केरलीय कवियों ने संस्कृत भाषा में जितने ग्रन्थ लिखे हैं उन पर प्रकाश डाला गया है। तमिल भाषा में भी केरल के कवियों ने कविता-ग्रन्थ रचे हैं। उनका परिचय भी उल्लूर ने विस्तार के साथ दिया है।

इसके पहले वटक्कुमकूर राजराजवर्मा ने केरल के संस्कृत साहित्य पर एक ऐतिहासिक ग्रन्थ लिखा था। ऐसा मालूम पड़ता है, मानो उल्लूर ने अपना ग्रन्थ वर्मा के ग्रन्थ को आधार मानकर लिखा हो। इस पुस्तक की सहायता से केरल संस्कृति, केरली के अज्ञातनामा कवियों की कविताओं का सारांश, मलयालियों की प्राचीन और वर्तमान काल की अवस्था आदि कई बातों का पता लगता है। प्रधान कवियों, लेखकों तथा शैलियों का विशद विवरण इस ग्रन्थ में पाया जाता है। साहित्य के इतिहास ग्रन्थों में उल्लूर की कृति प्रथम श्रेणी में आती है। केरल विश्वविद्यालय ने इसका प्रकाशन कर उल्लूर के प्रति अपना आदर प्रकट किया है।

मलयालम का इतिहास यद्यपि संक्षेप में पी० शंकरन नंप्यार ने लिखा, किन्तु उनका प्रयास उतना सफल नहीं हो सका। आट्टूर कृष्ण पिषारटी के 'साहित्य-चरितम्' में मलयालम की उत्पत्ति, वृद्धि आदि पर प्रकाश डाला गया है। प्राचीन साहित्य पर लिखा हुआ 'भाषायुम साहित्यवुम नूट्टान्टु कलिलूटे' (भाषा और साहित्य सदियों में) ग्रन्थ अमूल्य है। इसके लेखक इलंकुलम कुञ्ञन पिल्ला हैं। के० एन० गोपाल पिल्ला और जी० रामकृष्ण पिल्ला ने भी साहित्य का इतिहास संक्षेप में लिखा है। जोसफ मुंडश्शेरी का

'प्रयाण' और डा० अच्युत मेनोन् का 'प्रतिक्षण' इस विषय के संक्षिप्त ग्रन्थ हैं इनके अतिरिक्त साहित्य के प्रत्येक काल की विशेषताओं, विशिष्ट ढंग की कविताओं तथा धाराओं का विशेष परिचय देनेवाले ग्रन्थों का निर्माण भी हुआ है। वे भी इतिहास-ग्रन्थों की श्रेणी में आते हैं। पी० कृष्णन नायर और जी० कृष्ण पिल्ला ने कथकलि पर दो ग्रन्थ लिखे। माटश्शेरी माधव वारियर ने कुञ्चन नंप्यार के बाद मलयालम में जो प्रगति हुई है उस पर एक पुस्तक लिखी। के० पी० एस० मेनोन की 'कथकलि रंग' भी प्रसिद्ध पुस्तक है। डा० पी० के नारायण पिल्ला की 'प्राचीन मणिप्रवालम्' के० आर० पिषारटी की "नप्युटे हास्यकला" (हमारी हास्यकला), उल्लूर की 'भाषा चंपू' आदि पुस्तकें ऐतिहासिक ग्रन्थों के अन्तर्गत आती हैं।

मद्रास विश्वविद्यालयस्थ मलयालम विभाग के प्रधान डा० एस० के० नायर अपनी गवेषणात्मक ग्रन्थ-रचनाओं द्वारा चिर स्मरणीय हो गये हैं। केरल के ग्रामीण नाटकों पर लिखित उनकी प्रसिद्ध पुस्तक 'रलत्तिले नाटोटी नाटकङङ्ल' (केरल के ग्रामीण नाटक) है। केरल के प्रसिद्ध अंग्रेज़ी प्रोफेसर एम० पी० पोल ने उपन्यास तथा लघु कथाओं के इतिहास पर दो ग्रन्थ लिखे हैं। सी० जे० तोमस की 'उयरुन्न यवनिका' (उठती यवनिका) और डा० अच्युत मेनोन की 'एषुत्तच्छन और उनका समय' सुन्दर पुस्तकें हैं। पी० के० परमेश्वरन नायर ने आधुनिक साहित्य और मलयालम साहित्य का इतिहास संक्षेप में रचकर भाषा देवी की अच्छी उपासना की है। मलयालम साहित्य का इतिहास उन्होंने भारत की केन्द्रीय अकादमी के निर्देशानुसार लिखा है। टी० एम० चुम्मार ने गद्य साहित्य पर विस्तृत रूप में एक ऐतिहासिक ग्रन्थ रचा है। उसी ढंग पर पद्य साहित्य के इतिहास का निर्माण भी उन्होंने किया है। 'ख्रिस्तीय साहित्य चरित्रम्' सी० जे० तोमस की उत्तम कृति है। एन० कृष्णपिल्ला ने 'केरलीयूटे कथा' के द्वारा मलयालम साहित्य का वर्णन सुन्दर तथा सरल भाषा में किया है। 'केरलीयूटे कथा' यद्यपि एक ऐतिहासिक कृति है तो भी पढ़ते समय ऐसा मालूम पड़ता है मानो कोई सरस कहानी पढ़ रहे हों। इसमें प्रत्येक काल की विशेषता,

प्रधान तथा प्रतिनिधि कवि, लेखक, नाटककार, गवेषक, उपन्यासकार, कथाकार आदि के संबन्ध में सरल तथा गंभीर भाषा में लिखा गया है। साहित्य के समस्त पहलुओं पर लेखक ने प्रकाश डाला है। ऐसी उत्तम कृतियाँ संसार की भाषाओं में बहुत कम पायी जाती हैं।

कोश ग्रन्थ

इस प्रसंग में गुण्टर्ट द्वारा एक प्रामाणिक कोश बनाये जाने की चर्चा पहले की जा चुकी है। दूसरे अंग्रेज़ विद्वानों ने भी कोश लिखे हैं, पर वे उतने महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। वर्तमान काल में कई कोश तैयार किये गये हैं। हिन्दी-मलयालम कोश, अंग्रेज़ी-मलयाला कोश, मलयालम-हिन्दी कोश आदि का प्रकाशन हुआ है। मलयालम शब्दों का शास्त्रीय अध्ययन कर के पत्मनाभ पिल्ला ने 'शब्द तारावली' कोश लिखा है। उनका निवास स्थान तिरुवनन्तपुरम् नगरी की श्रीकण्ठेश्वरम नामक एक गली है। मलयालम भाषा के मुहावरों का कोश भी प्रकाशित हुआ है जिसके लेखक रामलिंगम् पिल्ला हैं। वटक्कुमकूर राजराजवर्मा का 'भाषा शैली प्रदीपम' कोश उत्तम है।

भाषा के शब्दों की उत्पत्ति, प्रयोग, दूसरी भाषाओं से आये हुए शब्दों आदि का विवरण देनेवाले एक बृहत् कोश का निर्माण विश्वविद्यालय की ओर से किया जा रहा है। केरल देश के प्रकाण्ड पण्डित इस महत्त्वपूर्ण कार्य में योग दे रहे हैं। इसके निर्देशक पण्डितवर्य शूरनाट कुञ्ञन पिल्ला हैं। मलयालम में विश्व के विज्ञान पर कोई कोश अभी तक तैयार नही हुआ। उस अभाव को दूर करने के लिए मात्यु कुषुवेलिल अथक यत्न करते रहते हैं। उसका प्रथम भाग प्रकाशित किया गया है। प्रान्तीय तथा केन्द्रीय सरकार उसके लिए प्रोत्साहन दे रही है।

गवेषणात्मक ग्रन्थ

मलयालम में अनुसन्धान का कार्य बहुत कम मात्रा में हुआ है। इसके लिए विश्वविद्यालय के अधीन एक विभाग की स्थापना हुई है जहाँ हस्त-

लिखित ग्रन्थों का संग्रह रखा गया है। कहा जाता है कि यहाँ जितनी प्राचीन कृतियाँ हैं उतनी भारत में और कहीं नहीं हैं। उन ग्रन्थों को शोधन करके प्रकाश में लाने का प्रयत्न कुछ वर्षों से आरम्भ हुआ है। कोलत्तेरी शंकर मेनोन जब इस विभाग में प्रधान थे तब उन्होंने 'भाषा रामायणम् चंपू', 'चन्द्रोत्सवम्' 'कोटियविरहम्' जैसी प्राचीन कृतियों का सुचारु रूप से संपादन और प्रकाशन किया था। उन कृतियों का परिचय उन्होंने गंभीर भूमिकाओं द्वारा दिया है, इनके सिवा कण्णश्श रामायणम्, कण्णश्श भागवतम्, भगवद्गीता, पद्यरत्नम्, उण्णियार्चा चरितम्, उण्णियाटी चरितम्, उण्णिच्चिरुतेवी चरितम्, कौटलीयम्, अलंकारसंक्षेपम्, गिरिजाकल्याणम् आदि ग्रन्थों पर आलोचनात्मक लेख प्रकाशित हुए हैं। दूतवाक्यम् गद्यम् और रामायणम् चंपू का संपादन कोच्चि राज्य की एक समिति ने किया है। मद्रास विश्वविद्यालय की ओर से कई प्राचीन ग्रन्थों का संपादन और प्रकाशन हुआ है। उनमें मुख्य 'वटक्कन पाट्टकल' है। पी० के० नारायण पिल्ला ने कुंचन नंप्यार और कृष्णगाथा पर सुन्दर लेख लिखे हैं।

वर्त्तमान काल में 'उण्णिनीलिसन्देश' तथा 'लीलातिलकम्' पर तीन टीका टिप्पणियाँ आट्टूर कृष्ण पिषारटी, शूरनाट्ट कुंजनपिल्ला और इंलकुलम कुञ्ञनपिल्ला ने लिखी हैं। इन पुस्तकों पर गवेषणात्मक लेख भी इन्होंने लिखे हैं। इन व्याख्यानों में भारी मतभेद है जिसका अन्तिम रूप से कोई निर्णय अभी तक नहीं हो सका। पी० वी० कृष्णन नायर ने 'रामचरित' पर एक गवेषणात्मक लेख लिखा है। केन्द्रीय सरकार की छात्रवृत्ति पाकर कुछ विद्यार्थी चार-पाँच साल से शोध कार्य कर रहे हैं। अभी तक उनके निबंध पूरे नहीं हो पाये हैं। हिन्दी और मलयालम की विविध शाखाओं की तुलना करते हुए थीसिस लिखने का भी कुछ युवक प्रयत्न करते रहते हैं।

यूनिवर्सिटी कालेज त्रिवेन्द्रम् के हिन्दी प्रोफेसर भास्करन नायर ने हिन्दी और मलयालम के प्रमुख कृष्णभक्त कवियों पर तुलनात्मक अध्ययन करके पी० एच०-डी० के लिए एक निबंध तैयार किया। उस पर लखनऊ विश्वविद्यालय से उनको पी० एच-डी० की उपाधि मिली है। इस तरह

के तुलनात्मक अध्ययन पर सबसे पहले दक्षिण भारत के भास्करन नायर ने ही यह उपाधि प्राप्त की है। इसी विभाग के प्राध्यापक श्री गोविन्द शेनोइ ने मलयालम तथा हिन्दी के कथा-साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन करके हाल में ही लखनऊ विश्वविद्यालय से पी० एच-डी० की उपाधि प्राप्त की है। आगरा, सागर, केरल आदि के विश्व-विद्यालयों में हिन्दी और मलयालम की कविता, नाटक आदि भिन्न-भिन्न विषयों पर अनुसंधान कार्य बड़े वेग से हो रहा है। आशा है, इन गवेषणाओं के फलस्वरूप हिन्दी और मलयालम साहित्य का सम्पर्क अधिक बढ़ेगा।

मलयालम भाषा में ही अनुसंधान करके वटक्कुमकुर राजराजवर्मा ने कई ग्रन्थ लिखे हैं, वे इस भाषा की अमूल्य संपत्ति हैं। वे लेख 'साहित्य-मंजूषा' में संगृहीत किये गये हैं। हाल में ही कृष्णगाथा पर गवेपणा कर के उसकी महिमा को उस पुस्तक की लम्बी भूमिका के द्वारा उन्होंने दर्शाया है। यद्यपि इस विषय पर दो तीन काव्यग्रन्थ रचे गये हैं, तो भी वटक्कुमकुर की कृति सबसे उत्तम और मौलिक मानी जाती है। शोध-कार्य में कडी तपस्या के समान ये संलग्न हैं। इतनी तीव्र लगन और उत्साह दिखलानेवाला महान् व्यक्ति केरल प्रदेश में और नहीं है, यह स्वीकार करने में किसी को आपत्ति न होगी।

संस्कृत व्याकरण शास्त्र में 'अष्टाध्यायी' का स्थान अद्वितीय है। उस पर ए० सी० चाक्को ने सुन्दर तथा आकर्षक शैली में एक भाष्य ग्रन्थ लिखा है। उसकी रचना में ग्रन्थकार ने अच्छी गवेषणा करते हुए सूक्ष्मदर्शिता का परिचय दिया है।

केरल संबंधी ऐतिहासिक ग्रन्थ

संसार के भिन्न-भिन्न देशों के संबंध में अनेकों ऐतिहासिक ग्रन्थ बड़े-बड़े विद्वानों ने लिखे हैं। भारत के सामान्य इतिहास पर अंग्रेज़ों तथा यहाँ के कई इतिहासज्ञों ने गहरा अध्ययन करके प्रामाणिक कृतियाँ रची हैं। किन्तु खेद है कि केरल के इतिहास पर प्रामाणिक ग्रन्थों की रचना में किसी

को सफलता नहीं मिली। उसका प्रधान कारण यह था कि केरल तीन भागों में बँट गया था और यहाँ तीन सरकारें शासन कर रही थीं। उस समय तिरुवितांकूर राज्य का लघु इतिहास नागमअय्या और टी० के० वेलुप्पिल्ला ने लिखा। कोच्चि राज्य के इतिहास के रचयिता सी० पी० अच्चुतमेनवन हैं। लोगन नामक एक अंग्रेज़ ने मलबार का इतिहास लिखा। उक्त लेखक संकुचित प्रान्तीयता में पड़कर ग्रन्थ लिखते थे। अधिकारियों को प्रसन्न करने के लिए उन्हें कभी-कभी वास्तविक स्थिति को छिपाना भी पड़ता था। फिर भी पी० शंकुण्णि मेनोन का 'तिरुवितांकूर चरित्रम्' और के० पी० पत्मनाभ मेनोन का 'कोच्चिराज्य चरित्रम्' ऐतिहासिक ग्रन्थों में उत्तम माने गये हैं।

केरल देश की संस्कृति के विविध पहलुओं और ऐतिहासिक घटना आदि पर पत्मनाभ मेनोन ने एक बृहत् ग्रन्थ की रचना की है, जिससे कई बातों का ज्ञान पाठक को प्राप्त होता है। ऐतिहासिक सामग्री का गहरा अनुसन्धान कर यह पुस्तक तैयार की गयी है। देश की अवान्तर घटनाओं का चित्रण करते समय कहीं-कहीं ऐसा भी प्रतीत होता है मानो सिलसिला टूट गया हो। किन्तु पुर्तगाल, डच, ब्रिटिश आदि विदेशी शक्तियों के राज्यकाल के संबंध में अच्छी जानकारी इससे होती है। टी० ए० गोपीनाथ राव, एस० रामनाथय्यर पी० सुन्दरम पिल्ला, उल्लूर एस० परमेश्वरय्यर जैसे विद्वानों ने इस विषय पर विशेष रूप से गवेषणा की है, जिसके फलस्वरूप प्राचीन काल की स्थिति पर अच्छा प्रकाश पड़ता है।

नंपूतिरियों के आगमन से पहले केरल की अवस्था कैसी थी, यहाँ उस समय कौन रहते थे; इसका संक्षिप्त तथा प्रामाणिक विवरण योगिवर्य चट्टम्पि स्वामी के ग्रन्थ 'प्राचीन मलयालम' से मिलता है। केरलनिवासी पाच्चुमूत्तत का ग्रन्थ भी प्रथम ऐतिहासिक पुस्तक के रूप में सुख्यात हो गया है।

हाल में ही सरदार के० एम० पक्किर ने कई शिलालेखों के आधार पर अंग्रेज़ी में 'मलबार और पुर्त्तगाली', 'मलवार और डच' इन दो पुस्तकों

का निर्माण किया है। उनकी और एक रचना 'केरलस्वातंञ्यसमर' देश के इतिहास का सुन्दर चित्रण करती है। के०जी० शेषय्यर, के० एस० शिवराम पिल्ला, के० एस० नीलकंठ शास्त्री जैसे वरिष्ठ इतिहासज्ञों ने पहली सदी से लेकर आठवीं सदी तक की मुख्य घटनाओं के आधार पर दक्षिण भारत का इतिहास लिखा है। इससे केरल देश की राजनीतिक अवस्था का परिचय पाठकों को भली-भाँति मिलता है।

केरल के इतिहास का सूक्ष्म रूप से गहरा अध्ययन बहुत कम लोगों ने किया है। इलंकुलंकुञ्ञन पिल्ला कई वर्ष से इस विषय का अध्ययन कर रहे हैं, उन्होंने केरल के कोने कोने में जाकर शिलालेखों का अनुसन्धान किया है और उसके आधार पर ग्रन्थ लिखने में संलग्न हैं। उनकी प्रमुख रचना 'चिला केरल चरित्र प्रश्नंगल' (केरल के कुछ ऐतिहासिक प्रश्न') और 'केरल चरित्रत्तिले इरुलटमैञ्ञ एटुकल' (केरल के इतिहास के कुछ अज्ञात परिच्छेद) तैयार की गयी हैं। प्राचीन केरल का इतिहास आट्टर कृष्णपिषारटी के केरलचरित्र से लोग जान सकते हैं। शूरनाट कुञ्ञन पिल्ला ने कई ऐतिहासिक लेख लिखे हैं। केरल के वर्तमान प्रमुख नेता ई० एम० शंकरन नंपूतिरिप्पाद का लिखा हुआ 'केरलचरित्र' प्रामाणिक माना जाता है। केसरी बालकृष्ण पिल्ला का ध्यान भी इस ओर गया है और कई गवेषणात्मक लेख उन्होंने लिखे हैं। 'प्राचीन मलयालम', 'प्राचीन केरलम्', 'केरलत्तिले क्रुस्तुमतम्' (केरल में ईसाई धर्म का स्थान और उसका प्रचार आदि इसमें लिखा गया है), 'ईषवचरित्रम्' आदि उनके ऐतिहासिक लेख प्रकाशित हुए हैं। फिर भी खेद है कि समूचे केरल का इतिहास लिखने में किसी ने सफलता नहीं प्राप्त की है।

मलयालम में दूसरी भाषाओं से अनेक ऐतिहासिक ग्रन्थ अनूदित किये गये हैं। मुख्य ग्रन्थ 'डिस्कवरी आफ इंडिया', 'लंडन ऐंड पेरिस' 'ए सरवे आफ इंडियन हिस्ट्री', 'विभक्त भारत' आदि हैं। स्वतंत्र कृतियों में प्रधान एस० राजराजवर्मा का 'लोकालोकम्', सी० अच्युतमेनोन का 'सोवियट नाड', 'इनय्ययुटे आत्माव' (भारत की आत्मा) आदि हैं। वी० आर०

परमेश्वरन पिल्ला, पी० एस० सेयतु मुहम्मद, टी० के० जोसफ आदि लेखकों की सजीव दृष्टि इस विषय पर पड़ी है और उन्होंने कुछ पुस्तकें भी लिखी हैं। विश्वविद्यालय भी इस विषय पर प्रामाणिक ग्रन्थ लिखाने की योजना कर रहा है। आशा है; निकट भविष्य में केरल के इतिहास पर प्रामाणिक तथा बृहत् ग्रन्थ प्रस्तुत हो जायगा।

यात्रा-ग्रन्थ

यात्रा संबंधी जो कतिपय ग्रन्थ लिखे गये हैं उनसे भी कई राज्यों की ऐतिहासिक घटनाओं का पता लगता है। ऐतिहासिक और यात्रा संबंधी ग्रन्थों में निकट संपर्क होता है, अतः मलयालम भाषा की यात्रा संबंधी पुस्तकों का विवरण नीचे दिया जाता है।

पारेम्माक्किल तोम्मा कत्तनार ने अपनी रोम-यात्रा का वर्णन 'वर्त-मानप्पुस्तकम' में किया है, जो इस विषय की प्रथम कृति मानी जा सकती है। के० पी० केशव मेनोन की पुस्तक 'बिलायत्ती विशेषम्', श्रीमती कुट्टन नायर की 'मेरा देखा हुआ यूरोप', एन० जे० नायर की 'भूप्रदिक्षण वृत्तान्तम्' और के० एम० पणिक्कर की 'आपत्कर यात्रा' आदि इस विषय की सुन्दर पुस्तकें हैं।

एस० के० पोट्टक्काड ने उत्तर भारत, कश्मीर, यूरोप, अफ़्रीका, इंडोनेशिया आदि देशों का खूब भ्रमण किया। उन्होंने उन देशों की जनता, आचार-विचार, प्रकृतिसौंदर्य आदि का वर्णन करते हुए पुस्तकें लिखी हैं जो हाल में ही प्रकाशित हुई हैं। उनकी प्रधान पुस्तकें 'सिंहभूमि', 'सोवियट डायरी', 'नैल डायरी', 'इन्नत्ते यूरोप' (आज का यूरोप) आदि बहुत अच्छी हैं। के० सी० पीटर ने जापान, दक्षिण तथा पूर्व एशिया, अफ्रीका, अमेरिका आदि देशों की यात्रा करके वहाँ की स्थिति पर सुन्दर ग्रन्थ रचे हैं। के० एम० पणिक्कर ने 'रण्टुचैनयिल' (दो चीनों में) लिखकर इस शाखा को पुष्ट किया है। जोसफ मुण्डश्शेरी की 'चैनामुन्नोह' (चीन का आगे बढ़ना), ए० के० गोपालन की 'ञान ओरु पुतियकोलम कण्डु' (मैंने

एक नयी दुनिया देखी) और एन० वी० कृष्ण वारियर की 'उणरुन्न उत्तरेन्डया' (जागता हुआ उत्तर भारत) आदि पुस्तकें पठनीय हैं। इनमें कुछ लेखकों ने अपनी पुस्तकों में देश-देश की भौगोलिक स्थिति, मौसम, लोगों की सामाजिक और राजनीतिक अवस्था आदि का चित्रण किया है।

यूनिवर्सिटी कालेज के प्रिंसिपल तथा प्राणिविज्ञान के प्रोफेसर डाक्टर के० भास्करन नायर ने १९५६ में अमेरिका, इंग्लैण्ड जैसे देशों की यात्रा कर 'पुतुमयुटे लोकम्' (नवीनता का लोक) नामक एक पुस्तक लिखी है। इसमें पश्चिमी तथा पूर्वी संस्कृतियों का तुलनात्मक अध्ययन भी किया गया है। उन्होंने यह दिखाया है कि यद्यपि अमेरिका में धनी मानी लोग हजारों हैं, तो भी उनका मन सदा चंचल रहता है और उन्मत्त लोगों की संख्या वहुत अधिक है। पाश्चात्य लोगों की सामाजिक, आर्थिक तथा मानसिक स्थिति का विश्लेषण लेखक ने अपनी सरल कोमल शैली में किया है।

आध्यात्मिक-ग्रन्थ

संस्कृत साहित्य के समान मलयालम भाषा में भी आत्मा संबंधी ग्रन्थ लिखे गये हैं। ऐसे संस्कृत ग्रन्थों का अनुवाद मलयालम में करके और उन पर भाष्य लिखकर इस शाखा को परिपुष्ट करने का आयोजन कई वर्षों से किया जा रहा है। अठारह पुराणों का रूपांतर करने में वल्लत्तोल ने बड़ा यत्न किया है। पी० के० नारायण पिल्ला ने ईशावास्य, केन आदि प्रमुख उपनिषदों का भाष्य मलयालम में लिखा है। एन० रामन पिल्ला ने भी उनके इस महत्त्वपूर्ण यत्न में योग दिया। एल० ए० रविवर्मा, पी० शेषाद्रि अय्यर, पी० गोपालन नायर आदि पण्डितों तथा भक्तों ने भगवद्गीता पर सुन्दर तथा सारपूर्ण भाष्य ग्रन्थ लिखे हैं। लोकमान्य बालगंगाधर तिलक के गीतारहस्य का गहरा अध्ययन करके वाचस्पति परमेश्वरन मूसत् ने उसे प्रांजल भाषा में अनूदित किया। गांधीजी के 'अनासक्ति-योग' और विनोबाजी के 'गीताप्रवचन' का रूपांतर भी किया गया है। विवेकानन्द, रामतीर्थ, श्री रामकृष्ण परमहंस आदि महापुरुषों

की जीवनियों, उपदेशों, सूक्तियों आदि पर अनेक ग्रन्थों का निर्माण हुआ है।

आलत्तूर निवासी ब्रह्मानन्द योगी के 'मोक्षप्रदीप', 'आनन्ददर्शन' आदि ग्रन्थ मौलिक हैं। मोक्षप्रदीप का अनुवाद हिन्दी में भी हुआ है। सुन्दर, सरल तथा कोमल शैली में आध्यात्मिक तत्त्वों का प्रतिपादन स्वामीजी ने बड़ी कुशलतापूर्वक किया है। अकाट्य युक्तियों से भरपूर उनकी पुस्तकें पढ़कर तर्कशील और साधारण मनुष्य भी लाभान्वित होते हैं। "कुम्भि" में लिखे हुए उनके गीत पढ़कर लोग आनंदमग्न हो जाते हैं।

प्रसिद्ध संन्यासीवर्य श्री नारायण गुरु 'दर्शन-माला' और 'आत्मोपदेश-शतक' मंजुल भाषा में लिखकर लोगों को आत्मतत्त्व समझाने में सफल हुए हैं। श्री चट्टंपि स्वामी की उत्तम कृतियों में मुख्य अद्वैतचिंतापद्धति, चिदाकाशालयम्, क्रूस्तुमतसारम् आदि हैं। कहा जाता है कि स्वामीजी ने कई सिद्धियाँ दिखाकर लोगों को अचंभे में डाल दिया था। जब स्वामी विवेकानन्द केरल प्रदेश में आये तब यहाँ के लोगों का चालचलन देखकर उन्होंने अतीव अरुचि प्रकट करते हुए कहा था कि केरल प्रान्त एक पागलखाना है। पर यहाँ से बिदा होते समय उनको चट्टंपि स्वामी के दर्शन हुए। स्वामीजी की भक्ति, ज्ञान, सिद्धियाँ आदि देखकर विवेकानन्दजी अत्यंत प्रभावित हुए और अपने पूर्ववचन का खण्डन करते हुए फर्माया कि श्री चट्टंपि स्वामी उस समय के महात्माओं में सर्वप्रथम स्थान अलंकृत करते हैं। उक्त स्वामी जी के उपदेश, भ्रमण और शिष्यों के साथ सारगर्भ संवादों के आधार पर पुस्तकें और लेख लिखे गये हैं। स्वामीजी कविता भी लिखते थे।

चट्टंपि स्वामीजी के उत्तम शिष्यतिलक नीलकंठतीर्थपादर ने अनेकों आध्यात्मिक ग्रन्थ रचकर उस शाखा को पुष्ट करने में महत्त्वपूर्ण योग दिया है। करीब चालीस से अधिक उनके लिखित ग्रन्थ हैं। गद्य-पद्यमयी उनकी रचनाओं में सर्वश्रेष्ठ 'श्रीरामगीतभाषा', 'हरिभजनामृत' और 'योगरहस्य-कौमुदी' आदि हैं।

वेदान्त के परमपंडित तथा भक्तप्रवर तीर्थपाद पहमहंस स्वामी ने

लगभग सात पुस्तकें लिखी हैं, जिनमें 'लेखनमालिका' श्री कुमाराभरण-शतकम् आदि प्रधान हैं। श्री शंकराचार्य की जीवन-घटनाओं के आधार पर पन्निश्शेरी नाणु पिल्ला द्वारा रचित 'शंकरविजयम्' कथकलि शैली का अतुल्य ग्रन्थ है। श्री शंकर पर और किसी ने इतनी भावुकता तथा मार्मिकता के साथ कोई ग्रन्थ नहीं रचा। उन्होंने करीब सात-आठ ग्रन्थों का निर्माण किया है।

कोल्लमकोट निवासी गोपालन नायर ने 'भागवत' पर एवं वी० नारायण क्कुरुप ने अध्यात्मरामायण पर सुन्दर भाष्य लिखे हैं। 'योगवासिष्ठ' का अनुवाद तोट्टुपुषा निवासी दामोदरन कर्ता और परवूर राम मेनोन ने केकावृत्त में किया है। इन दोनों अनुवादों की भाषा, भाव, शैली अति उत्तम मानी जाती हैं। गहन से गहन तत्त्वों को सरल भाषा में समझाने में इन दोनों की निपुणता अपूर्व ही है। कहा जाता है कि तुञ्चन के बाद और कोई व्यक्ति इतनी सुन्दरता से कविता नहीं रच सका है। वर्तमान काल के उद्भट लेखक कुट्टिकृष्ण मारार के 'भारतपर्यटन' में महाभारत की घटनाओं के विविध पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है।

हिन्दुओं के अतिरिक्त मुसलमानों ने भी धार्मिक ग्रन्थ रचे हैं। कुरान का रूपांतर सी० एन० अहम्मद मौलवी और पी० मुहम्मद ने किया है। बुद्धधर्म के सार-तत्त्वों पर प्रकाश डालते हुए डाक्टर ए० जी० कृष्णवार्यर ने 'बुद्धमतम्' नामक ग्रन्थ की रचना की है। धर्मानंद कोशांबी की 'भगवान् बुद्ध' पुस्तक का अनुवाद भी श्री शेषाद्रि ने किया है। ईसाई धर्म की संहिताओं पर भी पुस्तकें प्रकाशित की गयी हैं। उनमें श्री ओ० एन० चेरियान का रचा 'क्रैस्तवधर्म नवनीत' उत्तम माना जाता है। अंग्रेज़ी से भी कई ग्रन्थों का अनुवाद हुआ है।

भारतीय दर्शनशास्त्र के तत्त्वों की व्याख्या के रूप में 'आर्ष ज्ञान' लिखा गया है। लेखक नालप्पाट्ट नारायण मेनोन हैं। वी० के० नारायण भट्टतिरी की गंभीर कृति 'वेदार्थ विचार' में वेदों की अन्तःसत्ता का प्रतिपादन किया गया है। गान्धीमार्ग, गांधीविचार, आत्मनिवेदनं आदि रचनाओं का अन-

वाद भी मलयालम में हुआ है। श्री राहुल सांकृत्यायन की पुस्तक विश्व-दर्शन, लू-व्यू-ची के कणप्युष्न दर्शन आदि का मलयालम अनुवाद हाल में ही प्रकाशित किया गया है। 'मतम इविटेयम् अविटेयुम' (धर्म उधर और इधर) ग्रन्थ के लेखक जोसफ मुण्डश्शेरी हैं। एस० राजराजवर्मा का 'भक्तिसायुज्यम्' वेदांत-प्रेमियों के लिए अमूल्य रत्न है।

वर्तमान काल के प्रमुख संन्यासियों में आगमानन्द स्वामी, स्वामी चिन्मयानन्द, स्वामी आत्मानन्द, स्वामी अभेदानन्द आदि महान् व्यक्तियों ने मलयालम में आध्यात्मिक ग्रन्थों का निर्माण करके इस शाखा को अमर बनाया है। इनकी कृतियाँ हज़ारों की संख्या में बिक रही हैं जिससे इनकी लोकप्रियता का अन्दाज़ लगाया जा सकता है। सुन्दर तथा सरस कविताएँ रचने में स्वामी आत्मानन्द का स्थान बेजोड़ है। 'राधामाधवम्' इनकी सरस रचना है। इनके अलावा मलयालम में संस्कृत के अनूदित अनेक आत्मा संबंधी ग्रन्थों का प्रकाशन हुआ है। इस शाखा की प्रगति दिन-दिन हो रही है।

विज्ञान, अर्थशास्त्र आदि के ग्रन्थ

हम देखते हैं कि भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक ग्रन्थों का निर्माण कम मात्रा में हुआ है। अधिकांश विज्ञानप्रेमी लोग अंग्रेज़ी में ही पुस्तकें लिखते रहे हैं। हिन्दी, बँगला जैसी व्यापक भाषाओं में अब जाकर विज्ञानविषयक ग्रन्थ लिखने का आयोजन किया जा रहा है।

वट-वृक्ष के समान विज्ञान अनेक शाखाओं में विभक्त है। उनमें प्रधान रसायन, पदार्थ विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, जीव विज्ञान आदि विषयों पर हमारे यहाँ भी अंग्रेज़ी में पुस्तकें लिखी गयी हैं। कुछ लोगों की धारणा है कि भारतीय भाषाएँ विज्ञान संबंधी विषयों के प्रतिपादन की क्षमता नहीं रखतीं। किन्तु अब यह धारणा धीरे-धीरे गलत साबित होने लगी है। केरल में उच्च श्रेणी के वैज्ञानिकों का अभाव भी इस शाखा को विकसित करने में बाधक रहा है।

सबसे पहले मलयालम में इस विषय के ग्रन्थों की कमी केरलवर्मा वलियकोयित्तंपुरान को खटकी। पाठ्य पुस्तक समिति के अध्यक्ष पद पर विराजमान रहकर उन्होंने अपने सहयोगियों की सहायता से भिन्न-भिन्न विज्ञान शाखाओं पर कई गंभीर लेख स्वयं लिखे और अन्य विद्वानों से लिखवाये। उसके बाद के० सुकुमारन, एम० राजराजवर्मा जैसे पण्डितों ने 'प्राणिवंशचरित्रम्', 'नवीन शास्त्रपीठिका' आदि ग्रन्थ रचे। कृषि संबंधी विषय पर डाक्टर कुंजनपिल्ला के ग्रन्थ अति उच्च माने जाते हैं। यह पहले बतलाया गया है कि सी० पी० अच्युत मेनोन ने अर्थशास्त्र पर अपनी गंभीर कलम चलायी है। इस विषय पर एम० राजराजवर्मा की पुस्तक 'अर्थ-निरूपणम्' भी उत्तम है।

प्राणिविज्ञान के संबंध में गहरा अध्ययन और गवेषणा करके डाक्टर के० भास्करन नायर ने 'प्राणिलोकम्' लिखा। प्राणियों की उत्पत्ति, प्रगति आदि का समूचा विवरण इसमें सरल तथा अनूठी शैली द्वारा लेखक ने दिखलाया है। जीवों की उत्पत्ति, विकास आदि पर भी आकर्षक शैली में इन्होंने 'आधुनिक शास्त्रम्' की रचना की है। वैज्ञानिकों की भिन्न-भिन्न प्रवृत्तियों पर लेखक ने प्रकाश डाला है। 'परिणामम्' और एक कृति है जिसका प्रकाशन केरल विश्वविद्यालय से हुआ है। कला के सिद्धांतों की विवेचना पर लिखा गया ग्रन्थ 'कलयम् कालवुम्' (कला और काल) है। केरलीय साहित्य की प्रवृत्तियों का गंभीर विश्लेषण ग्रन्थकार ने इसमें किया है।

जापान में परमाणु बम गिराये जाने के बाद उसका संसार पर क्या प्रभाव पड़ा, उसका गिराना अच्छा है या नहीं; आदि विषयों पर डाक्टर नायर ने 'विज्ञान की गति' नामक और एक ग्रन्थ रचा है। विख्यात वैज्ञानिक आइन-स्टाइन के आपेक्षिकता सिद्धान्त पर भी रचयिता ने इसमें एक आलोचनात्मक लेख लिखा है। स्कूल के बच्चों के लिए उन्होंने 'विज्ञानदीपिका' का निर्माण किया है। धन्यवादम्, एतुमार्गम् (कौन सा मार्ग), संस्कारलोचनम्, तारापथम् आदि कृतियाँ रचकर डाक्टर भास्करन नायर ने वैज्ञानिकों तथा सहृदयों में उन्नत स्थान प्राप्त कर लिया है।

एम० सी० नंपूतिरिपाद के 'सयनसिन्टे विकासम्' (विज्ञान का विकास) में आजकल विज्ञान की शाखा किस प्रकार और कहाँ तक विकसित हुई है इसकी सुन्दर चर्चा की गयी है। बलराम मेनोन के लिखे 'परमाणु-चरित' और 'शास्त्रदीप्ति' उत्तम वैज्ञानिक ग्रन्थ हैं। यूनिवर्सिटी कालेज के गणित विभाग के प्रोफेसर एम० परमेश्वरन्, पी० टी० भास्कर पणिक्कर जैसे विद्वानों ने कई वैज्ञानिक ग्रन्थों का निर्माण किया है। पक्षिविज्ञान पर इन्दुचूड़ के लेख उच्च श्रेणी के माने जाते हैं।

अर्थशास्त्र पर बहुत कम लोगों ने लिखा है। उस शाखा की सुन्दर रचनाओं में 'पणत्तिन्टे कथा' (पैसे की कहानी) का स्थान उन्नत है। लेखक यूनिवर्सिटी कालेज के प्रोफेसर के० एम० लक्ष्मण पणिक्कर हैं। उसी विपय पर पी० एन० मूसत ने 'धनशास्त्रम्' नामक एक कृति रची है। 'मनशास्त्र' उनकी और एक रचना है। के० दामोदरन ने कार्लमार्क्स के अर्थशास्त्र संबंधी सिद्धांतों के आधार पर कुछ पुस्तकें लिखी हैं। उनमें प्रधान रुप्पिका (रुपया) 'धनशास्त्र तत्त्व', 'धनशास्त्र प्रवेशिका' आदि हैं। पी० शेषाद्रि का 'समुदायशास्त्रम्' अच्छा ग्रन्थ माना जाता है।

सामाजिक विषयों पर अंग्रेज़ी के समान बहुत कम पुस्तकें लिखी गयी हैं। नालप्पट्ट नारायण मेनोन का 'रति-साम्राज्य' सी० आर० नारायणन का 'जननियंत्रण' हेलन तोमस का 'शिशुजननम्', एल० ए० रविवर्मा का 'आरोग्यरक्षा विधिकल' आदि ग्रन्थों का मलयालम में अच्छा नाम है। इनके अतिरिक्त कृषि, ग्रामीण जीवन, सहकारिता, पंचायत आदि विषयों पर वर्तमान काल के मासिक तथा साप्ताहिक प्रकाशित किये जा रहे हैं। ए० सी० चाक्को ने सुन्दर तथा सरल भाषा में खेती पर उत्तम लेख लिखे हैं। सी० सी० चाक्को का 'राष्ट्रविज्ञानीयम्', के० एस० नीलकंठ का 'कर्षक-सहायी', एम० प्रभा का भरणघटनकल (संविधान), आट्टूर कृष्णप्पिषारटी का संगीतचन्द्रिका आदि मलयालम के भिन्न-भिन्न शास्त्र-ग्रन्थ हैं। बेंकिंग, हस्तरेखा-शास्त्र, शिल्पशात्र, ज्योतिष आदि विषयों पर अनेक पुस्तकें लिखी गयी हैं। मुर्गियों तथा गायों के पालन विषय पर भी ग्रन्थ रचे गये हैं।

यह बात तो सुविदित है कि मलयालम में पारिभाषिक शब्दों का अभाव है। उसे दूर करने के लिए किस भाषा का सहारा लेना चाहिए इस पर गहरा वाद-विवाद किया जा रहा है। अधिकांश पंडितों की राय है कि पारिभाषिक शब्दों के लिए अंग्रेजी का आश्रय लेना अच्छा है। पर अभी तक कोई सर्वसंमत निर्णय नहीं हुआ है।

रीति-ग्रन्थ

इस विषय पर ए० आर० राजराजवर्मा द्वारा रचित 'भाषाभूषणम्', 'साहित्य साह्यम्', 'वृत्तमंजरी' आदि की चर्चा पहले हो चुकी है। उनकी मृत्यु के बाद इस ओर ग्रन्थ लिखने का साहस अभी किसी को न हुआ। साहित्यालोचन', पद्धति और सिद्धांत के जैसे अनेक ग्रन्थ हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी जैसी भाषाओं में उपलब्ध हैं, ऐसे मलयालम में प्रायः तैयार नहीं हुए।

सर्वतोमुखी प्रतिभा रखनेवाले के० एम० पणिक्कर का ध्यान इस ओर गया, उन्होंने 'कवितातत्त्व निरूपण' ग्रन्थ रचा जो उच्चकोटि का नहीं माना गया। पी० कृष्णन् नायर ने साहित्यशास्त्र पर तीन भागों में एक बृहत् ग्रन्थ लिखा। साहित्य के सिद्धान्तों की सुन्दर व्याख्या इसमें की गयी है। इसकी गंभीर और दुरूह शैली के कारण इस का प्रचार अधिक नहीं हुआ। संस्कृत भाषा में 'ध्वन्यालोक' एक सुख्यात ग्रन्थ है, उसके प्रथम परिच्छेद का रूपांतर पी० कृष्णन नायर ने किया है। साहित्य के रीति ग्रन्थों में प्रथम स्थान पी० शंकरन नायर के 'साहित्यालोचनम्' को देना चाहिए। पाश्चात्य साहित्य के सिद्धान्तों के साथ ही संस्कृत ग्रन्थों के तत्त्वों का अध्ययन उन्होंने खूब किया है। कुछ लोगों का कहना है कि साहित्य के गंभीर सिद्धांतों का प्रतिपादन उन्होंने बहुत संक्षेप में किया है, अतः साधारण मनुष्यों को यह अत्यंत दुर्बोध जान पड़ता है।

ए० डी० हरिशर्मा की पुस्तक नाटकप्रवेशिका में संस्कृत नाटकों का समीक्षात्मक अध्ययन किया गया है। नवीन नाटकादर्श में मेक्कोल्ला

परमेश्वरन पिल्ला ने पाश्चात्य नाटकों का विश्लेषण करते हुए उनके कथा-पात्र, कथावस्तु आदि पर प्रकाश डाला है। मलयालम के नाटकों की आलोचना करते हुए सी० जे० तोमस ने 'उयरुन्न यवनिका' (उठता हुआ परदा) लिखा। आधुनिक नाटकों के स्वरूप की समीक्षा लेखक ने इसमें की है। एम० पी० पोल ने सौंदर्य-निरीक्षणकृति की रचना करके एक विशेष स्थान प्राप्त किया। कहा जाता है कि इस तरह की रचना केरल भाषा में बिरली ही है। दूसरे लाक्षणिक ग्रन्थों में पन्निश्शेरी नाणुपिल्ला की कथकलिप्रकारम, नृत्यदर्पणम्, अभिनयांकुरम् का स्थान उच्च है। नृत्यदर्पणम् का रचयिता बालगोपाल है और अभिनयांकुरम् का नर्तक गोपीनाथ।

ए० आर० राजराजवर्मा के बाद भाषा की शैली में क्या-क्या परिवर्तन हुए, उन सबका सूक्ष्म विवरण देते हुए प्रसिद्ध आलोचक कुट्टिकृष्णमायर ने 'मलयालम शैली' और 'वृत्तशिल्पम्' ग्रन्थ रचे हैं। इसी बीच अप्पनतंपुरान ने द्राविड़ वृत्तों और उनके भेदों पर एक ग्रन्थ लिखा है।

जोसफ मुण्डश्शेरी की 'काव्यपीठिका' को रीतिग्रन्थों में एक उन्नत स्थान प्राप्त हुआ है। साहित्य के मौलिक भावों पर पाश्चात्य तथा पौरस्त्य विद्वानों की सम्मति के अनुसार एक तुलनात्मक तथा समीक्षात्मक अध्ययन लेखक ने इसमें किया है। इसके अलावा काव्य के विविध पहलुओं पर उत्तम प्रकाश डाला गया है।

के० सुरेन्द्रन रूस के सुख्यात साहित्यकार टाल्स्टाय की कृति 'कला क्या है' के अध्ययन से खूब प्रभावित हुए। उसके फलस्वरूप उन्होंने एक अनूठी कृति रची जिसका नाम है 'कलयुम सामान्यजनङ्ङलुम्' (कला और सामान्यजन)। यह माना जाता है कि उत्तम कृतियों और आम जनता में कोई संपर्क नहीं है। इस पर सुरेन्द्रन ने इस कृति द्वारा खूब अनुसंधान किया। जनता की गलतफहमी से जो हानियाँ हुई हैं उन पर प्रकाश डालते हुए भव्य कलाओं की सुकुमारता, लालित्य आदि पर यह पुस्तक लिखी गयी है। आलोचना साहित्य के आचार्य ए० बालकृष्ण की पुस्तक 'रूपमंजरी' में

उन्होंने आधुनिक काल के गद्य-पद्य की विविध धाराओंपर समीक्षात्मक लेख लिखे हैं। किस ढंग का गद्य और पद्य सुन्दर है, अनुकरण योग्य है, इन विषयों के संबंध में लेखक ने अपने विचार प्रकट किये हैं।

उच्च साहित्य के लक्षण और उदाहरण, काव्य रचना में किन-किन सिद्धांतों का पालन करना चाहिए, इन सब बातों का संक्षिप्त विवरण शूरनाट्ट कुंञनपिल्ला की 'साहित्यप्रवेशिका' में पाया जाता है।

यद्यपि सिद्धांत और समीक्षा पर अनेक ग्रन्थ लिखे गये हैं तो भी अधिकांश पंडितों की राय है कि इस शाखा में प्रामाणिक ग्रन्थों का अभाव बना हुआ है। संसार की समृद्ध भाषाओं का अध्ययन कर कविता, नाटक, उपन्यास, समालोचना, निबन्ध आदि पर आलोचनात्मक प्रामाणिक ग्रन्थों की रचना में केरल के विद्वान् अब भी पीछे हैं। हाँ, दो-तीन ग्रन्थों का निर्माण हो चुका है, किन्तु वे दूसरी भाषाओं की प्रौढ़ रचनाओं की तुलना में हीन कोटि के हैं। संस्कृत के ग्रन्थों का रूपांतर ही प्रायः भाषा में हुआ है। अतः यह शाखा पल्लवित नहीं होने पायी।

आलोचना-ग्रन्थ

रीति-ग्रन्थों के अभाव के कारण केरली साहित्य के आदिकाल में आलोचना ग्रन्थ थोड़े ही थे। किसी रचना की आलोचना करते समय कई बातों पर सोच-विचार करना पड़ता है। आलोचक का कर्त्तव्य है कि पुस्तक के गुण और दोषों पर प्रकाश डालते हुए उसकी खूबियाँ भी पाठक को समझाये। यह रीति यूरोप के साहित्यकारों से यहाँ के विद्वानों ने सीखी है। कुछ विद्वान् अपनी रुचि के अनुसार पुस्तकों की आलोचना करते हैं। मान लीजिए, एक काव्य कुछ लोगों की दृष्टि में उत्तम जँचेगा, कुछ लोग उसे गन्दी पुस्तक कहेंगे। ऐसी हालत में आलोचक अपने व्यक्तिगत अभिप्राय की परवा किये बिना उसके गुण-दोषों पर निष्पक्ष भाव से प्रकाश डालेगा तो यह उसकी बड़ी गुणज्ञता होगी। खेद के साथ कहना पड़ता है निष्पक्ष भाव से समालोचना करनेवाले लोग बहुत कम संख्या में पाये जाते हैं। यूरोपीय

भाषाओं, खास कर अंग्रेज़ी के संपर्क से ही मलयालम में आलोचना साहित्य की शाखा विकसित होने लगी है।

केरलवर्मा वलियकोयित्तंपुरान के समय से आलोचना साहित्य का बीज अंकुरित हुआ। उन्होंने संस्कृत तथा अंग्रेज़ी भाषाओं के सिद्धांतों को आदर्श मानकर समीक्षा करना शुरू किया। वे जिन पुस्तकों की आलोचना करते थे उनके गुणों पर अधिक ध्यान देते थे। कभी-कभी पुस्तकों के दोषों का संकेत तक नहीं करते थे। स्थितप्रज्ञ के समान ए० आर० राज-राजवर्मा गुणों के साथ दोषों को दिखाने में पीछे नहीं रहते थे। किन्तु ए० आर० के उत्तम शिष्य के० रामकृष्ण पिल्ला पुस्तकों की कड़ी आलोचना करने में सिद्धहस्त थे।

पाश्चात्य साहित्य के समीक्षासिद्धांतों के अनुसार कुमारनाशान, वल्लत्तोल, उल्लूर एस० परमेश्वरैय्यर आदि की कविताओं पर आलोचनात्मक लेख प्रकाशित हुए हैं। इनमें यूरोपीय काव्य ग्रन्थों के लक्षणों पर भी चर्चा की गयी है। इन ग्रन्थों में एक त्रुटि यह है कि आलोचकों ने अपनी अपनी भावना के अनुसार टीका-टिप्पणी की है। तटस्थ भाव से काव्य ग्रन्थों पर समीक्षात्मक लेख लिखनेवाले लोग बहुत कम निकलते हैं।

इसी समय पी० के० नारायण पिल्ला ने रामानुजन एषुत्तच्छन, चेरुश्शेरी नंपूतिरि, कुंचन नंप्यार, उण्णायिवारि आदि महाकवियों की रचनाओं पर गंभीर शैली में आलोचनात्मक ग्रन्थ लिखे।

नारायण पिल्ला के आलोचना ग्रन्थ

श्री पी० के० नारायण पिल्ला के आलोचना ग्रन्थ अंग्रेज़ी आलोचना ग्रन्थों के समकक्ष आते हैं, यह बात सब विद्वान् मानते हैं। रचयिता ने अंग्रेज़ी साहित्य के अनेक ग्रन्थों का अध्ययन करने के बाद समीक्षात्मक ग्रन्थों का निर्माण किया है। पौराणिक साहित्य के ग्रन्थों के प्रति पिल्ला भक्ति-भाव रखते थे। साथ ही वे पाश्चात्य साहित्य के समीक्षात्मक तत्त्व के भी अच्छे ज्ञाता थे। अतः भक्ति ग्रन्थों के आन्तरिक भावों के अभिव्यंजन में भी पी०

के० नारायण पिल्ला अद्वितीय निकले। दूसरे कई पंडितों ने उनके चलाये मार्ग के अनुसार कई ग्रन्थों पर आलोचनात्मक लेख लिखे हैं। किन्तु वे सब पी० के० नारायण के लेखों के सामने निष्प्रभ ही रह गये। उनमें दो व्यक्तियों के नाम उल्लेखनीय हैं, एक के० आर० कृष्णपिल्ला और दूसरे पी० शंकरन नंप्यार। के० आर० कृष्णपिल्ला ने तुञ्चत्तु रामानुजन एषुत्तच्छन, रामपुरत्तु वारियर जैसे महाभक्त कवियों पर आलोचनात्मक ग्रन्थ लिखे जो उच्च कोटि के माने जाते हैं। चम्पू ग्रन्थों का गहरा अध्ययन कर के लिखित पी० शंकरन नंप्यार के निबन्धों का भी साहित्य में उन्नत स्थान है। उल्लूर एस० परमेश्वर अय्यर और वटक्कुंकूर राजराजवर्मा के समीक्षात्मक ग्रन्थ केरली की प्रकृत शाखा को दृढ़ करने में सहायक हुए हैं। हाल ही में वटक्कुंकूर ने चेरुश्शेरी नंपूतिरि की कृष्णगाथा पर एक गवेषणात्मक और आलोचनात्मक निबन्ध लिखा है, जिसमें उन्होंने चेरुश्शेरी के अपार पांडित्य, विनोदप्रियता, भक्ति आदि का परिचय दिया है। इस ग्रन्थ से चेरुश्शेरी की कविताओं पर नया प्रकाश पड़ता है।

पी० के० नारायण पिल्ला के समय में रामकृष्ण पिल्ला ने कविता के गुण-दोषों पर समदृष्टि रखकर अपनी तेज़ कलम चलायी, जिससे उस क्षेत्र में एक आन्दोलन उठ खड़ा हुआ। उसी प्रकार सी० अन्नप्पाई ने अपने पत्रों द्वारा पाश्चात्य सिद्धान्तों के अनुसार आलोचना आरम्भ की। 'भाषा नाटक परिशोधन' उनका उत्तम ग्रन्थ है। पाश्चात्य समीक्षा-पद्धतियों को उपयोग में लाने का सूत्रपात अन्नपाई ने किया। इसी समय अप्पन तम्पुरान, वल्लत्तोल नारायण मेनोन आदि ने भी पुस्तकों की आलोचना की। आलुवा कालेज के प्राध्यापक डी० पद्मनाभनुण्णि, पट्टाम्पी कालेज के प्राध्यापक सी० एस० नायर जैसे पंडित उस समय के उदीयमान आलोचक माने जाते थे।

जोसफ़ मुण्डश्शेरी ने आशान की कविताओं पर जो लेख लिखे, उनमें उन्होंने इस क्षेत्र में एक नया दृष्टिकोण रखा। मुण्डश्शेरी ने पी० के० नारायण पिल्ला के समान अंग्रेज़ी, मलयालम, संस्कृत जैसी भाषाओं में गहरा

पांडित्य प्राप्त किया है। अंग्रेज़ी भाषा के समीक्षात्मक तत्त्वों के अनुसार भारतीय भाषाओं की पद्य कृतियों की आलोचना उन्होंने की। उनका कथन है, जीवन में होनेवाले अनुभव के आधार पर हृदयान्तर्भाग से निकली कविता ही कविता है। इस तरह उण्णायि वारियर, कुमारनाशान आदि की कृतियाँ उनको अच्छी लगीं। पांडित्य के कारण कृत्रिम रूप से रची कविताओं की वे कड़ी आलोचना करते थे। ए० ए० रिच्चार्ड जैसे आलोचकों से वे खूब प्रभावित थे। 'कला कला के लिए' सिद्धान्त वे नहीं मानते थे। उन्होंने उद्घोषित किया कि जो रचना समाज की भलाई के लिए उपयोगी सिद्ध होती है वही सच्ची रचना है, और सब दूसरे दर्जे की चीज़ है। इसी दृष्टि से उन्होंने कालिदास, वल्लत्तोल, उल्लूर आदि कवियों की कृतियों की समीक्षा की। उनकी शैली गंभीर और तीक्ष्ण थी। किसी की परवा किये बिना वे अपनी भावना के अनुसार आलोचना करते थे।

इस क्षेत्र में जाज्वल्यमान मार्त्तण्ड के समान मुण्डश्शेरी शोभित होते हैं। उनकी पुस्तकों में 'मानदण्डम्', 'अन्तरीक्षम्', 'मनुष्यकथानुगायिकल', 'कालन्तिटे कण्णाटि' (समय का दर्पण), 'वाचनालय में' आदि उत्तम हैं। आलोचना साहित्य में मुण्डश्शेरी की पुस्तकें उन्नत स्थान पर सुशोभित होती हैं।

तकषी शिवशंकर प्पिल्ला, केशवदेव, बशीर, चंगम्पुषा आदि प्रगतिशील साहित्यिकों की रचनाओं का महत्त्व मुण्डश्शेरी ने ही लोगों को समझाया। मालूम पड़ता है मानों इन रचयिताओं के प्रति मुण्डश्शेरी की गहरी सहानुभूति रही हो।

सांसारिक बातों को निस्संग भाव से देखनेवाले योगी के समान कविताओं के आलोचकों में 'केसरी' नाम से प्रख्यात ए० बालकृष्ण पिल्ला का स्थान अद्वितीय है। एक वैज्ञानिक अपनी प्रयोगशाला में बैठकर वस्तुओं का विश्लेषण करता है और उसका फल लोगों को समझाता है। उसी प्रकार ए० बालकृष्ण पिल्ला साहित्यक कृतियों का सूक्ष्म निरीक्षण करके गुण और दोषों को व्यक्त करते हैं। पाश्चात्य समीक्षकों के समान

ही पिल्ला पुस्तकों की आलोचना करते थे। कभी-कभी हमारे कवियों की तुलना भी वे पाश्चात्य कवियों से करते थे। तुलना करते समय उनका तटस्थ भाव बना रहता था। उस समय पाश्चात्य साहित्य में जो आलोचना-पद्धतियाँ प्रचलित थीं, उन सबको स्वीकार करने में पिल्ला ने जरा भी संकोच नहीं दिखाया। उनके अनुसार बालकृष्ण पिल्ला ने जी० शंकर कुरुप की 'निमिषम्', पप्पुक्कुट्टि की 'कटत्तु वञ्चि' आदि पुस्तकों की आलोचना करके उन पर अनेक महत्त्वपूर्ण लेख लिखे।

स्पष्टवक्ता एम० पी० पोल

एम० पी० पोल ने 'अकबर', 'कुन्दलता' जैसे उपन्यास ग्रन्थों, और सी० वी० रामन पिल्ला, चन्तु मेनोन आदि की रचनाओं पर सुन्दर आलोचना लिखकर अमर नाम पाया है। 'बाल्यकाल सखी' पर लिखी उनकी समीक्षा गंभीर मानी जाती है। सर्वतोमुखी प्रतिभा, विविध भाषाओं का ज्ञान, आलोचना में तटस्थता, प्रबल तथा आकर्षक शैली, काव्यों का रसास्वादन करने की निपुणता, आत्मनिर्भरता आदि गुणों के कारण मलयालम भाषा के आलोचना-साहित्य में एम० पी० पोल को सहृदयों ने प्रथम तथा प्रधान स्थान दिया है। चाहे किसी की भी रचना हो, उसके गुण तथा दोषों को ढूँढ़ निकालने में पोल संकोच नहीं दिखाते थे। हम देखते हैं कि यदि कोई व्यक्ति किसी एक सुन्दर रचना द्वारा प्रसिद्ध हो जाय तो उसकी सारी कृतियों की प्रशंसा बहुत-से लोग करते हैं। पोल का स्वभाव है कि किसी भी बड़े व्यक्ति की रचना हो, वह सुन्दर तथा मधुर हो तो उसकी तारीफ़ करेंगे, बुरी हो तो कड़ी आलोचना करेंगे। जज जिस प्रकार मुकदमे के दोनों पहलुओं को सुन-कर बड़ी सावधानी से उसका फैसला करता है, उसी प्रकार किसी कृति का स्थान पोल निर्धारित करते हैं। समीक्षात्मक लेख लिखते समय वे पाश्चात्य तथा पौरस्त्य सिद्धान्तों को व्यवहार में लाते थे। किंबहुना, मलयालम साहित्य की आलोचना शाखा को परिपुष्ट करने में जिन-जिन महानुभावों ने अथक यत्न किये हैं, उनमें एम० पी० पोल के प्रयत्नों की प्रशंसा करने के

लिए शब्द नहीं मिलते। उनके अकाल-वियोग से केरली माता की बड़ी क्षति हुई है।

समर्थ आलोचक कृष्णन कुट्टि मारार

आलोचना साहित्यरूपी आलीशान भवन में एक उन्नत और परिपुष्ट स्तंभ के समान शोभा पाते हैं कृष्णन कुट्टि मारार। भारतीय भाषाओं के खास कर संस्कृत के वे बड़े विद्वान् हैं। संस्कृत पंडितों की रूढ़िप्रियता का स्पर्श उनके हृदय में ज़रा भी नहीं हुआ। अपने अभिप्राय के प्रकटन में उन्होंने बड़ा साहस दिखाया है। दलबन्दी से परे रहकर आलोचना करनेवालों में मारार अग्रणी हैं। उन्होंने अकाट्य युक्तियों द्वारा अपने पक्ष का समर्थन किया है। साहित्य के लक्ष्य, सत्साहित्य क्या है आदि गहरे विषयों पर उन्होंने जो मत प्रकट किये हैं, वे सबके लिए अनुकरणीय हैं। उनके "राजांगणम्" 'कैविलक्कु' (हाथ का दीप) 'साहित्यसंल्लाप' आदि ग्रन्थों में अनेक आलोचनात्मक लेखों को संग्रह किया गया है। उनकी शैली आकर्षक और अमोघ है, उनकी रचनाएँ ओजगुण से भूषित हैं। महाभारत के कथा-पात्रों की समीक्षा में मारार ने अपनी प्रतिभा प्रदर्शित की है। कहते हैं, और किसी ने इतनी निर्भयता के साथ उस ग्रन्थ के पात्रों तथा संदेशों पर टीका-टिप्पणी नहीं लिखी है। उन लेखों का संग्रह 'भारत पर्यटनम्' नामक पुस्तक के रूप में प्रकाशित हुआ है। मारार के निजी व्यक्तित्व की झलक उनकी आलोचना सम्बन्धी पुस्तकों में साफ़ दिखाई पड़ती है। 'मेघ-सन्देश' और 'उण्णिनीलि सन्देश' पर लिखी उनकी आलोचना, साहित्य में विशिष्ट स्थान रखती है। कवीन्द्र वल्लत्तोल नारायण मेनोन ने संपादक के रूप में अपनी कृति, 'ग्रन्थविहार' में अनेक आलोचनाएँ लिखकर प्रकाशित की हैं।

प्रगतिशील साहित्य के आदर्शों का युक्तियुक्त खंडन करते हुए पी० दामोदरन पिल्ला ने कई गंभीर लेख लिखे हैं। कुमारनाशान की कविताओं पर लिखी उनकी कृति आलोचना-साहित्यरूपी भंडार को पुष्ट करती है। पर कुछ विचारकों का कहना है कि पोल के समान निष्पक्ष भाव से वे आलो-

चना नहीं करते। मलयालम भाषा के नाटकों को आधार मानकर उन्होंने एक ग्रन्थ रचा है जिसका नाम है 'भारतीय नाटकङ्ङल' (भारत के नाटक)। हाल में ही वल्लत्तोल नारायण मेनोन और सी० वी० रामन पिल्ला की रचनाओं पर उन्होंने सुन्दर आलोचनात्मक ग्रन्थ लिखे हैं। उत्कृष्ट होने के कारण सहृदय लोग उनका स्वागत करते हैं। पहले लिखा जा चुका है कि वैज्ञानिक ग्रन्थ-रचयिता के रूप में (यूनिवर्सिटी कालेज के प्रिंसिपल) डा० के० भास्करन नायर प्रसिद्ध थे। आलोचना क्षेत्र में भी उनका नाम अमर हो गया है। सी० वी० रामन पिल्ला की पुस्तकों पर लिखे हुए 'धन्यवादम्' और 'कलयुं कालवुं' (कला और काल) उनके ये दोनों ग्रन्थ अनूठे माने जाते हैं।

एम० आर० नायर ने अपनी 'साहित्यनिकषम्' में कालिदास, रवीन्द्र, उल्लूर, वल्लत्तोल, आशान चङ्ङम्पुषा कृष्ण पिल्ला, चन्तु मेनोन आदि की रचनाओं की आलोचना करते हुए अनेक लेख लिखे हैं। भिन्न-भिन्न कवियों के आशयों की सराहना करते हुए उन्होंने लोगों को समझाने का प्रयास किया है। यह उनकी अपनी विशेषता है।

मलयालम के प्रोफ़ेसर एस० गुप्तन नायर समालोचना शाखा के उद्भट लेखक हैं। किसी कविता या कृति का सारांश निकालने में गुप्तन नायर ऊँची प्रतिभा दिखाते हैं और गुणदोषों का विवेचन सरल तथा मंजुल शैली में करते हैं। उनकी प्रेरणा पाकर बहुत-से युवक साहित्यकार सैकड़ों पुस्तकों पर आलोचना सम्बन्धी लेख लिखने लगे हैं जो 'ग्रन्थालय' नामक मासिक पत्र में प्रकाशित किये जाते हैं।

के० सुरेन्द्रन की महत्सन्निधि" में इब्सन के तीन नाटक, 'रोम्याँ रोलाँ' का जीन 'क्रिस्तोफ' नामक उपन्यास, टाल्स्टाय की 'अन्ना करीना' आदि पुस्तकों की आलोचना की गयी है। कलापूर्ण ढंग से समीक्षात्मक लेख लिखने की कुशलता थोड़े समय में सुरेन्द्रन ने प्राप्त की है। स्थानीय कई साप्ताहिक और मासिक पत्रों में उनके अनेक लेख प्रकाशित होते हैं। पी० ए० वारियर, एन० वी० कृष्ण वारियर, एम० एस० के० नायर, अषी-

क्कोड सुकुमारन, षण्मुखदास, श्रीधर मेनोन जैसे तरुण कलाकार उत्तम कृतियों पर समीक्षात्मक लेख लिखते रहते हैं। उल्लाट्टिल गोविन्दनकुट्टि नायर ने अपने 'साहित्यसंचारम्' में आलोचना के सिद्धान्तों का वर्णन करते हुए अनेक गम्भीर लेखों का प्रकाशन किया है। पाठकों के हृदयों को हठात् आकर्षित करनेवाली शैली में डाक्टर एस० के० नायर की पुस्तक (कला-चिन्तकल्' सुख्यात हो गयी है। वर्तमान काल के महान्' लेखकों और कवियों की रचनाओं पर सी० जे० तोमस, एम० कृष्णन नायर, के० रामचन्द्रन, के० एन० एषुत्तच्छन जैसे समालोचक वोधगम्य भाषा तथा सरल और मोहक शैली में प्रति सप्ताह अनेकों लेख लिखते हैं। वे सब कौमुदी, मातृ-भूमि, मलयालराज्यम् आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित किये जाते हैं। इस प्रवृत्ति से मलयालम साहित्य की यह शाखा दूसरी समृद्ध भारतीय भाषाओं के समकक्ष आ गयी है।

निबन्ध

अंग्रेज़ी भाषा के निकट सम्पर्क से मलयालम साहित्य की निबन्ध-शाखा हरी-भरी हो उठी है। यद्यपि धर्म, विज्ञान, अर्थशास्त्र, इतिहास, भाषा-विज्ञान, समालोचना आदि पर अनेकों निबन्ध लिखे जा चुके हैं और उनका ज़िक्र भी हो चुका है, तथापि वे वस्तुतः निबन्ध-शाखा के अन्तर्गत नहीं आ सकते। अंग्रेज़ी साहित्य में निबन्ध या 'एस्से' (Essay) जिस ढंग से लिखे जाते हैं और उन्हें जो ऊँचा स्थान प्राप्त है, उसी पद्धति के अनुसार मलयालम में जितने निबन्ध लिखे गये हैं, उनकी चर्चा करना इस प्रकरण का उद्देश्य है।

हम ऐसे निबन्ध पढ़ते हैं जिनमें लेखकों ने किसी तुच्छ या गम्भीर विषय पर मनोरंजक रूप में चर्चा की है। कुछ निबन्ध कहानी के समान रसात्मक शैली में लिखे गये हैं। लेखक अपने अनुभवों का वर्णन करते हुए लोगों के स्वभाव और संसार की हालत पर भी निबन्ध लिखते हैं। इस दृष्टि से वास्तविकता यह है कि अंग्रेज़ी के समान केरली में निबन्ध-शाखा की प्रगति

नहीं हुई है। हमारे बहुत-से निबन्ध ऐसे हैं, जिनका अध्ययन करते समय पाठकों में नयी जाग्रति नहीं होती, बल्कि मन ऊब जाता है।

निबन्ध साहित्य का बीज केरलवर्मा वलियकोयित्तम्पुरान के समय में बोया गया। विद्यार्थियों को पढ़ाने के लिए उस समय अनेक निबन्ध तम्पुरान और उनके अनुयायियों ने लिखे। किन्तु वे अंग्रेज़ी निबन्धों के समान गम्भीर तथा रसयुक्त नहीं माने गये। सरस, अर्थयुक्त, मनोरंजक, पण्डितोचित निबन्धों के निर्माण में प्रथम स्थान वेङ्ङायिल कुज्जुरामन नायनार को देना चाहिए। 'द्वारका', 'मरिच्चालत्ते सुखम्' (मृत्यु के बाद का सुख) आदि उनके उत्कृष्ट निबन्ध हैं। गद्यमालिका नामक निबन्ध समुच्चय में विद्या-विनोदिनी के सम्पादक सी० अच्युत मेनोन ने कतिपय निबन्ध लिखे हैं और ईश्वर पिल्ला ने 'चिन्तासन्तानम्' के सात भागों में अनेक लेख लिखे हैं जो अच्छे ज्ञानप्रद हैं। उनमें मनोरंजन का अभाव होते हुए भी निबन्ध के सारे लक्षण पाये जाते हैं। आशय स्पष्ट करने में लेखक ने अच्छी सफलता पायी है। सी० एस० गोपाल पणिक्कर का 'मुतलनायाट्टु' (मगर का शिकार) और केरलवर्मा का 'एण्टे मृगयास्मरणकल्' (मेरी शिकार सम्बन्धी घटनाओं के स्मरण) निबन्ध साहित्य की पूँजी हैं। ये दोनों निबन्ध बड़ी तन्मयता से लिखे गये हैं।

के० सुकुमार ने चींटी, साँप, कौआ, गिलहरी जैसे जीवों पर रोचक निबन्ध अनूठी शैली में लिखे हैं। 'मंगलमाला' के विविध भागों में प्रकाशित अप्पन तम्पुरान के लेखों का स्थान निबन्ध साहित्य में उन्नत है। सुन्दर तथा प्रसादात्मक शैली में ये निबन्ध लिखे गये हैं। 'मषिक्कटल' (स्याही का सागर) नामक निबन्ध आदि से अन्त तक मधुर है। उसकी मोहक शैली सबको आकर्षित करती है। के० आर० कृष्णपिल्ला के लेखों में प्रधान 'भारवुं वलिप्पवुं' (गुरुत्व और महत्त्व) 'मनुष्यस्वभावम् उत्कृष्टमो अपकृष्टमो' (मनुष्य स्वभाव उत्कृष्ट या अपकृष्ट), स्वाश्रयशीलम् (स्वाव-लम्बन) आदि हैं। उन्होंने आर० कृष्ण पिल्ला की शैली को आदर्श मानकर निबन्धों का निर्माण किया था। उसी शैली (स्कूल) के और एक

निबन्धकार हैं कुट्टिप्पुषा कृष्ण पिल्ला। 'नवदर्शनम्', 'विमर्शरश्मि', 'निरीक्षणम्', 'विचारविप्लवम्' जसे उज्ज्वल लेख उन्होंने लिखे हैं। प्रबन्धपारिजात के कर्त्ता पी० अनन्तन पिल्ला और पी० दामोदरन पिल्ला आदि सहृदयों ने अनेक निबन्ध लिखकर इस शाखा को परिपुष्ट किया है। दामोदरन पिल्ला के निबन्ध 'विचारतरंगिणी' में प्रकाशित हैं। अंग्रेज़ी के प्रसिद्ध निबन्धकार ए० जी० गार्डिनर तुच्छ विषयों को केन्द्रित कर उन विषयों के कारण चित्त में जाग्रत होने वाली वृत्तियों का प्रकाशन समुचित रूप से दिखाते हुए पाठकों को प्रसन्न करते हैं। उसी ढंग पर पुत्तेषत्त् रामन मेनोन ने, शीशे का टुकड़ा, झाड़ू, केले का छिलका, घास जैसे तुच्छ विषयों पर निबन्ध लिखे हैं, यद्यपि इनके बीच-बीच में कृत्रिमता और क्लिष्टता का आभास दिखाई पड़ता है।

कौए के बारे में भूक्कोर्त्त कुमारन ने एक उत्कृष्ट निबन्ध रचा जिसकी महिमा चारों ओर गायी जाती है। निराशा, मटि (सुस्ती), मरवि (भूल) और मनोराज्य पर चार लेख प्रकाशित किये गये हैं। रचयिता मुत्तिरिङङोट भवत्रातन नंपूतिरी हैं। एस० राजराजवर्मा, पी० के० नारायण पिल्ला, सी० वी० कुञ्ञुरामन जैसे साहित्यकारों ने अपनी कुशल लेखनी से अनेक निवन्ध लिखे हैं: हास्यसम्राट् ई० वी० कृष्ण पिल्ला और एम० आर० नायर (संजय) के आगमन से केरली का निबन्ध साहित्य खूब निखर आया है। ई० वी० ने अपनी कृति 'चिरियुं चिन्तयुं' (हँसी और चिन्तन) में ऐसे विनोदपूर्ण लेख लिखे जिन्हें पढ़कर लोग हँसते-हँसते लोटपोट हो जाते हैं। ऐसा कोई व्यक्ति दुनिया में न होगा जो ई० वी० की कृति पढ़कर बिना हँसे रह सकता हो। वे लोगों को हँसाकर चिन्तन करने की सामग्री दिया करते थे।

संजय सामयिक विषयों पर रोचक निबन्ध लिख कर लोगों को यह उपदेश देते थे कि मानव जीवन रोने के लिए नहीं है, बल्कि मृत्यु तक आनन्द उठाने के लिए है। वे सामाजिक दोषों को अपनी रचनाओं द्वारा दिखाकर उनसे बचने की चेतावनी भी दिया करते थे, जिससे वे समाज-सुधारक के रूप

में लोगों के सामने प्रत्यक्ष होते थे। संजय मलवार निवासी थे। अत: कालिकट की म्यूनिसिपालिटी, मलबार पुलिस जैसे प्रादेशिक विषयों पर चुटीली बातें लिख कर पाठकों को रिझाया करते थे। उसी समय ई० वी० कृष्ण पिल्ला की कलम अतिथि लोग, सामाजिक प्राणी, ईश्वर आदि विषयों पर चल रही थी। इन दोनों की रचनाओं में हास्य-रस का पुट ज्यादा मिलता है। ई० वी० कृष्ण पिल्ला ने आगे चलकर ऐसे अनेक निबन्ध लिखे हैं जिनकी गम्भीरता तथा सारपूर्णता देख कर पाठक को सन्देह होने लगता है कि हास्य-सम्राट् ई० वी० की लेखनी से ऐसी कृतियाँ कैसे निकल सकती हैं? वे लेख भारत के स्वतन्त्रतासंग्राम के समय लिखे गये थे।

इन दोनों के पश्चात् ई० एम० कोवूर ने ई० वी० कृष्ण पिल्ला का अनुसरण करके अपने 'नखलालनङ्ङल्' में कुछ छोटे निबन्ध लिखे। पी० के० राजराजवर्मा के निबन्ध ई० वी० और संजय के निबन्धों की कोटि में आते हैं। मातृभूमि के द्वारा प्रकाशित विक्रम की रचनाएँ पाठकों को हँसाती हैं, रुलाती हैं और खूब प्रभावित करती हैं। शूरनाट कुंजन पिल्ला की 'तिरुमुल-काष्च' (उपहार), केशवदेव की 'चित्रशाला', सी० आर० केरलवर्मा की 'चिरि' और भंगि', मुण्डश्शेरी की 'ओट्ट नोट्टत्तिल' (एक ही दृष्टि में) डा० एस० के० नायर की 'नर्मसल्लापम्' जैसी कृतियाँ केरली निबन्ध-शाखा के सुगन्धित फूल हैं। सी० जे० तोमस की 'इवनेन्टे प्रिय पुत्रन' (यह मेरा प्रिय पुत्र), 'धिक्कारियुटे कातलुं' सुन्दर रचनाएँ हैं। इनके अतिरिक्त एम० आर० वी० ने 'मुखच्छाया', 'मुला पोट्टिय वित्तुं' (अंकुरित बीज) लिखकर इस शाखा की श्रीवृद्धि की है।

वर्तमान कालिक अंग्रेजी भाषा के हेज़लिट, स्टीवन्सन, ई० वी० लूकास जैसे उद्भट निबन्धकारों के समान योग्य व्यक्ति तो मलयालम में पाना बहुत कठिन है, किन्तु ऐसे बहुत-से लेखक हम यहाँ पाते हैं जिन्होंने विचारात्मक, भावात्मक, तथा वर्णनात्मक निबन्ध लिखकर केरली साहित्य को समृद्ध बनाया है और बना रहे हैं।

हास्य-साहित्य

पहले लिखा जा चुका है कि हास्य साहित्य में कुंचन नंप्यार का स्थान अतुलनीय है। उनके समान सर्वतोमुखी प्रतिभा रखनेवाले हास्य साहित्यकार का विश्व-साहित्य में भी मिलना कठिन है। हास्य साहित्य में हिन्दी की अपेक्षा केरली का स्थान अधिक ऊँचा है। कुंचन के बाद ई० वी० कृष्ण पिल्ला और संजय की हास्य-भरी कृतियों से केरली खूब समृद्ध हुई। ई० वी० की 'चिरियुं चिन्तयुं' (हँसी और चिन्तन) का जिक्र पहले हो चुका है। उसके बाद उन्होंने 'कवितक्केस्स' (कविता पर मुकदमा), 'पोलीस रामायणम्', 'एम० एल० सी० कथकल' (विधानसभा के सदस्यों की कथाएँ) लिखीं। उनमें 'कवितक्केस्स' का नाटक के रूप में केरल के कोने कोने में अभिनय किया गया। सब उसे देखकर अतीव प्रसन्न हुए।

इसी समय आशान, वल्लत्तोल और उल्लूर जैसे महाकवि भावात्मक गीत लिखने लगे थे। उनकी नकल करके कई तरुण कलाकारों ने उसी ढंग पर कविताएँ लिखीं। इन सबकी हँसी उड़ाने के लिए रची गयी कृति है कवितक्केस्स। उसके कथापात्र वकील, जज और एक कवि हैं। वकील मलयालम तथा अंग्रेज़ी को ठीक रीति से जाननेवाला नहीं है, किन्तु समझता है कि वह स्वयं सब कुछ जानता है। मुवक्किल बयान देता है, उस पर विना ध्यान दिये ही जज के सामने वकील अंट-संट कहने लगता है। जज भी वकील तथा मुवक्किल की बातों पर ध्यान दिये बिना अपनी स्थिति पर चिन्ता प्रकट करते हुए काल्पनिक लोक में सदा विचरण करने वाला व्यक्ति है। कवि का चित्रण सुन्दर ढंग से किया गया है। वह अपनी कविता को राहगीरों और अपनी प्रिया को सुनाकर उन्हें तंग करता रहता है। इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं है कि जो कोई भी यह कृति पढ़ता है वह उन पात्रों को भूलता नहीं, बल्कि उनकी बेवकूफी पर हँसते हुए लोट-पोट हो जाता है। पोलीस रामायणम्' उसी ठंग पर रची एक हास्यरस प्रधान कविता है। विधानसभा का सदस्य बनकर स्थान, मान, पूज्यता अदि प्राप्त करने की

इच्छा रखनेवाले लोगों की कमी यहाँ नहीं है। उनकी बेवकूफी, डींग मारना अन्तस्सार शून्यता आदि का चित्रण एम० एल० सी० कथकल में पाया जाता है।

हास्य के अनुकरण में संजय की सामर्थ्य अमोघ है। सुख्यात अंग्रेज़ी पत्रिका 'पंच' के लेखों के समान ही वे हास्य-भरे लेख लिखते थे। वे समाज, धर्म या किसी दल की निन्दा करते हुए अपनी लेखनी नहीं चलाते थे। उनका सिद्धान्त था कि मानव का जीवन रोने के लिए नहीं, बल्कि हँसने के लिए है। भगवद्गीता में कृष्ण मनुष्य के जीवन तथा कर्त्तव्य पर जो उपदेश देते हैं, उसको अमल में लाने के लक्ष्य पर उनका बड़ा आग्रह था। युक्तियों के साथ आशयों के स्पष्टीकरणार्थ सार्थक शब्दों का प्रयोग करने में संजय ने कमाल किया है। उनकी शैली ऐसी आकर्षक थी कि कोई उसका अनुकरण अभी तक नहीं कर सका है। सामाजिक तथा राजनीतिक कार्यों में वे महात्मा गांधी के पक्के अनुयायी थे। नैतिकता से यदि कोई भ्रष्ट हो जाय तो उसके विरुद्ध अपनी तेज कलम चलाने में उन्होंने ज़रा भी संकोच नहीं दिखाया। यद्यपि कुछ लोगों की दृष्टि में वे भयानक व्यक्ति के रूप में प्रतीत होते थे, तो भी वास्तव में वे दिव्य सन्देश का प्रचार करनेवाले थे। सरस कवि, उज्ज्वल तत्त्ववेत्ता, सूक्ष्म निरीक्षक, तटस्थ आलोचक, हास्य-सम्राट् आदि विविध रूपों में प्रसिद्ध संजय का स्थान काफी ऊँचा समझा जाता है। उनका देहान्त सन् १९४२ में हुआ।

ई० वी० कृष्ण पिल्ला और संजय के बाद ई० एम० कोवूर ने अपनी कृति 'नखलालनङ्ङल' में कई हास्य-लेख लिखे हैं। वर्त्तमान काल में हास्य साहित्यकारों में पी० के० राजराजवर्मा, सीतारामन, आनन्दक्कुट्टन, माधवजी, तिक्कोटियन, मीशान, एम० एन० गोविन्दन नायर, एन० के० आचारी आदि का नाम उल्लेखनीय है।

किसी भी कवि की कृतियों का सूक्ष्म अध्ययन करके, उनके अनुकरण पर सरस तथा आकर्षक शैली में कविता लिखने में सीताराम ने खूब प्रतिभा दिखायी है। उल्लर परमेश्वर अय्यर की कविता 'आम्बाटियिल चेल्लन्न

अक्रूरन', आशान की 'करुणा' आदि कई पुस्तकों के अनुकरण पर सीताराम ने कविता रची है। उनकी रचना का संग्रह 'हास्य रेखकल' तथा 'हास्य-लहरी' ग्रन्थों में पाया जाता है। माधवजी, की कृति 'सलाम सलाम' और मीशान की रचना 'प्रतिच्छाया' हास्य साहित्य की सुन्दर निधियाँ हैं। वर्त्तमान काल में कदाचित् ही ऐसा कोई सहृदय होगा जिसने पी० के० राजराजवर्मा की कृति 'पंचुमेनवनुं कुञ्चियम्मयुं' न पढ़ी हो। गाँव के तथाकथित कुलीन कुटुम्ब का नायक तथा नायिका बनना, बिगड़ना, दैनिक कार्यक्रम, छोटी-मोटी घटनाएँ आदि विषयों का सुन्दर चित्रण रंजक शैली में इन दोनों कथापात्रों द्वारा वर्मा ने सहृदयों के सामने प्रस्तुत किया है। कहीं-कहीं ऐसा मालूम पड़ता है मानो कथा के गठन में शिथिलता आ गयी हो। फिर भी प्रायः सर्वत्र स्वाभाविकता का रूप अविकल बना रहता है।

पुत्तेषत्तु रामन मेनोन की 'विद्युज्जिहन्टे विलयाट्टम', एम० एन० गोविन्दन नायर की 'गोपीविलासम्' आदि कृतियाँ उत्तम हैं। प्राध्यापक आनन्दक्कुट्टन की हास्यकृतियों में प्रधान 'पापिककुटे ताषवरा' (पापियों की तराइयाँ), 'इनकलाब कुज्ञूठन', 'कटलासु मंत्री' आदि हैं। इनके अतिरिक्त के० पी० रामन पिल्ला, के० एस० कृष्णन, आर्टिस्ट राघवन नायर जैसे कलाकारों ने अनेक रचनाएँ की हैं।

जीवनी-साहित्य

हम देखते हैं कि भारत के प्रधान कवियों, तत्त्ववेत्ताओं आदि के जीवन पर प्रकाश डालनेवाले ग्रन्थों का अभाव अनेक वर्षों से रहता आया है। जिन महान् व्यक्तियों ने गंभीर, सरस तथा सारपूर्ण ग्रन्थ रचकर भारतीय साहित्य को समृद्ध बनाया है, उन्होंने अपने व्यक्तिगत जीवन पर प्रायः एक शब्द भी नहीं कहा है, जिसके कारण उनके संबंध की घटनाओं से हम बिलकुल अनभिज्ञ रहते हैं। अंग्रेज़ी-जैसी समृद्ध भाषा में जीवन-चरित संबंधी साहित्य की शाखा यथेष्ट उन्नत हो चुकी है। सन् १९३० के बाद मलयालम

में जीवनियों का प्रकाशन आरंभ हुआ है। किन्तु उनमें अच्छी और आदर्श जीवनियाँ बहुत कम पायी जाती हैं। किसी महान् व्यक्ति का जीवन वृत्त लिखते समय बहुत-सी बातों का ज्ञान होना परमावश्यक है। उसके जीवन-काल में हुई छोटी-मोटी घटनाओं का परिचय, उसकी व्यक्तिगत विशेषताओं की जानकारी आदि कई बातों पर उत्तम जीवनी का लिखा जाना निर्भर करता है। ऐसी बातों का सूक्ष्म ज्ञान रखे बिना जो जीवनियाँ लिखी गयी हैं, उनका कोई मूल्य नहीं। अतः इस प्रकरण में केवल महत्त्वपूर्ण प्रकाशनों का जिक्र ही उपयुक्त समझा गया है।

मलयालम साहित्य की गद्य-शाखा के जनक केरलवर्मा वलियकोयित्तम्पुरान की जीवनी बहुत संक्षेप में उनके भानजे, केरलपाणिनि नाम से प्रख्यात ए० आर० राजराजवर्मा ने लिखी है। इस कृति को जीवनी साहित्य में प्रथम स्थान दिया जा सकता है। उसके बाद भाषा-प्रेमी संपादक और प्रकाशक तोमस पोल ने अंग्रेज़ी के 'मेन आफ लेटर्स' (Men of letters) की शैली के अनुसार 'केरलभाषा-प्रणयिकल' (केरल-भाषा-प्रेमी) और 'साहित्य-प्रणयिकल' (साहित्यप्रेमी) नामक दो सुन्दर ग्रन्थों का प्रकाशन किया, जिनमें अनेक महान् व्यक्तियों की जीवन झाँकी मिलती है। उसी शैली पर कुन्नत्तु जनार्द्दनन मेनोन ने महाकवि कुमारनाशान और सी० वी० बालकृष्ण पणिक्कर की जीवनियाँ लिखीं। सामान्य उपन्यास के रचयिता ओ० चन्तुमेनवन पर मूर्कोत्तु कुमारन ने और पन्तलम केरलवर्मा एवं ओडुविल कुञ्ञुकृष्ण मेनोन पर ए० डी० हरिशर्मा ने जीवनी ग्रन्थ रचे। कुञ्ञक्कुट्टन तंपुरान, उण्णायि वारियर, के० सी० केशव पिल्ला, कोट्टयम केरलवर्मा, वरवूर रामन मेनोन आदि कवियों की जीवनियाँ प्रकाशित हो गयी हैं। एम० आर० बालकृष्ण वारियर का केरलदेव, अनन्तन पिल्ला का केरल पाणिनि, एन० बालकृष्णन नायर का कृष्णन तम्पि आदि अनेक ग्रन्थ इस शाखा को विकसित कर रहे हैं।

ए० डी० हरिशर्मा ने कंडरत्तिल वरुगीस माप्पिला, के० सी० केशव पिल्ला और दो साहित्यनायकों (केरलवर्मा और राजराजवर्मा) के चरित्र

लिखकर इस क्षेत्र की बड़ी सेवा की है। ए० आर० राजराजवर्मा के संबंध में उनके पुत्र और पुत्री दोनों ने मिलकर लिखा है। नारायण पिल्लई ने राजनीतिक कार्यकर्ताओं में प्रमुख चंङ्नाशेरी परमेश्वरन पिल्ला का चरित्र लिखा। उसमें उस क्षेत्र की सामयिक घटनाओं पर भी काफी प्रकाश डाला गया है।

'साहित्यपंचानन' नाम से सुख्यात पी० के० नारायण पिल्ला और सी० वी० रामन पिल्ला की जीवनियाँ पी० के० परमेश्वरन नायर ने लिखीं, जिनका स्थान जीवनी-साहित्य में उत्तम समझा जाता है। इनके अतिरिक्त इस लेखक ने महात्मा गांधी, वाल्टेयर, नेपोलियन और जोसाफाइन, नेपोलियन्टे जीवितसायह्नम् '(नेपोलियन का अन्तिम काल) जैसे ग्रन्थ भी रचे हैं। वटक्कुंकूर राजराजवर्मा लिखित उल्लूर एस० परमेश्वरय्यर, के० भास्कर पिल्ला लिखित के० रामकृष्ण पिल्ला, के० एन० गोपाल पिल्ला कृत के० सी० केशवपिल्ला, किट्टुण्णि नायर कृत महाकवि वलत्तोल आदि की जीवनियाँ भी उत्कृष्ट हैं।

भारतीय चित्रकला के नेता राजा रविवर्मा के जीवन पर एस० बाल-कृष्णन नायर ने एक पुस्तक लिखी है। सुख्यात गायक और संगीत ग्रन्थों के रचयिता स्वातिनक्षत्रज राजा की जीवनी शूरनाट कुंञन पिल्ले ने रची है। मूर्कोत्तु कुमारन की लिखी श्री नारायण गुरुजी की जीवनी के विषय में सभी साहित्यिकों का मत है कि वह उस समय की कृतियों में सर्वोत्तम है। श्री गुरु के जीवन पर के० दामोदरन, स्वामी धर्मतीर्थ, के० के० पणिक्कर जैसे सहृदयों ने भी ग्रन्थ रचे हैं। महायोगी चट्टम्पि कुंजन पिल्ला स्वामी की जीवनी भी परवूर-निवासी के० गोपाल पिल्ला ने उसी समय लिखी है। इसी प्रकार देश के पक्के पुजारी शूरवीर वेलुत्तम्पी के जीवन पर वेणकुलम् परमेश्वरन पिल्ला और एन० बालकृष्णन नायर ने दो पुस्तकें लिखकर प्रकाशित की हैं।

समाज की सेवा में अपने जीवन की बलि देनेवाली के० चिन्नम्मा का महत्त्व एन० बालकृष्णन नायर ने अपनी कृति द्वारा लोगों को समझाया है।

तच्चोल्लि ओतेनन पर के० माधवी अम्मा और शक्तन तम्पुरान पर पुत्तेषत्तु रामन मेनोन ने दो ग्रन्थ प्रकाशित किये हैं। इनके अतिरिक्त मन्नत्तु पद्मनाभन, टी० के० माधवन, साधु कोच्चु कुञ्जु, के० सी० माम्मन माप्पिला, निधिरिक्कल माणिक्कत्तनार, ए० बालकृष्ण पिल्ला जैसे महान् व्यक्तियों पर लिखित जीवनी-ग्रन्थ इस शाखा की अटूट संपत्ति हैं। परमहंस श्री नीलकण्ठ तीर्थ चरित्रसमुच्चयम् के रचयिता एस० एन० कृष्ण पिल्ला और पन्निश्शेरि नाणु पिल्ला हैं। उपर्युक्त ग्रन्थों के अतिरिक्त केरल से बाहर के प्रसिद्ध व्यक्तियों पर भी अनेक ग्रन्थ रचे गये। यह भी देखा गया कि केवल एक ही व्यक्ति पर एक से अधिक ग्रन्थों का निर्माण हुआ है। उदाहरण के लिए बापूजी पर जी० के० परमेश्वरन नायर, के० पी० केशव मेनोन, आर० नारायणप्पणिक्कर ने तीन ग्रन्थ लिखे हैं।

आध्यात्मिक नभोमंडल के उज्ज्वल नक्षत्र स्वामी विवेकानन्द की जीवनी ए० जी० कृष्णवारियर ने रची। 'स्वामी रामतीर्थ' के लेखक एम० आर० माधव वारियर हैं। अरविन्द और साईबाबा की जीवन घटनाओं का चित्र यथाक्रम मेक्कुन्नत्तु, कुञ्ञिकृष्णन और एस० गोविन्दप्पिल्ला ने खींचा। कण्णन जनार्दनन लिखित 'श्रीरामानुजाचार्यर' उत्तम ग्रन्थ है। ए० एस० पी० अय्यर ने श्रीबुद्धचरितम् लिखा है। हाल में ही धर्मानन्द कोसाम्बी का 'भगवान् बुद्ध' अनूदित किया गया है।

महाराष्ट्र नायक शिवाजी, गोखले, तिलक आदि का जीवन-परिचय संकेत ग्रन्थों में दिया गया है। जिन राष्ट्र-पुरुषों ने भारतमाता की बेड़ी काटकर उन्हें स्वतन्त्र कराने में योग दिया है, उनकी जीवनियां भी प्रकाशित हो गयी हैं। जवाहरलाल नेहरू, सरदार पटेल, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस, राजाजी, सरोजिनी नायडू, कस्तूरबा गांधी, कमला नेहरू, जतीनदास, भगतसिंह, महादेव देसाई, विनोबा, एनीबेसेंट जैसी उत्कृष्ट विभूतियों पर लिखित पुस्तकों से मलयालम की जीवनी-साहित्य-शाखा खूब समृद्ध हो उठी है। संसार के दूसरे देशों में जन्म लेनेवाले महान् व्यक्तियों पर भी अनेक जीवनियाँ प्रकाशित हुई हैं। उनमें प्रमुख पी० के० परमेश्वरन नायर लिखित

'वालटेयर' के सम्बन्ध में लिखा जा चुका है। मय्यनाट निवासी जोण का 'येशु क्रिस्तु', के० ए० पोल का 'लिंकन', पी० अनन्तन पिल्ला का 'मिल्टन' एम० आर० बालकृष्ण वारियर का 'बर्नार्ड शा' के० सुरेन्द्रन का 'टाल्स्टायियुटे कथा' (टालस्टाय की कथा) आदि उत्तम ग्रन्थ हैं। संसार के सुख्यात महापुरुषों का परिचय पी० शेषाद्रि के अनूदित ग्रन्थ 'महच्चरितङ्ङल' द्वारा हमें मिलता है। इस ग्रन्थ का मूल लेखक 'प्लूटार्क' है। वैसे जगत् के प्रमुख साहित्यकारों का महत्त्व 'विश्वसाहित्यशिल्पिकल' के द्वारा के० पी० शंकरन मेनोन और के० टी० गोविन्द मेनोन ने लोगों को जता दिया है।

'तूलिकाचित्र'

पाश्चात्य साहित्य के निकट संपर्क से तूलिकाचित्र या छायाचित्र का बीज मलयालम में बोया गया। तूलिकाचित्र खींचने में प्रमुख स्थान ई० वी० कृष्ण पिल्ला, वक्कम अब्दुल कादर, पी० दामोदरन पिल्ला, वी० वी० मेनोन जैसे कलाकारों को देना चाहिए। सबसे प्रथम ई० वी० कृष्ण पिल्ला ने नेताओं और अधिकारी वर्ग के विशेष स्वभाव, उनके चाल-चलन, मूर्खता आदि की हँसी उड़ाते हुए उनका चित्र लोगों के सामने प्रस्तुत किया। कहते हैं, ई० वी० कृष्ण पिल्ला के चित्र इतने मर्मवेधक होते थे कि अन्त में वे स्वयं अपनी करनी पर पछताते थे। ए० जी० गार्डिनर की तरह वक्कम अब्दुल कादर ने तूलिका चित्र खींचना शुरू किया। 'जूलियन' नाम से ख्यात जी० दामोदरन पिल्ला ने छायाचित्र उतारने में कमाल किया है। अपने अप्रिय व्यक्तियों पर उनकी कूँची खूब तेज़ चलती थी। किन्तु वी० वी० मेनोन प्रशान्त मन से निष्पक्षता के साथ कलापूर्ण तूलिका चित्र खींचते थे। दस कवियों तथा कहानीकारों का परिचय टाटापुरम सुकुमारन ने तूलिका चित्रों के द्वारा जनता को दिया। संक्षेप में कहा जाय तो इस शाखा के प्रधान चित्रकार माटश्शेरी, डा० एस० के० नायर, पोनकुन्नम वर्की आदि हैं।

'आत्मकथा'

भारत के अन्य प्रान्तों के समान केरल में भी बहुत कम व्यक्तियों ने अपने जीवन के सम्बन्ध में कलम चलायी है। हाल में ही महात्मा गांधी और जवाहरलाल नेहरू के आत्मचरित्रों का रूपान्तर हुआ है। इस शाखा में वैक्कम निवासी पाच्चु मूत्तत के 'जीवनसंग्रह' को प्रथम तथा मौलिक आत्म-चरित्र कहना असंगत न होगा। रवीन्द्रनाथ की 'जीवित स्मृति', विजयलक्ष्मी के 'मेरे जेल के दिन' और गोर्की के 'कुट्टिक्कालम्' (बचपन का समय) आदि अनेक ग्रन्थ अनूदित किये गये हैं। इनके अतिरिक्त हेलेन केल्लार, आल्बर्ट ष्वैट्ट्सर जैसे महान् व्यक्तियों ने अपने जीवन की घटनाओं पर जो पुस्तकें लिखी हैं, उनका अनुवाद करके इस शाखा की समुन्नति का प्रयत्न किया गया है।

देशाभिमानी रामकृष्ण पिल्ला के 'एन्टे नाटुकटत्तल' (मेरा निर्वासन) में वे किस प्रकार अपने राज्य तिरुविनांकूर से निकाले गये, इसका मर्मस्पर्शी चित्रण पाया जाता है। उसी प्रकार धर्मपत्नी वी० कल्याणी अम्मा की 'व्याषवट्टस्मरणकल' (बारह साल की स्मृतियाँ) में अपने शोकाकुल जीवन का चित्र सरल तथा अनोखी शैली में खींचा गया है। गुरुवर्य आर० ईश्वर पिल्ला के जीवन के अनुभव 'स्मरणकलिल' (स्मृतियों) द्वारा सहृदयों के सामने रखे गये हैं। साहित्यपंचानन की जीवनघटनाओं का जिक्र उन्होंने अपनी पुस्तक 'स्मरणमंडल' में विस्तार से किया है। उसकी शैली चमत्कारयुक्त, एवं भाषा मँजी हुई है। ई० वी० कृष्ण पिल्ला की 'जीवितस्मरणकल' (जीवन की स्मृतियाँ) पढ़ते समय पाठक हँसते-हँसते लोटपोट हो जायँगे। ऐसा कोई व्यक्ति न होगा जो उनकी हास्यरस भरी एवं निन्दा-स्तुतिपूर्ण वाणियाँ सुनकर अतीव प्रसन्न न होता हो। ई० वी० के जीवन के सारे पहलुओं का चित्र इसमें पाया जाता है। उनके निकट रहकर ई० एम० कोवूर को जो आनन्दपूर्ण अनुभव हुए उनका चित्रण 'ञान कण्ट ई० वी०' (मेरे देखे ई० वी०) में पाया जाता है। कालकोठरी की कड़ी यातनाओं का विवरण

वी० ए० केशवन नायर ने अपनी पुस्तक 'इरुम्बषिक्कुल्लिल' (जेल के अन्दर) में दिया है। इसके बाद के० पी० केशव मेनोन की लिखी 'भूतवुं भावियुं' (भूत और भावी) कृति पाठक के ध्यान को आकर्षित करती है। उसके अध्ययन से मेनोन किस प्रकार दूसरे महायुद्ध के समय मलाया और जापान के युद्ध की करालता मे पीड़ित हुए, उसका पता लगता है और रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

कविकुलतिलक उल्लूर एस० परमेश्वरय्यर और के० के० राजा की 'स्मरणमाधुरी' और 'स्मृनिमाधुर्यम्' आत्मचरित ग्रन्थों में प्रधान है। सरदार के० एम० पणिक्कर अपने सफल जीवन का रहस्य 'स्मरणदर्पणम्' द्वारा लोगों को सरल भाषा में बता देते हैं। निम्न कुलजात व्यक्ति को प्रतिक्रियावादी, रूढ़िवादी और अनुदार लोगों के साथ रहकर कैसे उन्नत स्थान की प्राप्ति हुई, इसकी जानकारी के लिए सी० केशवन का 'जीवित-समरम्' पढ़ना चाहिए। संगति का असर बड़ा विचित्र होता है। वह असंभव को भी संभावित कर देता है। इसका उदाहरण श्रीमती एम० पी० पोल की 'स्मरणकल' पढ़ते समय मिलता है। वह आरंभ में, साहित्य किस चिड़िया का नाम है, यह तक नहीं जानती थीं। किन्तु अपने उद्भट साहित्यकार पति पोल की संगति और उनके जीवन में हुई घटनाओं के वर्णन के साहित्य-क्षेत्र में एक अतुल्य स्थान पा सकीं।

प्रोफेसर मुण्डश्शेरी, केशवदेव, वी० टी० भट्टतिरिप्पाट, के० सी० माम्मन माप्पिला जैसे साहित्यकारों ने अपना जीवनवृत्तान्त लिखकर आत्मचरित्र शाखा को हरा-भरा कर दिया है। विख्यात पंडित के० वी० एम० और पुत्तेपत्तु रामन मेनोन अपने जीवन में हुई मर्मभरी घटनाओं का विवरण 'मातृभूमि' 'मलयालराज्यम्', जैसे पत्रिकाओं के द्वारा जनता को देते रहते हैं।

अध्याय २६

अधुनातन काल

कविता की प्रमुख धाराएँ

आधुनिक काल के प्रतिनिधि कवियों की कविताओं पर पिछले अध्याय में प्रकाश डाला गया था। इस प्रकरण में अधुनातन काल की प्रमुख धाराओं का संक्षिप्त परिचय देने का प्रयत्न किया जायगा। वल्लत्तोल नारायण मेनोन की कविताओं से अतीव प्रभावित होकर कुञ्ञि रामन नायर ने कविता-क्षेत्र में प्रवेश किया। उनकी कविताओं में पाश्चात्य संस्कृति तथा आचार-विचार के प्रति कठिन विद्वेष, सच्ची भारतीयता पर अभिमान, साथ ही केरलीय संस्कार की ओर भक्ति-भावना, संसार के जीवन की अनित्यता पर दृढ़ विश्वास, तथाकथित प्रगतिशील साहित्यकारों के आदर्शों के प्रति उपेक्षा-भाव आदि का चित्रण खूब दिखाई पड़ता है। इस सम्बन्ध में उनका मत है कि कविता शरीर की पोशाक नहीं, बल्कि आत्मारूपी चिड़िया के पंख हैं।

भक्तिरस-प्रधान कविताएँ अधिक संख्या में लिखने के कारण वर्त्तमान काल के भक्ति कवियों में नायर का स्थान सबसे आगे है। साधारण भक्तकवियों के समान स्तुतिगीत लिखकर ही रामन नायर तृप्त नहीं होते, वरन् हृदय की भक्तिभावना को सुन्दर रूप देकर पाठकों की हृत्तंत्री को भी झंकृत करने की कवि में एक अपूर्व क्षमता विद्यमान है। अरब महासागर की गंभीरता, सह्य पर्वत की ऊँचाई, लंबे-चौड़े खेतों की हरियाली, नारियल के पेड़ों की समृद्धि, देवालयों तथा उनके निकट स्थित सरोवरों की महिमा, पगडंडियाँ, मानव की जीवनधारा, विषु, ओणम जैसे केरलीय

त्यौहार, ग्रामीण जनों का आह्लाद, उनकी विविध लीलाएँ, इन सबका चित्र तन्मयतापूर्ण ढंग से अनूठी कविता में कवि ने खींचा है। वे सर्वदा कल्पनालोक में विचरण करते हुए दीखते हैं। वे पाठक को किसी एक स्थान पर पहुँचाये बिना सब कहीं घसीटते फिरते हैं, जो उनकी कविता का एक दोष माना जाता है। कभी-कभी कविताओं में शिथिलता का आभास भी पाया जाता है। मणिवीणा, अनन्तनकाट्टिल् (अनन्तन वन में) 'भद्र दीपम्, शंखनादम्, श्रीरामचरितम्, निशागानम् जैसी अठारह से अधिक कृतियाँ कुञ्ञिरामन नायर ने रची हैं।

मलयालम साहित्य के नभोमंडल में जगमगाते हुए तीन नक्षत्र, आशान, उल्लूर और वल्लत्तोल की कविताओं से प्रेरणा पाकर वी० उण्णिकृष्णन नायर ने 'लक्ष्मणविषादम्', 'वनकुसुमम्', (वन के फूल), 'राजयोगिनी' आदि कृतियाँ रचकर अमर स्थान बना लिया है। उपर्युक्त तीन महाकवियों ने पौराणिक कथाओं को वर्तमान परिस्थिति के अनुसार कलापूर्ण ढंग से अपनी 'चिन्ताविष्टयाय सीता' (चिन्ताकुल सीता), 'रुक्मियुटे पश्चात्तापम्' (रुक्मि का पश्चात्ताप) आदि कृतियों में नया रूप दिया है। इस सरणि की ओर अन्य कवि भी आकृष्ट हुए। उसी के फलस्वरूप 'लक्ष्मण-विषादम्' (लक्ष्मण का विषाद) का निर्माण हुआ है।

'वन्दे मातरम्' के समान केरल गान रचकर बोधेश्वरन ने अच्छा नाम पाया है। उनकी कविता में वेदान्त के साथ-साथ चार्वाक मत का भी निरूपण किया गया है। विप्लवात्मक आशयों को प्रस्तुत करते हुए कवि क्रान्ति का आह्वान भी करता है। कवितासंचय 'हृदयांकुर' में प्रेमानुभूति, तत्त्व चिन्ता, भावावेश आदि का समन्वय पाया जाता है।

संस्कृत भाषा के प्रकांड पंडित एन० गोपाल पिल्ला ने भावगीतों के निर्माण द्वारा कवितादेवी की पूजा आरंभ की। उनकी सरस कोमल कविता-शैली में एक निजी विशेषता झलकती है। वे न तो वल्लत्तोल के मार्ग पर चलते थे और न कवीन्द्र रवीन्द्र की शैली अपनाते थे। उन दिनों ऐसा कोई भी कवि नहीं था जो वल्लत्तोल या रवीन्द्र की रचनाओं से प्रभावित न हुआ हो।

श्री एन० गोपाल पिल्ला ने दोनों मार्गों से प्रभावित होते हुए भी तटस्थता-पूर्वक अपनी कविताओं में मौलिकता बनाये रखी। 'नवमुकुलङ्ङल' (नव मुकुल) में उनकी कविताओं का संग्रह किया गया है।

संगीतात्मक शैली में वल्लत्तोल नारायण मेनोन की पद्धति के अनुसार सौन्दर्यपूजा, वसन्तोत्सवम्, पुष्पवृष्टि, सरोवरम्, केरलश्री आदि कृतियों से वेण्णिक्कुलम गोपालक्कुरुप ने कविताकामिनी के कलेवर को सजाया है। सौहार्द, गुरु-शिष्य संबन्ध जैसे मानवीय गुणों की महिमा पर अनूठी कविता रचने में गोपाल कुरुप ने अपनी विशेषता दिखलायी है। जीवन की कठोरता के चित्रण में कवि की लेखनी उतनी सफल नहीं हो सकी। उनका कविताक्षेत्र प्रेमसाम्राज्य में समाया हुआ है। कवित्व की कसौटी पर कसने पर उनकी रचनाएँ खरी उतरेंगी। वर्तमान कवियों में कुरुप का स्थान समुन्नत है।

हास्य रसप्रधान लेखों के साथ-साथ हृदयहारी गानों के निर्माण में भी के० पी० रामन पिल्ला सिद्धहस्त हैं। 'एकान्तकोकिल' में उनके गान संचित किये गये हैं।

जी० शङ्कर क्कुरुप्प

हिन्दी भाषा में सुमित्रानन्दन पन्त और अंग्रेजी में शेली का जो स्थान है वही स्थान मलयालम में अपनी चालीस वर्ष की साधना के कारण जी० शंकर क्कुरुप्प ने पाया है। कुछ विद्वानों का मत है कि वे आशान, वल्लत्तोल और उल्लूर के उत्तराधिकारी हैं। रवीन्द्र की कृतियों से उनकी भावना तथा आदर्शबोध का विकास हुआ है। वल्लत्तोल की सुन्दर शैली को अपनाने का प्रयत्न उन्होंने किया है, किन्तु अभी पूर्ण सफल नहीं हो सके हैं।

प्रकृति, प्रेम तथा देशाभिमान पर कविता रचते हुए कवि ने इस क्षेत्र में पदार्पण किया। उनके प्रारंभिक कविता-चयन में नवातिथि, सूर्यकान्ति, निमिष वनगायकन आदि बारह कविताएँ प्रकाशित हैं, यह संग्रह 'साहित्य-कौतुक' नाम से ख्यात हो गया है। प्रकृति-वर्णन की ओर कवि का ध्यान सर्वदा

रहता है, परिणामतः कभी-कभी वे अनवसर पर भी प्रकृति-वर्णन करने लगते हैं। कभी-कभी ऐसा भी मालूम पड़ता है मानो वे उल्लूर के समान शब्दों के माया-जाल में फँस गये हों।

वल्लत्तोल के समान प्रकृति के रंग-विरंगे दृश्य देखकर वे मुग्ध होते नहीं दिखाई पड़ते। वे सोचते हैं कि प्रकृति तो अनुभव करनेवाली कोई चीज़ नहीं, किन्तु प्रकृति की प्रत्येक वस्तु सजीव है और एक-एक सन्देश वह लोगों को प्रदान करती रहती है। वे छायावादी कवियों के समान प्रकृति में मनुष्यत्व का आरोप करते हैं। ऐसे अवसर पर वे सूफी कवियों से प्रभावित होकर रहस्यवादी कवि के रूप में भी हमारे सामने आते हैं। अन्वेषणम्, पंकज-गीतम् आदि कविताओं के अध्ययन से उनकी रहस्यवादी भावना का आभास पाठक को मिलेगा। इन कविताओं के निर्माण में शब्दों की दरिद्रता साफ दिखाई पड़ती है, प्रतीकों के सहारे कवि अपने आशयों का स्पष्टीकरण करते हैं। प्रतीकात्मक कविताओं के सर्जन में कवि की प्रतिभा का आलोक पाया जाता है। प्रेम, साम्राज्यवाद, जीवन-मृत्यु, मज़दूर और पूंजीपति का संबन्ध, जमींदारी की समस्या, भयंकर युद्ध जैसे विषयों को समझाने के लिए कवि ने प्रतीकों का आश्रय लिया, अतएव उनकी कविता चमक उठी है, किन्तु कभी-कभी वह दुरूह भी हो जाती है।

सामान्य जन-जीवन के वर्णन में उन्होंने अपनी लेखनी का प्रयोग किया और वस्तुस्थिति के सूक्ष्म चित्रण में बड़ी क्षमता दिखायी है।

भारतमाता की शोचनीय अवस्था का चित्र खींचते हुए नवयुवकों का ध्यान उस ओर आकृष्ट करके माता को बन्धनमुक्त करने का आह्वान बड़े आवेश के साथ उन्होंने किया है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधीजी के सिद्धान्तों से वे अतीव प्रभावित हैं। कई सुन्दर छोटी कृतियाँ रचकर कवि ने गांधीजी के सत्याग्रह आन्दोलन में भाग लेनेवालों को उत्तेजना दी है। वे हमेशा लिखा करते हैं कि दूसरों की सेवा करना ही मानव-जन्म का उद्देश्य है, किन्तु वह जीवन के अन्तिम काल में स्वार्थी तथा क्रूर हो जाता है। इससे कवि को बड़ी निराशा होती है। उनकी इस प्रकार की कविताओं में निराशा छायी हुई

है। इन्हें पढ़कर लोग कहते हैं कि कवि लौकिक जीवन से तंग होकर आकाश कुसुम की खोज में इधर-उधर भटकनेवाले बन गये हैं। धीरे-धीरे कवि की भावना देश के संकुचित दायरे से ऊपर उठकर विश्व के विशाल आकाश में भ्रमण करने लगती है।

प्राचीन सनातन सिद्धान्त 'लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु' का प्रचार कुरुप की भावमयी कविताओं द्वारा हुआ है। साम्राज्यवाद की तीव्र भर्त्सना, इटली का अबीसीनिया पर आक्रमण, एशिया के मोचन के बहाने दूसरे देशों को अपने आधीन कर लेने के लिए जापान की कुचेष्टा, इन्डोनेशिया की गुलामी आदि से कवि कुरुप का भावुक हृदय जाग्रत हो उठा है। विश्वप्रेम का सुन्दर सन्देश उन्होंने सर्वत्र पहुँचाया है। भूत तथा वर्तमान की जीर्णता को हटाते हुए कवि उषःकालीन अरुण प्रकाश के समान प्रत्यक्ष होते हैं। उस समय उनकी हृदय-वल्लरी में जो आशाकुसुम स्वतः विकसित हुए, उनकी झाँकी उनके भावगीतों में मिलती है।

हम देखते हैं कि कभी-कभी कुरुप मानव-जीवन के मर्मस्पर्शी पहलुओं पर कविता रचते हैं, जिसमें हमारे हृदय को प्रभावित करने की क्षमता दिखाई पड़ती है। "इन्नु ञान् नाले नी" (आज मैं कल तू) ऐसी ही एक कविता है। एक गरीब मनुष्य की अर्थी लिये लोग जा रहे हैं। चारों ओर शोक छाया हुआ है। प्रकृति स्तब्ध होकर यह दृश्य देख रही है। इस घटना को कवि ने मर्मस्पर्शी ढंग से चित्रित किया है।

आधुनिक विज्ञान की प्रगति से संसार में क्या-क्या परिवर्त्तन हुए, यह विषय जनता को समझानेवाले, इने-गिने कवियों में कुरुप का स्थान ऊँचा है। विज्ञान तथा कला का सुन्दर समन्वय उनकी कविताओं में पाया जाता है। जी० शंकर क्कुरुप्प प्राध्यापक वृत्ति से मुक्त होकर अब मातृभाषा की सेवा में रत हैं। कविता-कला के साथ-साथ भाषणकला में भी उन्होने ख्याति प्राप्त की है। श्रोतागण उनके सारपूर्ण और गंभीर व्याख्यान सुनकर मन्त्रमुग्ध रह जाते हैं। गंभीरता तथा सादगी से युक्त उनका जीवन हर एक भारतीय के लिए अनुकरण योग्य है।

दो तरुण कवियों की नयी सरणी

आशान, उल्लूर, वल्लत्तोल, शंकर कुरुप जैसे महाकवियों ने कविता-कानन में जो स्वच्छ मार्ग दिखाया, उसके विरुद्ध और एक सरणी इटप्पल्लि राघवन पिल्ला और चङङम्पुषा कृष्ण पिल्ला दोनों ने मिलकर निकाली, जिससे इस क्षेत्र में बड़ा आन्दोलन उठ खड़ा हुआ। इन दोनों का जन्म प्रतिकूल परिस्थिति में हुआ। जीवन में परिस्थिति की कराल यातनाओं से इन्हें अत्यन्त दुःख भोगना पड़ा। खेद है कि जब ये दोनों पुष्प एक ही लतिका में विकसित हो अपनी भीनी सुगन्ध फैलाकर चारों दिशाओं को सुरभित कर रहे थे तब इनमें से एक (राघवन पिल्ला) हवा के झोंकों से चोट खाकर नीचे गिरा और मिट्टी में मिल गया। सचमुच यह घटना केरल के साहित्यकारों के लिए अत्यन्त दुःखद थी।

राघवन पिल्ला का जन्म सन् १९०९ में हुआ। उन्हें बाल्यकाल में कई तरह के कष्ट उठाने पड़े। संयोगवश एक सम्पन्न परिवार की महिला से उनका मन अनुरक्त हो गया, किंतु कई कारणों से विवाह सम्पन्न न हो सका, जिससे निराश होकर सन् १९३६ में उन्होंने अपनी जीवनलीला समाप्त की।

राघवन पिल्ला ने देखा, चारों ओर दुःख ही दुःख छाया हुआ है। महायुद्ध से जनित बीमारी और दुर्भिक्ष, समाज की स्वार्थपरता, शोषण, बंचना आदि से साधारण जन भारी कष्ट उठाते हैं। इन सामाजिक दोषों को दूर करने के लिए ओजभरी भाषा में उन्होंने कविताएँ लिखीं। अपने जीवन के कटु अनुभवों से निराश होकर वे कहते हैं—"जो काल बीत गया वह अच्छा और सुखपूर्ण था, पर भावी तथा वर्तमान समय मुझे दुःखदायी मालूम पड़ता है, इस प्रकार जीने की अपेक्षा मरना अच्छा है।" इसी प्रकार विचारते विचारते शायद उन्होंने आत्महत्या की होगी। 'काट्टारिन्टे करच्चिल्' (वन से बहनेवाली नदी का विलाप), 'ञङङल्' (हम) आदि उनकी अनेक कृतियों का संग्रह 'तुषारहारम्' 'नवसौरभम्' जैसे कवितासंचयों में प्रकाशित किया गया है। उनकी उत्कृष्ट कविता का रूप 'मणिनादम्' (घंटानिनाद)

में हम देख सकते हैं। उसमें उन्होंने कहा है कि "संसार में कपट वेष धारण करके तन्मयतापूर्वक अभिनय करने का मैं बिलकुल आदी नहीं हूँ।" आदर्श-पूर्ण जीवन बिताने के लिए कठोर परिश्रम करने पर भी पराजित होने-वाले व्यक्ति की निराशाभरी मनोवृत्ति का प्रतिबिंब उस कविता में पाया जाता है। भावुक कवि सोचते हैं कि दुःखित आत्मा की मुक्ति मृत्यु के अलावा और किसी से नहीं हैं। तब 'मणिनाद' के द्वारा अपना अन्तिम गीत गाते हुए उन्होंने मृत्यु का आलिंगन कर लिया।

अपने बालसखा के निधन पर शोक प्रकट करते हुए चङङम्पुषा कृष्ण पिल्ला ने 'रमणन' नामक विलापकाव्य लिखा, जिससे उन दोनों कवि-कोकिलों की प्रसिद्धि द्वीप-द्वीपान्तरों में फैल गयी। वे दोनों इतने निकटस्थ थे कि भाव, आशय आदि कई बातों में उनमें समानता दिखाई पड़ती है। इतने कम समय में चङङम्पुषा के सिवा और किसी ने चालीस से अधिक मधुर मनोरम कृतियाँ रचकर केरली के भण्डार की शोभावृद्धि नहीं की है। भावगाम्भीर्य, विचारोत्कर्ष, नैसर्गिक सौन्दर्य तथा कला-शिल्प की अभिव्यंजना में कवि का स्थान अतुलनीय है। कहते हैं कि उनकी एक ही कृति 'रमणन' की प्रतियाँ हज़ारों की संख्या में बिक गयीं। ऐसा कोई भी नौजवान केरल में नहीं होगा जिसने उस पुस्तक का अध्ययन न किया हो।

चङङम्पुषा ने अपनी कविताओं से एक नया युग उत्पन्न कर दिया है। अपने मित्र राघवन पिल्ला के समान कवि का हृदय सामाजिक कुरीतियों को देखकर क्षुब्भ हो उठता है और वे बड़े विप्लव का आह्वान करते हैं। वे कभी-कभी बोल उठते हैं कि उस कपटपूर्ण संसार में मेरी पराजय का मुख्य कारण यह है कि मैंने अपने हृदय को निष्कलंक रखा है, शायद यही मेरा अपराध हो सकता है। इनकी दृष्टि में संसार दुःखदायी नहीं हैं, जीवन को आनन्दमय बनाने के कई साधन यहाँ हैं। यद्यपि इनकी प्रारंभिक कविताओं में विषाद छाया हुआ है तो भी आगे चलकर इन्होंने ऐसी सरस कोमल कान्त पदावलियों में प्रेमभरे भाव-गीत लिखे जो युवकों और युवतियों के लिए अत्यन्त आकर्षक थे। अन्तस्तल से फटनेवाली इनकी कविता की माधुरी,

पदयोजना, लय तथा संगीतमयी शैली ने हज़ारों लोगों को आनन्दसागर में डुबो दिया। करुणा रस भरी इन कविताओं की प्रत्येक पंक्ति से प्रेमानुभूति फूट निकलती है।

कृष्ण पिल्ला गंभीर आशय, गंभीर शैली में लिखनेवाले तथा-कथित पंडितों के समान नहीं थे। सरल, सुबोध तथा आकर्षक ढंग से वे अपना आशय कविता द्वारा लोगों को समझाते थे, जिससे साधारण जनता भी उनकी पुस्तकों का अध्ययन कर लाभ उठा रही है। गाँवों में प्रचलित गीत पद्धति के अनुसार कविताएँ रचना उनकी एक विशेषता है। जब पुराने गीत भूल मे गये थे तब कृष्ण पिल्ला ने उनका सारार्थ मोहक शैली के पंचम स्वर में कोकिल के समान गाकर आम जनता को समझाया। कवि हमें स्पेंसर की पेप्पेडस कलण्डर' और मिलटन की 'लीडस' जैसी कृतियों का स्मरण कराते हैं, तो भी केरलीयत्व की छाप उसमें लगी रहती है। विलापकाव्य 'रमणन' की शैली, कथा-संगठन, पद योजना आदि की बराबरी में और कोई काव्य-रचना केरल में अभी तक नहीं हुई। उसकी मोहक कथावस्तु उनके प्रिय मित्र इटप्पल्लि राघवन पिल्ला का निराशा-भरा जीवन-वृत्तान्त है। उसमें कवि उन सामाजिक दुराचारों की भर्त्सना कड़े शब्दों में करते हैं जिनके कारण एक प्रतिभाशाली दरिद्र युवक को आत्महत्या करनी पड़ी। गायक के साथ एक विप्लवकारी युवक के रूप में कवि 'रमणन' में प्रत्यक्ष होते हैं। उस कृति में कवि ने जिस विप्लव का बीज बोया वह उनकी 'रक्तपुष्पङङल' (रक्त-पुष्प) जैसी रचनाओं में अंकुरित, पल्लवित तथा पुष्पित होता दिखाई पड़ता है। सम्पन्न लोगों के आचार-विचार, गरीबों के प्रति उनके मनोभाव, व्यवहार आदि का चित्र बड़े शक्तिशाली ढंग से कवि ने 'वाषकुला' (केले का फल) में खींचा है। इस कथा में निम्न कुल-जात एक पुलय (जाति विशेष) अपने घर के सामने केले का पेड़ लगाता है। वह, उसके बच्चे और स्त्री मिलकर उसे रोज सींचते हैं, खाद देते हैं। धीरे-धीरे वृक्ष के फलने का समय आता है। उसके फलों को खाने की लालसा में बच्चे आतुर रहते हैं। तब एक दिन उस ज़मीन का मालिक वहाँ आता है

और उस परिवार के देखते हुए केले के फलों को लेकर चला जाता है। नन्हे बच्चे हताश हो रोने लगते हैं, किन्तु उनकी ओर बिना देखे वह निर्मम ज़मींदार अपने घर की राह लेता है।

कवि के प्रेमकाव्यों को नौजवान उत्कट अभिलाषा से पढ़ते हैं। उनमें चित्रित चिर-प्रार्थित अनुराग, उसका ठुकराया जाना, विरह की तीव्र वेदना, वियुक्त प्रेमियों का विलाप, उनके मोह का भंग हो जाना, अपराधी की पश्चात्तापपूर्ण आत्मनिन्दा, अभागे प्रेमी तथा प्रेमिका का एकान्त रोदन, प्रेमास्पद का रोगग्रस्त हो जाना, रोगी होने पर भी उसके प्रति नायक की अक्षुण्ण प्रीति; जैसी हृद्गत कोमल भावनाओं से युवक गण अत्यन्त आकर्षित होते हैं।

प्रेमकाव्य और विप्लवात्मक कृतियों के अतिरिक्त कवि ने उपासिनी, आनन्दलहरी, मरिच्चस्वप्नङ्ङल् (मरे स्वप्न) आदि भावात्मक गीत भी रचे हैं। इन काव्य-ग्रन्थों में कवि ने इस कपटभरी दुनिया का रूप, जीवन में दुष्टों की विजय, अपने सहजीवियों की ओर सहानुभूति न दिखानेवाले मानव की क्रूरता, भिखमंगों का विलाप, मज़दूरों के अनन्त दुःख, प्रतिकूल परिस्थिति में पड़कर छटपटानेवाले गरीबों की लाचारी, आवश्यकता के अनुसार विकसित होने में बाधक सामाजिक व्यवस्था जैसे विषयों का चित्रण किया है। इन कृतियों का बड़ा प्रभाव लोगों पर पड़ा है।

संसार में शान्ति तथा वैभव का युग लाने के लिए वे एक आदर्श योद्धा के समान अपनी लेखनी से निरन्तर प्रयत्नशील रहते थे। कुछ आदर्श जीवन बितानेवाले लोगों का कहना है कि कवि की रचनाओं में सदाचरण के विरुद्ध कुछ बातें आ गयी हैं। लेकिन कवि कहा करते थे कि दूषित वासनाओं को छिपाकर अपने को सच्चा, सीधा और ऊँचा उद्घोषित कर जीवन बितानेवाले तथा-कथित आदर्शवान् लोगों की अपेक्षा कभी-कभी लाचारी से त्रुटिपूर्ण जीवन काटनेवालों का जन्म कहीं अधिक अच्छा है।

तुन्चत्त रामानुजन, एषुतच्छन, कुमारनाशान आदि महाकवियों की कृतियों के पहचानने में साधारण पाठक को किसी प्रकार की बाधा नहीं

होती, उसी प्रकार चङङम्पुषा की रचनाओं का भी एक स्वतन्त्र अस्तित्व है। उनकी नूतन शैली से लोग भली-भाँति परिचित हो गये हैं। कवि की वह संगीतात्मक शैली, चाहे सामान्य व्यक्ति हो या पंडित, सब पसन्द करते हैं। आबाल-वृद्ध उनके गीत पढ़कर अपने आपको भूल जाते हैं और ब्रह्मानन्द की तरह काव्यानन्द का आस्वादन करने लगते हैं। किंबहुना, युवक कवि चङङम्पुषा सब दृष्टियों से आकर्षक व्यक्ति हैं। केरलीय जनता उनका आदर करती है, प्यार करती है और उनकी तरह-तरह की रचनाओं का अध्ययन करके प्रसन्न हो उठती है। इस कथन में ज़रा भी अत्युक्ति न होगी कि चङङम्पुषा की कृतियों से विश्वसाहित्य में केरली का स्थान और भी उन्नत हो गया है।

पी० भास्करन

तरुण कवि पी० भास्करन की रचनाओं में चङङम्पुपा की कृतियों जैसा ही चैतन्य दृष्टिगोचर होता है। सामूहिक उन्नति के स्वप्नों को देखकर वे कथा-कविताओं द्वारा यथार्थ स्थिति दिखाने की दढ़ शक्ति रखते हैं। चङङम्पुषा की शैली को इन्होंने अपनाया है, पर उसमें विषादात्मकता का अभाव रहता है। मानवता की महत्ता को पी० भास्करन कविता द्वारा समझाते हैं। चङङम्पुषा की रचनाओं की अपेक्षा इस कवि की कृतियाँ ध्वन्यात्मक हैं। जहाँ कृष्ण पिल्ला अपना आशय विस्तृत ढंग से प्रकट करते हैं वहाँ भास्करन कुछ संकेतों से उसकी अभिव्यक्ति करते हैं। हृद्गत भावों को संगीतात्मक शैली में प्रकट करने में दोनों कवि समान रूप से सक्षम हैं। किंतु परिमित शब्दों द्वारा हृत्तन्त्री को झंकृत करने की प्रवणता भास्करन में अधिक मात्रा में है।

'ओर्क्कक वल्लप्पोषुम्' (कभी याद करें) कविता में दो बाल्यकाल के मित्रों की कथा कही गयी है। उसमें प्रेमी और प्रेमिका ने बड़ी घनिष्ठता से बाल्यकाल बिताया। उनकी प्रेमलतिका खूब लहलही हो उठी। संयोग से प्रेमिका का ब्याह किसी दूसरे व्यक्ति के साथ सम्पन्न हुआ। वधू वर के

घर जाने के लिए रेलवे स्टेशन पर जाती है, और गाड़ी में चढ़कर सबसे बिदा लेती है। उसी समय उसका बाल्यकाल का सखा और प्रेमी वहाँ पहुँचता है। वह मौन रूप में अपनी प्रेयसी को 'कभी मेरी याद करें' यह सन्देश देता है। यही है इस रचना की कथावस्तु। कोई कुछ नहीं कहता, तो भी पूर्वकाल की स्मृतियाँ उस विदा-वेला में जागरित होती है। इसी ढंग से भास्करन कविता रचते हैं।

विल्लाली (तीर मारनेवाला), करवाल, नवकाहलम्, रणभेरी, स्वप्नसीमा, सत्रत्तिले ओरु रात्रि (सराय में एक रात), मर्दितर (दलित वर्ग) आदि बारह से अधिक कृतियाँ उन्होंने लिखी हैं। जी० कुमार पिल्ला, पी० नलिनकुमारी, पन्तलम् राधामणि, के० अय्यप्प पणिक्कर आदि युवक कवियों ने चङङम्पुषा के अन्तिम प्रस्थान पर भावगीत लिखकर भाषा की श्रीवृद्धि की है।

'केरलमवलरुन्नु' (केरल बढ़ रहा है) नाम से ख्यात कविता के रचयिता पाला नारायणन नागर वल्लत्तोल के समान देश की महिमा पर सरस कविताएँ लिखते हैं। उनकी शैली चङङम्पुषा जैसी मालूम पड़ती है। उनकी रचनाओं में प्रमुख 'मनुष्यन' (मनुष्य), 'बाष्परंगम्', निर्धनम्', 'नवयुगम्', 'केरलम्', 'वलरुन्नु' आदि हैं। भावगीत-रचयिताओं में एम० पी० अप्पन, पाला गोपालन नायर, एम० एस० सुकुमारन नायर, नालांकल कृष्णपिल्ला जैसे कलाकारों का नाम लिया जाता है।

एम० पी० अप्पन ने प्रेम-गीतों के साथ वीररस-प्रधान कई गीतों का निर्माण भी किया है। नवयुवकों को कर्मवीर बनने का अह्वान अप्पन अपनी कविताओं द्वारा करते हैं। उनकी प्रसादपूर्ण शैली आकर्षक है। नालांकल कृष्णपिल्ला रंगतरंगम्, शोकमुद्रा, वसन्तकान्ति जैसे कविता-संग्रहों से जीवन के विविध पहलुओं को लोगों को समझाते रहते हैं।

भावगीतों की रचना में प्रथम पंक्ति में आनेवाले कवियों में प्रथम और द्वितीय स्थान के० एम० पणिक्कर और एन० गोपाल पिल्ला को प्राप्त हो गया है। पणिक्कर की कृतियाँ उत्तेजनात्मक कल्पनाप्रधान हैं। रमणी-

यता उनमें से टपकी पड़ती है। तरुण कवयित्री सुगतकुमारी को कविता-क्षेत्र में प्रविष्ट हुए यद्यपि अधिक समय नहीं बीता, तो भी उनकी कविताओं में व्यक्तित्व की छाप साफ दिखाई पड़ती है। नये-नये आशय उनमें भरे पड़े हैं।

श्रीधर मेनोन

वर्त्तमान काल के कवियों में पैलाप्पिल्लि श्रीधर मेनोन का स्थान अद्वितीय है। किसी भी महाकवि के अनुकरण पर वे कविता नहीं रचते। सब प्रकार के प्रयोगों से अप्रभावित रहकर अपनी स्वतंत्र सत्ता को कायम रखते हुए, सुन्दर सरस, प्रसादमयी, ओजमयी कृतियों के सर्जन में उन्होंने जो मौलिकता दिखायी है वह प्रशंसनीय है। दूसरे कवियों की अपेक्षा श्रीधर मेनोन की कृतियाँ संख्या में बहुत कम हैं। उनमें ही कवि ने सतसईकार बिहारी के समान गागर में सागर भर दिया है। आधुनिक जीवन की अपेक्षा पौराणिक लोगों के जीवन को अच्छा तथा आदर्शमय मानने में श्रीधर मेनोन की सहमति नहीं है। उनका कहना है कि आजकल का मनुष्य सर्जनात्मक बुद्धिविशेष, विज्ञान की प्रगति, प्रकृति को अपने वश में लाने के सतत यत्न आदि द्वारा पुराने मनुष्य से बढ़ गया है। आधुनिक मनुष्य कर्मवीर वनकर बाधाओं को बड़ी खुशी से पार करता है, सुख तथा समृद्धि के लिए दिन रात अथक यत्न करता है।

उनकी दृष्टि में कलाकार का प्रथम और प्रधान कर्त्तव्य यह है कि कालगति के अनुसार चारों ओर का परिवर्तन देखकर मनुष्य को साहस के साथ आगे बढ़ने की प्रेरणा देता रहे। पुराने स्वप्नजीवियों का मान वे नहीं करते। वे उसका आदर करते हैं जो विषय के सुखमय जीवन का स्पप्न देख-कर उसे यथार्थवत् करने के लिए प्रयत्न करता है।

कुछ कवि पाठकों के मन को निस्सहाय, निराशामय तथा दुर्बल बना देते हैं। यह श्रीधर मेनोन पसन्द नहीं करते। प्रतिकूल शक्तियों पर प्रेम से विजय पाकर जीवन को आनन्दमय बना देने के मार्ग को प्रशस्त करना कवि

का धर्म है। कवि को यह भी समझना चाहिए कि मनुष्य को प्रकृति का गुलाम नहीं बनना है, बल्कि उससे लड़कर उसे अपनी शक्ति अजेय बनाते रहना चाहिए।

श्रीधर मेनोन ने अपनी कविताओं में सामाजिक प्रश्नों पर ध्यान दिये बिना ऐसी समस्याओं की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट किया है जो शाश्वत हैं। कृति 'असाम पणिक्कार' (आसाम में काम करनेवाले केरल राज्य के मज़दूर) में केरल के दीन-हीन मज़दूरों की दयनीय स्थिति का मार्मिक चित्रण तन्मयतापूर्वक खींचा है। आसाम में खून को पसीना बनाकर श्रम करनेवालों द्वारा अपनी जन्मभूमि की महिमा गाते हुए स्वदेश लौटने की वार्त्ता पाठकों के हृदय को स्पर्श कर लेती है। कवि ने पशुओं पर मानवता का आरोप करके एक 'सह्यन्टे मकन' (सह्य-पर्वत का पुत्र) नामक रचना की है, जिसका मुख्य पात्र एक मस्त हाथी है। उत्सव के समय हाथी पागल हो जाता है। तब उत्सव की प्रत्येक प्रक्रिया उस हाथी के पूर्व-जीवन का स्मरण कराती है, जिससे वनविहार करने की प्रेरणा उसके मन में होती है। वह सब ओर हलचल मचाकर भयंकर वातावरण पैदा कर देता है। इसका चित्र कवि ने बड़े प्रभावशाली ढंग से खींचा है। जब हाथी गोली से मारा जाता है तो कवि का हृदय सहानुभूति तथा समवेदना से प्रभावित हो उठता है।

श्रीधर मेनोन का हृदय कितना मृदुल और संवेदनापूर्ण है, यह उनकी कृति 'माम्पषम' (पका आम) में दिखाई पड़ता है। एक माँ अपने घर के आँगन में आम का पेड़ लगाती है। धीरे-धीरे वह बड़ा होता है और फूलने लगता है। तब उसका प्यारा पुत्र उसके कुछ फूलों को तोड़ना चाहता है तो माँ आकर उसे डाँटती है और कहती है; रक्षक भक्षक निकले तो क्या दशा होगी। आशय यह है कि आम का फल लेनेवाला अभी फूलों को तोड़ लेगा तो आगे क्या होगा? तब पुत्र ने कहा—"मैं आम लेने तक रहनेवाला नहीं हूँ।" समय बीत जाता है। बच्चा रोग पीड़ित होकर बीच में मर जाता है। तब आम पककर जमीन पर गिरने लगते हैं, किन्तु उनको लेनेवाला

कोई नहीं रहा। यह दृश्य माता के लिए सचमुच हृदयविदारक है। विधि के आगे किसी का वश नहीं चलता। उस समय माता के हृदय में जो विचार-तरंगें उठती हैं उनका चित्र खींचकर कवि ने सबको रुला दिया है।

श्रीरेखा, ओणप्पाट्टुकल आदि चार से अधिक कविता-संग्रह, एक खण्डकाव्य और बच्चों के लिए अनेक गीत श्रीधर मेनोन ने लिखे हैं। शास्त्र सम्बन्धी विषयों पर उन्होंने बहुत कुछ लिखा है। केरल की संस्कृति, प्रकृति-सौन्दर्य, यहाँ के उत्सव, लोगों का स्वभाव तथा परंपरा आदि विषयों का वर्णन कवि ने अपनी कविता में किया है। भावुकत्व का लेश मात्र भी उनकी कविताओं में नहीं है।

नालप्पाट नारायणी अम्मा

नालप्पाट नारायणी अम्मा गत पचीस साल से मातृमहत्त्व की महिमा गाती हुई केरली की सेवा कर रही हैं। कोई तरुणी जब माँ बन जाती है तो उसके हृदय में क्या क्या भाव-परिवर्तन होते हैं, उनका अनुभव करके कवयित्री पंचम स्वर में कोकिल के समान गाने लगती है। उस गीत-सुधा से आप्लुत होकर केरल की माताएँ मुग्ध हो उठती हैं।

पुत्र की उत्पत्ति से माँ की खुशी का ठिकाना नहीं रहता। वह अपने कलेजे के टुकड़े की सौन्दर्यराशि देखकर अतीव प्रसन्न होती है। पुत्र ही उसका सर्वस्व है। पुत्र में उसने ईश्वर के दर्शन किये हैं। वह यह शुभकामना करती है कि मेरा वत्स सारे संसार के कल्याण के लिए प्रवृत्त हो जाय, अन्याय का ध्वंस करे। माता बनने के बाद एक कुलीन कुटुम्बिनी के रूप में कवयित्री अपनी कविताओं में प्रत्यक्ष होती हैं। वे कहती हैं—"स्त्रियों के सम्बन्ध में कहा जाय तो उनका आराधना-क्षेत्र घर है, पतिदेव और बच्चे भगवान् की मूर्तियाँ हैं।"

माँ तथा कुटुम्बिनी के बाद एक तत्त्ववेत्ता के रूप में बालामणि अम्मा ने काव्य रचना आरंभ की। संसार की निस्सारता पर कविता लिखी गयी। दुःखमय जीवन में वे सुख को ढूँढ़ लेती हैं। कभी-कभी उनकी कविताएँ

पढ़कर पाठक असमंजस में पड़ जाते हैं कि इस जीवन में आध्यात्मिक मार्ग को स्वीकार करना चाहिए या लौकिक पक्ष को। कुटुम्बिनी, स्त्रीहृदयम्, भावनयिल् (भावना में), प्रेमांकुरम्, प्रणाम, लोकान्तरङ्ङलिल जैसी तेरह से अधिक कृतियाँ रचकर अम्मा मातृभाषा की सच्ची पुजारिन बन गयी हैं। क्लिष्टता उनकी कविता का दोष कहा जाता है।

एन० वी० कृष्ण वारियर

प्रतिभाशाली भावुक युवक एन० वी० कृष्ण वारियर ने सोचा कि केवल भावगीतों से केरली पुष्ट नहीं होगी, बल्कि जीवन के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालते हुए मानवीय घटनाओं के सजीव वर्णन से कविता और साहित्य की समृद्धि होगी। इसी आदर्श को मन में रखकर वारियर ने 'नीण्ट कविता' (लम्बी कविता) लिखी। प्राचीन कथा, शैली तथा वृत्त आदि को उन्होंने अपनाया। घटनाओं का वर्णन, उनसे संबंधित व्यक्तियों की आशाओं और अभिलाषाओं का चित्रण करने में वारियर ने अपनी मौलिकता दिखायी है। उनकी कुछ रचनाएँ पढ़कर ऐसा मालूम पड़ता है मानो अंग्रेजी के प्रसिद्ध कवि वर्डस्वर्थ तथा कोलरिड्ज का अनुकरण किया गया हो। 'नीण्ट कविता' में (Ancient Mariner) की कविता का सादृश्य खूब मिलता है।

जीवन का यथार्थ स्वभाव और अनुभूतियाँ मिलाकर इंजिनीयर, हाथीवाला जैसी कविताएँ वारियर ने रचीं। भाषा पर वारियर का बड़ा अधिकार है। शब्दों के चयन में उन्होंने कमाल किया है। कोच्चुतोम्मन, एलिकल् (चूहे) आदि कविताओं का निर्माण कर उन्होंने दिखाया कि तरह-तरह के लोगों के विचित्र स्वभाव की निन्दा करने में कविता कितना प्रबल साधन है। संक्षेप में कहा जाय तो वारियर की कृतियों में मनुष्य के नैसर्गिक भावों का चित्रण, प्राचीन कविता-पद्धति, प्रेमप्रधान कविता के निर्माण की रीति, यथार्थवाद आदि का समन्वय पाया जाता है। आजकल

वारियर 'युगप्रभात' नाम की एक पाक्षिक हिन्दी पत्रिका का संपादन करते हुए राष्ट्रभाषा और मातृभाषा की महत्त्वपूर्ण सेवा में लगे हैं।

साहित्य-सर्जन की नयी दिशा

नंपूतिरि-समाज में प्रतिक्रियावादी लोगों के आदर्श के विरुद्ध आवाज़ उठानेवाले युवक कवियों में अक्कित्तम, ओलेप्पमण्णा तथा ओ० एम० अनुजन का स्थान ऊँचा है। अक्कित्तम् ने मधुविधु, वीरवादम, प्रतिकार देवता, देशसेविका, मनोरथम्, वीणा, और ओलेप्पमण्णा ने वीणा, कल्पना, अशरीरिकल्, पांचाली आदि कृतियाँ रचकर समाज में क्रान्ति लाने का प्रयत्न किया। ओ० एम० अनुजन के कवितासंग्रहों में प्रधान मुकुलम्, चिल्लुवानिल, अगाधनीलिमकल् जैसी रचनाएँ हैं। 'चिल्लुवातिल' (शीशे का द्वार) के ज़रिये कवि समझाते हैं कि नियमों की आड़ में सांकल्पिक सुख लूटनेवाले पूँजीपतियों और सतत दुःख से जीवन काटनेवालों के बीच में शीशे का दरवाजा है, जो जब जनता संगठित हो जाती है तब आपसे आप टूटकर गिर जाता है। प्रतीकात्मक काव्यों में यह कृति उत्तम समझी जाती है।

वास्तविकता तथा स्वाभाविकता से भरी कविता के रचयिताओं में इटश्शेरि गोविन्दन नायर आगे बढ़े हुए हैं। ओज भरी कविता लिखने के लिए जब प्रयत्न किया जाता है तो उनकी रचनातरणि वक्र गति की ओर बहती दिखाई पड़ती है। 'अलकावली', 'लघुगानङ्ङळ', पुत्तन कलवुं अरिवाळुं' आदि छः से अधिक कृतियाँ इस कवि ने लिखी हैं। प्रेमी जनों के हृद्गत भावों के यथातथ चित्रण में गौरीशपट्टम शंकरन नायर विशेष सफल हुए हैं।

वयलार रामवर्मा, ओ०एन० वी० कुरुप, केटामंगलम पप्पुक्कुट्टि, तिरुनल्लूर करुणाकरन, सी० जे० मण्णमूट जैसे युवक कवियों ने वर्त्तमान काल की सामाजिक भिन्नताओं और दोषों का निवारण करने एवं आम जनता के जीवन में नयी रोशनी लाने के लिए सैकड़ों कविताएँ रची हैं।

उनकी रचनाएँ सरल और हृदयान्तर्भाग में घर करके बड़े परिवर्त्तन की प्रेरणा देती हैं। देशीय वृत्त तथा आडम्बररहित शैली में लिखने के कारण जनता आसानी से उतकी कविताएँ कण्ठस्थ कर लेती है। सामाजिक उन्नति के लिए जो वस्तुएँ बाधा डालती हैं उनका नाश करने का सन्देश उपर्युक्त कवि-समाज देता है। पुरानी रूढ़ियों का खंडन करने का आह्वान इनके पहले आशान, उल्लूर और वल्लत्तोल ने किया है। किन्तु कुरुप जैसे युवक कवियों के समान समाज में एकाएक बड़े परिवर्त्तन के सन्देश उन्होंने नहीं दिये।

वयलार रामवर्मा ने 'कोतन्नु पूणुतूलुम्', 'नाटिन्टे नादम्' (देश की आवाज़), 'मेरी मृत्यु नहीं है' आदि आठ से अधिक कृतियाँ ओज-भरी तथा चलनात्मक (गतिशील) शैली में रची हैं। केटामंगलम् पप्पुक्कुट्टि ने 'कटत्तुवञ्ञि', 'मन्त्रियुटे मकल्' (मन्त्री की पुत्री), 'आमयुं पेणसिंहवुं' (कछुआ और सिंहनी) आदि विप्लवात्मक कविताओं का निर्माण किया।

तिरुनल्लूर करुणाकरन की प्रमुख रचनाएँ 'मंजु तुक्किकल्' (हिम की बूँदें), 'राणीसमागमम्' आदि हैं। उन्होंने नवमेखला, वनसंगीतम्, चैत्रोत्सवम् जैसी आठ से अधिक कृतियाँ लिखकर भाषा का वैभव बढ़ाया है। साम्यवाद के सिद्धान्त सुन्दर तथा संगीतात्मक कविताओं के द्वारा इन कवियों ने जनता को समझाने में सफलता पायी है। नये-नये आशय इनकी रचनाओं में भरे पड़े हैं।

वर्त्तमान काल में पुरानी धाराओं पर कविता रचनेवालों की संख्या भी पर्याप्त है। के० एम० पणिक्कर ने 'हैदर नायिक्कन' नामक एक चम्पू ग्रन्थ लिखा है। 'भूपसन्देश' उनकी और एक आधुनिक कृति है। कथकलि शैली पर भी ग्रन्थ लिखे गये हैं। उनमें उच्च स्थान वी० कृष्णन तम्पी के 'ताटकावधम्' और एन० वी० कृष्ण वारियर के 'बुद्धचरितम्' को देना चाहिए।

सांप्रतिक स्थिति

इन काव्य ग्रन्थों के अतिरिक्त अंग्रेजी, बँगला, हिन्दी, संस्कृत आदि भाषाओं से प्रसिद्ध पुस्तकों का रूपान्तर मलयालम में हुआ है और हो रहा है। केवल 'शाकुन्तलम्' का तरजुमा बीस से अधिक विद्वानों ने मलयालम में किया है। जापानी और चीनी भाषाओं की कुछ अमूल्य कृतियों को समझने का भी मलयालियों को सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

आधुनिक काल की विशेषताओं में अंग्रेजी शिक्षापद्धति के फलस्वरूप बाहरी संसार से संबंध स्थापित करना, छापाखानों की वृद्धि के कारण सैकड़ों प्रकार की पुस्तकों का निर्माण होना, साहित्य का विपुल प्रचार, संस्कृत ग्रन्थों के रूपांन्तर में शिथिलता आना, पाश्चात्य देशों के विभिन्न साहित्यकारों का परिचय, साहित्य की महत्ता का बोध जनता को हो जाना, भारतीय भाषाओं के बीच परस्पर संपर्क, गद्य शैली का विकास, साहित्य पर राजनीतिक सिद्धान्तों का प्रभाव, आशयों के आविष्कार में साहित्य का उन्नत तथा संपूर्ण स्थान आदि प्रमुख हैं। परन्तु दूसरी भाषाओं के मुकाबले में मलयालम का बाल-साहित्य बाल्यावस्था में ही है। यद्यपि 'बालन' प्रकाशकों ने एक सौ आठ से अधिक बालोपयोगी कृतियों का प्रकाशन किया है और चार सौ से अधिक पुस्तकें भी भिन्न-भिन्न विषयों पर लिखी गयी हैं, तो भी अंग्रेजी की अपेक्षा मलयालम साहित्य का यह अंग यथेष्ट उन्नति नहीं कर रहा है।

सन्तोष के साथ कहना पड़ता है कि मलयालम साहित्य की उच्च कृतियों का रूपान्तर दूसरी भाषाओं में करने का आयोजन भी किया गया है और वह काम जोरों पर चल रहा है। कतिपय मलयालम साहित्यकारों का कथन है कि मलयालम साहित्य की पद्यशाखा की प्रगति रुक गयी है। तरह-तरह के समाचार पत्रों, मासिक पत्रों तथा साप्ताहिकों में प्रकाशित पद्य कृतियों के अध्ययन से मालूम होता है कि कविता-कुसुमावली की कलियाँ मुरझायी नहीं, बल्कि धीरे-धीरे विकसित होकर वह अपनी सुगन्ध से चारों

दिशाओं को सुरभित कर रहा हैं। प्रति सप्ताह और प्रति मास नये-नये लेखकों तथा युवक कवियों की सुन्दर एवं महत्त्वपूर्ण रचनाएँ निकलती रहती हैं। यहाँ ऐसे अनेक कवियों और रचनाओं का उल्लेख करना छोड़ दिया गया है। प्रमुख धाराओं और शाखाओं के प्रतिनिधियों का परिचय ही दिया जा सका है।

हम देखते हैं कि भारतीय भाषाएँ राजाश्रय में आकर बहुत समृद्ध हुई हैं। केरली भी तिरुवितांकूर, कोच्चि तथा मलबार के राजाओं और सामन्त जागीरदारों का आश्रय पाकर उन्नत हुई है। अंग्रेजों के आगमन के बाद भारत विलासम्, विद्याभिवर्द्धिनी, भाषापोषिणी आदि संस्थाओं ने भाषा की श्रीवृद्धि में अच्छा प्रोत्साहन दिया। उनमें भाषापोषिणी के कार्य प्रशंसनीय हैं। जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, साहित्य परिषद् भी भाषा की उन्नति के लिए श्लाघनीय कार्य कर रही है। प्रगति शील साहित्यकारों के संघ ने अनेक स्तुत्य कार्य किये हैं। आकाशवाणी और सिनेमा के द्वारा जो सेवा हो रही है वह भी महत्त्वपूर्ण है। अभी केन्द्रीय तथा केरल साहित्य आकादमी केरली की समृद्धि के लिए तन-मन-धन से सहायता कर रही है। केरली का भविष्य उज्ज्वल है। संभावना है कि वह संसार की अन्य समृद्ध भाषाओं में उच्च स्थान निकट भविष्य में प्राप्त कर लेगी। उसकी उन्नति द्रुत गति से होती रहे, यही लेखक की कामना है।

अनुक्रमणिका

अंजलो फ्रांसीस ६९
अंबरीषचरितम् ६६
अकनानूर ४
अकबर ९६
अच्युत मेनोन ९०
अध्यात्मरामायणम् २७, ३०
अप्पु नेटुङङाटि ९१
अर्णोस ६९
अर्थनिरूपणम् १९२
अर्थशास्त्र का अनुवाद ६५
अष्टपदी ४२

आड्वार (आलवार) ४, ८
आत्माहुति ११७
आनन्दनृत्तम् ३७
आरोमल चेकवर १२
आलत्तूर मणिप्रवालम् १७
आशान, दे० 'कुमारनाशान'
आशौचाष्टकम् ८
आषवार ४, ८
आसन्न-मरण चिन्ताशतकम् १३०

इटप्पल्लि राघवन पिल्ला २२१
इन्दुलेखा ९१
इरयिम्मन तम्पी ५०, ७६
इरविक्कुट्टि पिल्ला १२

उण्णायि वारियर ४७, १९९
उण्णिच्चिरुतेविचरितम् १६
उण्णिनीलिसन्देश १२९
उण्णियच्चि-चरितम् १६, २१
उण्णियाटि चरितम् १६, २१
उण्णियार्चा मातु १२
उण्णुनीलि-सन्देश १४, १७९, २०१
उत्तरास्वयंवरम् ५०, ७६
उदय वर्मा १९
उमाकेरलम् १५२, १५३
उमातपस्या २३
उल्लूर एस० परमेश्वरैयर १५२, १६९, १८०, १८५, १९७, २१५

ऋतुविलासम् १४३

ए० आर० राजराज वर्मा ८५, १९१, १९४, २१०
एम० पी० पोल २००
एषुतच्छन २६, २७, २८, ३१, ३२, ३३, ७७
एस० के० नायर १८१
एस० के० पोट्टक्काट १०३
एस० गुप्तन नायर २०२

औसेप्पु मेन्नान ७०

कडत्तुरुत्ति १५
कण्णश १७
कण्णुनीर तुल्लि १५८
कथकलि ४०, ४३, ४४, ४६, ४७, ५०, ७६, ७७

कन्नड १
कवीरदास १५४
करुणा १३९
कल्लिचेल्लम्मा १०५
कल्लूर नंपूतिर ४७, ६३
कल्याणसौगन्धिकम् ४४, ४६
कल्याणी १०६
कानोन ६८
कामदहन चंपू २३
कारूर नीलकंठ पिल्ला १२२
कालकेयवधम् ४४
कालटी ९, १४, २२
कालनिर्णय ४
काल्डवल १७८
किर्म्मीरवधम् ४४
किलिक्कोञ्चल १४७
किलिप्पाट्टु ३१, ३६
किलिमानूर ७६
कीचकवधम् ५०, ७६
कुंचन नंप्यार ३६, ५१, ७७, १०८, १२५, १९७, २०७
कुंचन नप्यार ३६
कुंचन पिल्ला १७९
कुचेलवृत्तम् ५९
कुन्तलता ९१
कुमारनाशान १३३, १४७, १६६, २०१
कुरवप्पाट्टु ११
कुरुप्प जी० शंकर २१८-२०
कुलशेखर आलवार ४
कुलशेखर वर्मा ११
कूट्टियाट्टम् ७, ४१, ४२
कूटल माणिक्यम् ४८
कूत्त ४१, ४२
कृष्णगाथा १८, १९, २६
कृष्णन कुट्टिमारार २०१
कृष्णपिल्ला २२१, २२३
कृष्ण ई० वी० २१४
कृष्णनाट्टम् ४२, ४३
कृष्णलीला ३८
के० एम० पणिक्कर १६१, २१५
के० टी० मुहम्मद ११२, ११५
केरल १, ४, ५, ११, ३८
केरल पलमा ७१
केरलसिंह ९८
केरलपुत्रन ९७
केरल-भापाविज्ञानीय १७८
केरली ९, १४, २२
के० रामकृष्ण पिल्ला ८९, १९७
केशवदेव ११९
केशवीय महाकाव्य १२८
के० सरस्वती अम्मा १२१
के० सुकुमारन् २०४
कोइत्तंपुरान ५०
कोकसन्देश १५
कोच्चि ९७, १३०
कोटिविरहम् २३
कोट्टयत्तु नंपुरान ४४
कोट्टयम ४४, ४५
कोट्टारक्करा ४५
कोट्टारक्करा नंपुरान ४४
कोयितम्पुरान ५०, ७५, ७६, ८१
कोलटि ११
कोलटि कलि ११
कोलटि प्पाटु ११
कोलत्तु नाटु ५१
कौटिल्य ६५
क्लमन्ट पादरी ०७

गिरिजाकल्याण ४८, ६१
गीतगोविन्द ४२
गुरुवायूर ३३
गोकर्ण ५६
गोवा ६८
गोविन्द पिल्ला ८४
ग्रन्थवरि ६४

घनसंघ स्तोत्रम् ३५, ३७

चंपूग्रन्थ १४, २१
चङ्ङम्पुषा कृष्णपिल्ला २२१
चण्डालभिक्षुकी १३७
चन्तु १२
चन्तु मेनोन ९१
चंद्रिकावीथि नाटक ५२
चन्द्रोत्सवम् २४
चाक्यार ७, ४१, ४२, ५५, ६६
चाक्यार कूत्त ५५
चावक्को १९३
चित्रयोग १४३
चिन्तारत्नम् ३१
चीन १
चिन्तासन्तानम् २०४
चिलप्पतिकारम् ४
चेट्टिलप्पलि २५
चेन्तमिष साहित्य ४, ५
चेम्मीन १०१
'चेर' वंशीय ४
चेरुकाट ११३
चेरुश्शेरी १९७
चेलप्परंपु नंपूतिरि ६१

जन-साहित्य १७७
जयदेव ४२
जार्ज मात्तन ८१
जी० शंकरक्कुरुप्प २००
जोसेफ पीट ७५
ज्ञानप्पाना ३६, ३७
टीक्क १

टी० एन० गोपीनाथन नायर ११३
टीपू सुलतान ७३, ९६

डा० गुण्डर्ट ८०, १८२

तंपी, इरयिम्पन ५०, ७६
तकषी १०१
तच्चोलि अतेनन १२
तमिल १, २, ६४
तमिष (तमिल) ५
तिरूवनन्त पुरम् १५, १०८
तिरुवितांकूर १७, ४५, ६७, १३० १६८
तुलसीदास २९, ३३
तुल्लल शैली ३६, ५५, ५७, ७७
तेलुगु १
तैंकलनाथोदयम् ३३
तोम्मा कत्तनार ७१
तोलन ९
त्रिशिव पेरूर २४
त्रेसियाचरितम् ७०

दंडकारण्य काव्य १४३
दक्षयागम् ५०, ७६
दात्यूहसंदेश १२९
दामोदर चाक्यार १६
दामोदरन पिल्ला २०५

दारुकवधम् ४१, ४२
दीपिका ८८
दूतवाक्यम् ६५
देवषड्गुणम् ७०
द्रविड़कुल १
द्रविड़ भाषा ३
द्वितीयाक्षर प्रास १२८

धर्मराजा ४६—उपन्यास ९६

नंपूतिरि ६, ७, ११, २०, २१, २३, ३३
नंप्यार की तमिल ६६
नलचरितम् ४८
नागिला १४९
नाटक ४४
नारायणम् २३
नारायण पिल्लै ६३
नालप्पाट्ट नारायण मेनोन १५८
नारायणी अम्मा २२९
निरणम कवि १७, १८, ६६
नैषधम् २३
नैषधीयचरितम् ४९

पंकीपरिणयम् १६२
पणिक्कर, के० एम० १६१, १८५, २१५, २२६, २३२
पणिक्कर, आर० नारायण १८०
पणिक्कर, के० एम० लक्ष्मण १९३
पणिक्कर, एस० गोपाल २०४
पतट्टि पत्तु ४
पत्तुपाट्ट ४
परमेशरन नंपूतिरि ५८
पल्लत्तुरामन १६३
पापुयकक्काट ११
पाच्चुमूत्तम् ८४
पाटट्ट १०
पाणरप्पाट्टु १०
'पाना' पद्धति ५८
पापुयेके क्काट ११
पारिजातहरणम् २३
पार्थसारथिस्तवम् ३५
पालोट्टुकोमन १२
पुतुमयुटे लोकम् १८८
पुनम २२, २३
पुरनानूर ४
पुलटैम कामुकन १०४
पूंतानम् ३३, ३७
पूरक्कलिप्पाट्टु १०
पोल, एम० पी० २००
पोलीस रामायणम् २०७
पौलिनोस ७०
प्राणिवंशचरितम् १९२
प्राणिलोकम् १९२
प्रेमामृतम् ९६, ९८

बंचमिन बोयिली ७५
बकवधम् ४४
बधिरविलाप १४४
बाबिलोन १
बालकृष्ण पिल्ला १७३, १७५, १९९
बालाभ्यसनम् ८२
बिहारी ४८
ब्रह्मविद्या ९
ब्रह्मानन्द योगी १८९
ब्रह्माण्डपुराणम् ६६

भट्टतिरि ५३

भद्रकालिप्पाट्टु १०
भक्तिसायुज्यम् १९१
भगवद्दूत ५७
भागवतम् ६६
भागवतसंग्रहम् ६६
भारतगाथा २०
भारतम् २९
भारतमाला १८
भास्करन नायर १८३, १८४
भूतराय ९७

मंगलमाला २०४
मंगलमंजरी १५३
मकन नंपूतिरि १२५
मणिप्रवाल शैली ७, ८, १४, १७, २१, ४३, ९६, १२८
मणिमेखला ४
मण्णान ११
मण्णारप्पाट्टु ११
मण्णार शाला ११
मतिचूतपंचकम् १७
मयूरसंदेश १२९
मलयालम १, २, ५, ९, १८
मलबार २७, ३३, ६१, ६२
मलयालम कोश ८०
मषमंगलम् २३
माधव पणिक्कर १७, १८
माप्पिला १२
माप्पिलप्पाट्टु १२
मार्गम कलिपाट्टु ३८
मार्तण्ड वर्मा ४५, ४६, ५९, -उपन्यास ९६
मिस्र १
मुकुंदमाला व्याख्यानम् ६६
मुण्डश्शेरी १९८
मुहम्मद बशीर १०२, ११२
मूसत, पी० एन० १९३
मेदिनीचन्द्रिका २५
मेनोन, अच्युत १९२, २०४
मेनोन, अलनाय १८५
मेनोन, शंकुण्णि १८५
मेनोन, श्रीधर २२७, २२८
मेरी कारेली ९६
मेल्पत्तूर नारायण भट्टतिरि ३४
मेषत्तोल अग्निहोत्री ८
मैथिलीशरण गुप्त १४५
मोक्षप्रदीप १८९

रंपान पाट्टु ३९
रमणन २२२
राघव प्पिषारटी ४७
राघवन पिल्ला २२१
राजरत्नावलीयम् ७३
राजराज वर्मा, ए० आर० ८५, १८०, १८२, १८४, १९१, १९४, २१०
राजराज वर्मा, पी० के० २०८
रामचन्द्रविलासम् १२९
रामचरित १३, १०९
रामनाट्टम् ४२, ४३
रामपञ्चशती ४८
राम पणिक्कर १७, १८
रामवर्मा ४२, ७३
रामवर्मा, नरेश ७३
रामायण १८, २१
रामायणचंपू २२
रावणविजयम् ५०, ७३, ७६, ७७
रावणविजयम् चंपू २२

रूपभद्रतावाद १७६
लक्ष्मीदास ९
लीलातिलक १४

वररुचि ८
वर्त्तमान पुस्पकम् ७१
वल्लत्तोल नारायण मेनोन १४२
२०१, २१६
वानरीड ६९
वारियर ५८, ६१
वासुदेव भट्टतिरि ९
विचारधारा १५५
विज्ञाननिक्षेप (पहला अखबार)
७५, ८६
विदूषक ७
विषकन्या १०३
विष्णुविलास ५२
वी० उण्णिकृष्णन नायर २१७
वीणापूव १३४
वी० सी० बालकृष्ण पणिक्कर १३१
वेण्मनि अच्छन १२५
वेदतर्क्कम् ७०
वेलरप्पाट्टु ११
वेलुत्तंपी ६२, ७१
वेलुत्तंपी की घोषणा ७१
व्यञ्जन वर्ण ३
शंकरप्पणिक्कर १७
शंकरसिद्धान्त ९
शंकुण्णि कैयम्मल ६३
शक्तिभद्रन ९
शास्ता १०
शास्ताम् पाट्टु १०
शिवकर्णामृतम् ६३
श्रीशंकर ८
श्रीकृष्णकर्णामृतम् ३३, ३५, ३६
श्रीकृष्णचरितम् मणिप्रवालम्
५४, ५७
श्रीकृष्णस्तव १७
श्री वीरराम वर्मा १३

संक्षेप वेदार्थ ७०
संघक्कलि ११
संजय २०८
संतानगोपालम् पाना ३५, ७७
संदेशकाव्य १२९
सन्मार्गपोषिणी सभा १६८
सरदार के० एस० पणिक्कर १८५
साहित्यप्रवेशिका १९६
साहित्यमंजरी १४५
साहित्यमंजूषा १८४
सीताराम २०८
सी० सी० रामन पिल्ला ९४, १०७
सुकुमार ९
सुन्दरीस्वयंवरम् ६३
सूरदास २९
स्वरवर्ण २
स्वाति-नक्षत्रज, नरेश ५०, ७५,
७७

हरिनाम कीर्त्तनम् ३१
हैदर नाटक १६२

(कुछ काव्य ग्रन्थों या अन्य रचनाओं के लिए उनके लेखकों के पृष्ठ देखिए)

दिनांक Date	उधारकर्ता की संख्या Borrower's No.	दिनांक Date	उधारकर्ता की संख्या Borrower's No.